कला-विद् चित्रकार डा० एस० बी० लाल सक्सेना का कला शिक्षण में योगदान

शोध-प्रबन्ध-2008

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी की पी-एच० डी० (चित्रकला)

उपाधि हेतु प्रस्तुत

निर्देशिका

डॉ0 श्रीमती सुनीता

विभागाध्यक्ष

ललित कला संकाय, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी

शोधार्थी

अमित दुबे

डॉ० श्रीमती सुनीता
विभागाध्यक्ष, ललित कला संकाय
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी

सी0एम0 1–8, मेडिकल कॉलेज,
गेट नं0–2 से पहले
वीरांगना नगर, झाँसी
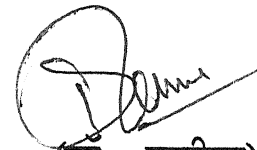
पत्रांक ....

दिनांक 07/3/08

प्रमाण–पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि **श्री अमित दुबे ने बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी** से मेरे निर्देशन में पी–एच०डी० उपाधि हेतु अपना शोध कार्य पूर्ण किया है। इनके शोध–प्रबन्ध का शीर्षक **''कलाविद् चित्रकार डॉ० एस०बी० लाल सक्सेना का कला शिक्षण में योगदान''** यह शोध कार्य बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झाँसी के नियमानुसार व्यक्तिगत सम्पर्क व सर्वेक्षण की प्रक्रिया से पूर्ण किया गया है। प्रस्तुत शोध ग्रन्थ पूर्णत: मौलिक एवं शोधार्थी के अथक परिश्रम का परिचायक है।

मैं इनके उज्ज्वल भविष्य की कामना करती हूँ।

(डॉ० सुनीता)
शोध निर्देशिका

Head
Institute of Music & Fine Arts
Bundelkhand University JHANSI

विषय—सूची

चित्र—सूची

आभार

यूँ तो कला का भण्डार अनन्त सागर के समान विशाल है और मेरा यह शोध प्रबन्ध **"कलाविद् चित्रकार डॉ0 एस0 बी0 लाल सक्सेना का कला शिक्षण में योगदान"** जिसे मेरी शोध निर्देशिका डॉ0 श्रीमती सुनीता (विभागाध्यक्ष,ललित कला संकाय,बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी) ने अपना अमूल्य समय देकर इस शोध प्रबन्ध को पूर्ण किया है। जिनका मैं चिर ऋणी रहूँगा। सर्वप्रथम मैं अपनी ममतामयी माँ श्रीमती मधुबाला भार्गव एवं पिता श्री मोहन लाल दुबे जी का आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने मुझे कुण्ठा के समय में भी इस शोध कार्य करने का साहस और आर्शीवचन प्रदान किया।

मैं आभार व्यक्त करता हूँ कलाविद् चित्रकार डॉ0 सक्सेना जी का जिन्होंने शोध सम्बन्धी कार्यों का विवरण समय–समय पर उपलब्ध कराया और यह शोध प्रबन्ध पूर्ण करने में मुझे पूर्ण रूप से सहयोग प्रदान किया। मेरे चाचा जी श्री बृजकिशोर दुबे जी तथा मौसी जी श्रीमती अनीता भार्गव जो कि मेरी चाची जी भी है, जिन्होंने हमेशा पुत्र–वत स्नेह एवं पूर्ण सहोग प्रदान किया है। जिनका मैं ऋणी रहूगा। मेरे बड़े भाई श्री दीपक कुमार दुबे एवं भाभीजी श्रीमती प्रज्ञा दुबे जिनके आशीर्वाद एवं सहयोग के द्वारा मैं यह शोध कार्य पूर्ण कर सका, मैं इनका सहृदय आभारी हूँ। मेरे अनुज पवन, अभय, ध्रुव एवं लक्ष्मण का आभार व्यक्त करता हूँ जिनका प्यार एवं सहयोग प्राप्त हुआ। मेरे मित्र श्री हेमन्त कुमार, भूपेन्द्र सिंह एवं सुरेन्द्र सिंह जी का मैं आभारी रहूँगा जिन्होंने हमेशा मेरा उत्साहवर्धन किया। मैं हमेशा आभारी रहूँगा मेरे ताऊ जी के पुत्र एवं मेरे बड़े भाई श्री राजू दुबे तथा वाराणसी निवासी हमारे मित्र श्री वीरेन्द्र जी का तथा श्री राजेश जी का जिन्होंने शोध कार्य सम्बन्धी कार्यो में सहयोग प्रदान किया।

मैं अपने शोध सम्बन्धी कार्य में टंकण कार्य करने वाले शैलेष जैन जी का तथा छाया चित्रों में सहयोग करने वाले संजीव पाँन्चाल जी का मैं आभारी रहूँगा जिन्होंने बार–बार शोध सम्बन्धी त्रुटियों को दूर करने में मेरा सुझाव सहर्ष स्वीकार किया।

अन्त में, मेरी नानी जी स्व0 शान्ति देवी भार्गव एवं दादी जी श्रीमती मिथला दुबे का सहृदय से आभार व्यक्त करता हूँ जिनके आशीर्वाद से यह क्लिष्ट कार्य इतना सरल सा हो गया।

अमित दुबे

शोधार्थी

अमित दुबे

भूमिका

कला का कोई क्रमबद्ध इतिहास बनाना कठिन है लेकिन गुफाओं और शिलाओं से पाये जाने वाले चित्रों से ये माना जा सकता है कि चित्र कला का आरम्भ 10,000 ई0 पू के मध्य हुआ। उस समय मानव जंगलों में रहकर अपना भरण–पोषण करता था। उसको अपनी भावनाओं को व्यक्त करने की आवश्यकता महसूस हुई तभी उसने रेखाओं के द्वारा चित्र अंकित करना आरम्भ कर दिया। जो चारो ओर के वातावरण से सीधे सम्बन्धित थे।

कला सदैव मानवीय संवेदनाओं की संगिनी रही है, संवेदना और कला दोनों एक सिक्के के दो पहलू हैं। जहॉ–जहॉ मनुष्य रहा वहॉ–2 कला का स्वतः विस्तार हुआ। हजारों वर्ष पूर्व जब मानव गुफाओं एवं कन्दराओं में रहता था तभी से कला का जन्म माना जाता है। आदिमानव ने अपने जीवन काल में जो भी सोचा उसके अन्तर्गत जिन भावनाओं ने जन्म लिया उसे किसी न किसी रूप में व्यक्त किया चित्र के माध्यम से, भाषा के माध्यम से (प्राकृतिकभाषा) भावनाओं को रूप रेखा प्रदान की। आदिमानव को गुफाओं और कन्दराओं से जो कुछ मिला उसे ही सृजन का माध्यम बना लिया। आदिमानव की चित्रकारी का नमूना हमें दक्षिण के रायपुर और रवि मूलक की गुफाओं में प्राप्त होता है। यही नहीं अपितु उसके औजारों हथियारों एवं बर्तनों तक में भी कलात्मक सौन्दर्य दिखाई देता है। आदिमानव कालीन चित्रों का विषय आखेट था। मिर्जापुर, पंचमढी, सिंहनपुर सिंधुघाटी आदि स्थानों पर इस विषय से सम्बन्धित चित्र बने हैं। जिनमें सरलीकृत रेखीय

शैली में पशुओं, मानव आकृतियों को विभिन्न स्थितियों में बनाया गया है। भोपाल के एक आखेट दृश्य चित्र में आखेट को मुखौटा पहने चित्रत किया है।

कई लोग कला को केवल मनोरंजन का विषय मानते है। एक ऐसी वस्तु, जो जीवन से अलग हो। वास्तव में वे नहीं जानते कि कला सीधे जीवन के तले में घुसकर देखती है और उसकी परतें उखाड़ फेकती है। कला के अतिरिक्त कोई ऐसा माध्यम नहीं है जो जीवन को भेदकर उसके मूल को प्रस्तुत कर सके। भारतीय कला का भी यही आदर्श रहा है। ऐसे ही आदर्शों को स्थापित करने वाले कला गुरू डा0 एस0 बी0 एल0 सक्सेना का कला जगत में काफी योगदान रहा है। इनकी कृतियां बहुत ही सराहनीय रहीं है। इनकी चित्र विधायें भी समय–समय पर भारतीय चित्रकला के आदर्शों को स्थापित करने में सहायक रही है। आपकी चित्र शैली पाश्चात्य होने के बावजूद भी भारतीय चित्र शैली के आदर्शों को प्रस्तुत करने में सक्षम रही है। इनके चित्रों में एक अलग मौज की तरंग है। आपकी प्रत्यक्ष सुरक्षित कलाकृतियां कला विशेष की कला के विषय में सुनिश्चित एवं प्रमाणित ज्ञान प्रदान करने में सबसे अधिक सहायक सिद्ध होती है।

प्रो0 सक्सेना एक अच्छे कला शिक्षक, उच्चकोटि के शोध निर्देशक होने के साथ–साथ चित्र सृजना में भी लगातार जुड़े रहे।

अध्याय प्रथम

डॉ० एस० बी० एल० सक्सेना
का
जीवन परिचय

डॉ० एस० बी० एल० सक्सेना का जीवन परिचय

प्रोफेसर सरन बिहारी लाल सक्सेना के वर्तमान की यह चर्चा प्रारम्भ से प्रस्तुत की जा रही है, डा0 सक्सेना का यह वर्तमान, उनके भूतकाल को स्पष्ट करने में सक्षम है । आज मेरा यह सौभाग्य है कि मैं कला विद् चित्रकार डा0 एस0 बी0 एल0 सक्सेना के समक्ष बैठकर उनके व्यक्तित्व पर एक शोध–ग्रन्थ की रचना प्रारम्भ करने जा रहा हूँ। मैं अपने को धन्य मान रहा हूँ कि चित्रकला शिक्षण के क्षेत्र में स्थापित विद्वान के सम्पूर्ण जीवन क्रम और कार्य कलापों को, उनके ही द्वारा बताने पर मैं सत्य को लेखन में प्रस्तुत कर रहा हूँ।

यह सम्पन्न और उच्च–शिक्षा से अलंकृत वो परिवार था कि जिसमें जमींदारों के अलावा अंग्रेजी शासन में सरकारी पदों पर उच्च स्तरीय प्रशासक हुये थे। स्व0 बाबू शिव गुलाम सक्सेना अपने समय के एम0 ए0, एल0 एल0 बी0 थे। उन्होंने बड़े जमींदार होने के कारण वकालत का पेशा न के बराबर किया और जमींदारी की व्यवस्था में ही एक ऊँचे जीवन स्तर को अपनाने में व्यस्त रहे। उनके दो विवाह हुये पहला विवाह बिसौली के बहुत बड़े जमींदार खानदान में हुआ। उस समय परिवार में हाथी पाला जाता था और ये लोग हाथी वाले जमींदार के नाम से जाने जाते थे। इनके ससुर अग्रेजी शासन मे स्वास्थ्य विभाग में सिविल सर्जन थे।

इन्होंने चिकित्सा की उपाधि इंग्लैण्ड से प्राप्त की थी। आपकी बड़ी लड़की से बाबू शिव गुलाम सक्सेना का विवाह हुआ था ये बात यह प्रमाणित करती है कि बाबू शिव–गुलाम सक्सेना की आर्थिक और सामाजिक पहुँच कितनी ऊपर रही होगी? बाबू शिव गुलाम की पत्नी से एक पुत्र ने जन्म लिया जिसका नाम श्री बृजबिहारी लाल रखा दुर्भाग्यवश इनकी पत्नी का स्वर्गवास तीन वर्ष बाद हो गया। इसके पश्चात् इनका दूसरा विवाह हुआ। जिससे तीन पुत्र तथा एक पुत्री का जन्म हुआ।

स्वर्गीय श्री बृजबिहारी की माँ का इन्तकाल अल्पायु में हो गया। लेकिन इनकी दूसरी माता बहुत अच्छे परिवार से आयीं थी और उन्होंने अपने इस पुत्र को भी बहुत लाड़–प्यार से पाला। स्व0 श्री बृजबिहारी सक्सेना ने कलकत्ता विश्वविद्यालय से स्नातक की उपाधि ग्रहण की। बताया जाता है कि अंग्रेजी शासन में जमींदार लोगों के पढ़े लिखे पुत्रों को उच्च सरकारी नौकरी देने की प्रथा थी। इस प्रकार स्वर्गीय श्री बृजबिहारी सक्सेना को वन विभाग में अधिकारी के पद पर नियुक्त कर दिया गया। उन्होंने गढ़वाल संभाग में अपना कार्यभार शुरू किया।

स्वर्गीय बृजबिहारी लाल सक्सेना का विवाह रामपुर रियासत के एक जमींदार के घर हुआ था। उनकी पत्नी अपने परिवार में एक मात्र संतान थी।

स्वर्गीय बृजबिहारी सक्सेना के आठ पुत्र और दो पुत्रियां जन्मीं थीं। जिनमें पुत्रियां बड़ी थीं और पुत्रों में सबसे छोटे श्री सरन बिहारी लाल सक्सेना थे। इनसे बड़े उनके सात पुत्र अल्पायु हुये। श्री सरन बिहारी लाल सक्सेना का जन्म 4 मार्च 1937 को हुआ था। इसके बाद जब सरन दो वर्ष के भी नहीं हो सके, उनके पिता का स्वर्गवास कार दुर्घटना में हो गया।

इनके पिता का स्वर्गवास 47 वर्ष की आयु में हो गया था। और अब इनके लालन पालन का भार माँ पर आ गया। यद्यपि इनके परिवार में और भी सदस्य थे। लेकिन सरकारी नौकरियों के कारण अलग–अलग स्थानों पर रह रहे थे। इस प्रकार कहीं से सहारा मिलता नहीं दिखलाई दिया।

अब एक नई कहानी की शुरूआत होती है। बालक सरन की माँ की परवरिश एक जमींदार परिवार में हुई थी। उनका विवाह एक उच्च प्रशासनिक अधिकारी से हुआ था। वे समझदार, चतुर और परिस्थितियों से निपटना जानती थीं। उनके बड़े दामाद उत्तर प्रदेश के एटा जिले में कासगंज में कोतवाल थे। इसलिये उन्होंने उनके पास रहने का निश्चय कर लिया। वे अपनी लड़की के पास रहने लगी। यहाँ पर जीवन सामान्य गति से आगे बढ़ने लगा। कासगंज में उन्होंनें अपना एक थियेटर खुलवाया और उसका नाम 'अपना टाकीज' रखा तथा उसी के साथ एक बस खरीदी जिसे एटा–कासगंज रोड पर चलवाया। सरन के पिता की मृत्यु के समय उनके पिता बहुत जेवरात व नगद राशि भी छोड़ गये थे। जो इनकी माँ ने अपनी बड़ी लड़की व दामाद के पास रख दिया था। ग्रहों का कुछ ऐसा प्रभाव होता है कि जब समय अच्छा नहीं होता, एक के बाद एक कष्ट अनायास ही उत्पन्न हो जाते हैं। या यू कहें कि अनहोनी पीछा नहीं छोड़ती।

दुर्भाग्य से वो दिन भी आ गया। जब सरन की बड़ी बहिन का हृदयाघात के कारण असमय स्वर्गवास हो गया। किस्मत कोई नहीं बदल सकता। अब फिर चारों ओर अन्धकार फैल गया। दो चार महीने दुःख बिताने में ही निकल गये इसके बाद सरन की माँ ने दामाद से जेवर और राशि का हिसाब मांगा, कुछ दिनों तक तो वह टालते रहे। लेकिन जब उनके विभाग के अधिकरियों ने उन पर दबाब डाला तो उन्होंने स्पष्ट शब्दों

में कह दिया। कि जेवर व धन राशि इन्होंने अपनी लड़की को दी थी। उन्होंने कहाँ रखी उनको नहीं पता। इस प्रकार वह मुकर गये साथ–साथ यह पता चला कि थियेटर व बसें उनकी लड़की के नाम थीं। जिसकी मृत्यु के बाद मालिकाना हक इनके दामाद का था। सब कुछ होते हुये भी कुछ न रहा। कल तक जो राजा था आज रंक हो गया। यह किस्मत की विडम्बना ही कहलाती है कि कब क्या हो जाये? इससे बड़ा और क्या उदाहरण हो सकता है कि पति की मृत्यु हो चुकी हो, बच्चों की परवरिश करनी हो जेवर व धन राशि सब कुछ हाथ से जा चुके हैं। इस परिस्थिति का मूल्याँकन करने से भी डर लगता है। समस्या यह थी कि अब क्या परिवार वाले सहयोग देंगे? देना भी नहीं चाहिये था। क्योंकि उनका अविश्वास करके अपनी लड़की व दामाद पर विश्वास करना एक घातक निर्णय सिद्ध हुआ।

इतनी विषम परिस्थिति में रहते हुये सरन की माँ के मस्तिष्क में एक विचार आया कि दामाद पर मुकदमा चलाया जाये। अपना धन व जायदाद को वापस लिया जाये। सरन के पिता बाबू बृज बिहारी जी के सगे मौसाजी रायसाहब राय बहादुर, एक बड़े जमींदार थे। वे एटा में सरकारी वकील थे। वह आगरा रोड पर बहुत बड़ी कोठी बनवाकर रह रहे थे। इसलिये सरन की माँ ने उनसे कानूनी सहायता लेने का मन बनाया। और वह उनके पास गयी। और अपनी सारी दास्तान उन्हें सुनायी। वकील साहब की पत्नी जो सरन के पिता की मौसी थी वह उस समय की बी0ए0 पास थी। सरकारी मजिस्ट्रेट थी। इन दोनों लोगों ने उन्हें समझाया कि मुकदमें में जीत नहीं हो सकती है क्योंकि आपके पास कोई सबूत नहीं है। अतः मुकद्मा नहीं लड़ना चाहिये। इस बात पर जोर दिया कि उनके पास रहकर बालक सरन के

पालन पोषण तथा शिक्षा की व्यवस्था करनी चाहिये। इस बात को मान लिया गया। अतः वह वहाँ पर रहने लगीं।

यह बात वर्ष 1942 की है, तब से सरन की माँ सरन को लेकर यहाँ रहने लगी थी। यहाँ का वातावरण जमींदारी के साथ बहुत ऊँचा था। कोठी के साथ–साथ दो घोड़ों की बग्घी, कार व नौकरों की लम्बी लाइन इस परिवार की शान थी। यहाँ पर किसी प्रकार का कोई अभाव नहीं था। सुख ही सुख था व सुखी माहौल था। धीरे–धीरे समय का पहिया आगे घूमने लगा अब बालक सरन पाँच के हो चुके थे। आपकी शिक्षा–दीक्षा घर पर ही होती थी। कुछ ही दिनों बाद इनका दाखिला जार्ज लिली स्कूल, एटा में कराया गया। यह स्कूल प्राइमरी से दसवीं कक्षा तक था। इस समय एटा में एक मात्र यही एक अंग्रेजी माध्यम का स्कूल था। इस स्कूल से उन्होंने पांचवी तक की शिक्षा प्राप्त की। सरन को बग्घी से स्कूल भेजा जाता था और बग्घी से ही वापिस लाया जाता था।[1]

पीछे क्या–क्या हुआ कब अंधेरा आया और कब सब कुछ खो गया? यह उस समय की बात है। जब सरन बहुत छोटे रहे होगें। लेकिन 4–5 वर्ष की आयु तक आते–आते वो अपने भाग्य अंश का लाभ लेते हुये सम्पूर्ण सुख सुविधा के भोग के साथ अपने जीवन के पहले अंक में पदार्पण किया, अर्थात् वैभव, ऐश्वर्य, सम्पन्नता के बीच ही अपने होश को संभाला। यही कारण है कि आज तक वे निराशा, कुण्ठा से ग्रस्त नहीं हुए हैं। इस परिवार का समाज में बहुत सम्मान था। डी0एम0, एस0एस0पी0 तथा समाज के और भी प्रतिष्ठित वर्ग अक्सर यहाँ पर आया–जाया करते थे। वर्ष में 5–7 दावत देना मामूली सी बात होती थी।

---

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया

इस प्रकार के माहौल के बीच सरन ने अपने विकास को शुरू किया, जिसकी साधारणतः कोई कल्पना भी नहीं कर सकता था। इसको ही व्यक्ति का भाग्य कहते हैं, पूर्णरूप से रिक्तता की स्थिति में आ जाने के बाद भी उसका एहसास तक नहीं हुआ और ऐसा लगा जैसे सब प्रकार की सम्पन्नता उनके हाथों में है। यह भी एक सुन्दर स्मरणीय कहानी बन गयी। जिसे प्रो0 सक्सेना बहुत ही खुशहाल स्थिति में मुझे सुना रहे हैं। उनका कहना है कि "व्यक्ति का भाग्य अगर उसके साथ है तो वह विषम परिस्थितियों को भी नकार सकता है।"[1]

समय की गति निरंतर चलायमान रहती है, दिन के बाद रात एवं रात के बाद दिन होता है। केवल ब्रह्मा को छोड़कर और किसी को समान स्थिति का अधिकार प्राप्त नहीं है। दुख के बाद सुख और सुख के बाद दुख यही जीवन का चक्र है। डॉ. सरन की माता अब इनका लालन–पालन बड़ी खुशी से कर रही थीं। अचानक घटित घटना ने सब कुछ बदल कर रख दिया। सरन के पिताजी के मौसाजी के बड़े लड़के जो पी0डब्ल्यू0डी0 विभाग, इलाहाबाद में इंजीनियर थे उनका आकस्मिक निधन हो गया। उनकी पत्नी अपनी बेटी को लेकर एटा चली आयी। वे बहुत अधिक पढ़ी लिखी एंव संवेदनशील थीं। उन्होंने सरन की माँ को यह बात समझायी कि वे स्वावलम्बी बने। क्योंकि बुजुर्ग लोगों के मरने के बाद उनकी सहायता कौन करेगा? इनकी यह बात बहुत समझदारी की थी, जिसका गहरा प्रभाव सरन की माँ पर पड़ा।[1]

कुछ समय बाद वे एटा से इलाहाबाद चली गयीं और वहाँ पर एक इंटर कॉलेज में प्रवक्ता के पद पर कार्य करने लगीं। इसके बाद जब वे

---

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया

[2] वही

आयीं तो अपना उदाहरण देकर यही समझाया कि व्यक्ति को बुरे वक्त में दूसरों का सहयोग न लेकर खुद संघर्ष करना चाहिये। क्योंकि इससे स्वाभिमान जीवित रहता है। इन सब बातों का सरन की माँ पर इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि वह कोठी को त्यागकर शहर में किराये पर मकान लेकर रहने लगीं। क्योंकि अधिक पढ़ी लिखीं न होने के कारण उन्हें कहीं पर नौकरी मिलना कठिन था। इसलिये वे शुरू में कपड़ों के खिलौने बनाकर, पुराने कपड़ों की गुड़िया बनाकर और धागे के बटन बनाकर बाजार में दुकानदारों को देने लगी। इन दिनों बहुत अधिक मंहगाई नही थी। छोटे से काम में भी उनको छः–सात रूपये महीने की आमदनी हो जाती थी। जिसमें माँ एवं बेटे को आराम से रोटी मिल जाती थी। अब सरन का दाखिला भी अविनाशी सहाय आर्य इंटर कॉलेज, एटा में करा दिया गया। क्योंकि सरन 5वीं तक एक अच्छे स्कूल में पढ़े थे। उनकी पढ़ने लिखने में बहुत रूचि थी कक्षा छटवीं की वार्षिक परीक्षा में वे अस्सी प्रतिशत अंकों से उर्तीण हुये। जिसके फलस्वरूप आगे की कक्षाओं में इनकी पूरी फीस माफ कर दी गयी।[1]

यह कठिनाई का वह वक्त था, जब दो वक्त की रोटी का इन्तजाम होना भी कठिन था। लेकिन सरन की माँ ने साहस एवं ईमानदारी से अपना जीवन आगे बढ़ाया। समय दौड़ता हुआ आगे निकलने लगा और परिस्थितियों ने संघर्ष के लिए इतना बाध्य कर दिया, कि सरन की मां ने किसी भी रिश्तेदार से मदद लेने की बात को अस्वीकार कर दिया और निश्चय किया कि सरन का पालन पोषण व शिक्षा को परिश्रम करके ही पूरा करेंगी और उन्होंने ऐसा करके भी दिखाया। अच्छे व्यक्ति का साथ ईश्वर

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया

स्वयं देता है और एक दिन किसी मिलने वाले ने उन्हें राजकीय विद्यालय एटा की प्राचार्य मिसी एस पोल से मिलवाया। जिनकी आयु 40 वर्ष से अधिक न थी। उन्होंने सरन की माँ से प्रभावित होकर कहा कि आज से वह उनको माँ मानती हैं। क्योंकि उनकी माँ मर चुकी थी। शासन स्तर पर बहुत कोशिश करके उन्होंने सरन की माँ को विद्यालय में आया (सेविका) के पद पर नियुक्त करा दिया।

पूरे विद्यालय में यह बता दिया कि वह प्राचार्य की माँ हैं। अतः उन्हें सेविका के रूप में न मानें। अब सरन की माँ स्कूल में सेवारत हो गयीं, जहाँ पर उन्हें सुबह 10 बजे से शाम तक प्राचार्य के कक्ष के बाहर स्टूल पर बैठना एवं प्राचार्य से मिलने वालों को उनसे मिलवाना ही सेवा कार्य था। यहाँ से बढ़ती हुई जिन्दगी को एक स्पष्ट रास्ता मिल गया। क्योंकि उनको हर महीने अट्ठाइस रुपये वेतन के रूप में मिलने लगे जो माँ-बेटे की सुविधा के लिये पर्याप्त से कहीं अधिक थे।[1]

सरन हर वर्ष कक्षाओं को उत्तीर्ण कर उच्च कक्षाओं में पहुँच रहे थे। उनकी पढ़ाई लिखाई एवं परिश्रम की छाप प्रत्येक शिक्षक पर लग चुकी थी। उस समय प्रधानाचार्य श्री मलखान सिंह सिसौदिया थे और जब उन्हें पता चला कि विद्यालय में एक ऐसा छात्र है जो निर्धन होते हुये भी परीक्षा में हमेशा प्रथम आता है। उन्होंने इस बात पर इतना महत्व दिया कि पारितोश के रूप में सरन को पुस्तकों एवं कपड़ों के लिए कई बार सहयोग दिया। कक्षा आठवीं उत्तीर्ण करने के बाद कक्षा नौंवी में विज्ञान वर्ग में प्रवेश लिया और वार्षिक परीक्षा में सभी विषयों में अस्सी प्रतिशत से अधिक अंकों से उत्तीर्ण हुये। इसी समय यह बात सामने आयी कि एटा के किसी भी

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया

विद्यालय में उच्च कक्षाओं की शिक्षा नहीं दी जाती है। इसलिये उन्हें इसकी पढ़ाई बाहर जाकर करनी होगी। जो सरन के लिए संभव नहीं थी।

उन्होंने अब विज्ञान वर्ग को छोड़कर कला वर्ग लेने की बात प्राचार्य से कही जो सहमत हो गये। उन्होंनें कला, इतिहास और नागरिक शास्त्र विषय आवंटित कर दिये एवं हाईस्कूल का फार्म कला वर्ग से भर दिया। सरन ने पढ़ाई शुरू की उन्हें ध्यान है, कि यह माह अगस्त का था, एकदम सभी विषय नये और आठ माह बाद परीक्षा का होना, अपने आप में डर पैदा करता था। लेकिन सरन ने बहुत मेहनत से पढ़ाई की, परिणाम आश्चर्यजनक आया। हाईस्कूल की परीक्षा में जिले के सभी विद्यालयों में वह प्रथम रहे, यह बात विद्यालय के लिए गौरव की थी। शासन की ओर से उन्हें सोलह (16) रुपये माह की छात्रवृत्ति दी गयी। इस बात ने एटा में सरन को एक आकर्षण का केन्द्र बना दिया और फिर उन्होंने इसी विद्यालय से इंटर की परीक्षा उत्तीर्ण की।[1]

शिक्षण काल में कला के प्रति इनका कोई लगाव नहीं रहा। इनके कला अध्यापक महेशा स्वरूप सक्सेना ने कक्षा 6 से 10 तक कला शिक्षा प्रदान की, श्री सक्सेना शायद यह समझते थे कि इतनी तीव्र बुद्धि वाला बालक कला विषय में भी अच्छा कर सकता है। उन्होंने कला के लिये रूचिपूर्ण वातावरण प्रकट किया। वे सरन से चित्र बनवाते और प्रदर्शनियों में लगवाते। जहाँ सरन को पारितोशक मिलता था। प्रारम्भ में ही सरन की रूचि अंग्रेजी विषय में चली आ रही थी। छोटी कक्षाओं से उन्होंने अंग्रेजी के ड्रामा–उपन्यास आदि खूब पढ़े। वे बताते हैं कि शेक्सपियर का हेमलेट, एज वी लाइक इट, मच एवो एवाउट नथिंग आदि उपन्यास तो आठवीं कक्षा में

---

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया

ही पढ़ लिये थे और उसमें उनकी रूचि इतनी बढ़ गयी कि बाद में उन्होंने हार्डी के सभी नोविल 20 साल के होते–होते पढ़ लिये थे। अंग्रेजी साहित्य के इस अध्ययन से उन्हें जीवन की वास्तविकता का अनुभव हो गया था। उनके यह दृष्टांत अनुभव के रूप में है। जैसा कि वे कहते हैं सब कुछ ऐसे चलता है और यह कहावत चरितार्थ होती है कि "होनहार विरवान के होत चीकने पात" अर्थात् जिसका भविष्य सुन्दर गढ़ा गया होता है। उसकी जीवन यात्रा पग–पग पर अंतिम लक्ष्य का संकेत देती है। जैसा कि सरन के जीवन में देखने को मिलता है।[1]

जून 1954 में इण्टरमीडिएट का परीक्षाफल आ जाने के बाद अब सरन के सामने समस्या खड़ी हो गयी कि आगे की पढ़ाई के लिये क्या व्यवस्था की जाये? क्योंकि इस समय एटा जिले में कोई डिग्री कॉलेज नहीं था। नगर के सम्पन्न लोग अपने बच्चों को उच्च शिक्षा ग्रहण करने के लिये अलीगढ़, आगरा में भेजा करते थे। सरन के लिये यहां जाकर शिक्षा ग्रहण करना संभव नहीं था। इसलिये उन्होंने निश्चय किया कि किसी इण्टर कॉलेज में नौकरी करते हुये आगे की शिक्षा प्राइवेट छात्र के रूप में पूर्ण की जाये। क्योंकि इस समय आगरा विश्वविद्यालय लड़कियों के अलावा अन्य किसी को व्यक्तिगत छात्र के रूप में परीक्षा देने की अनुमति नहीं देता था।

केवल शिक्षक अभ्यार्थी ही प्राइवेट परीक्षा देने के अधिकारी थे। इसलिये इण्टर कॉलेज में शिक्षक कैसे बना जाये इस पर सरन ने विचार किया और इस वर्ष उन्होंने इण्टर की परीक्षा में कला, चित्रकला और वाणिज्य कला विषयों से इण्टर की परीक्षा उत्त्तीर्ण की और इसी वर्ष सन् 1955 में आई0जी0डी0 बॉम्बे का डिप्लोमा उत्तीर्ण किया। इस प्रकार उन्होंने

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया

अपने आपको माध्यमिक विद्यालयों में कला शिक्षक होने की योग्यता प्राप्त कर ली। वर्ष 1954–55 में यह सब करते हुये उन्होंने म्युनिसिपल बोर्ड की प्राथमिक पाठशाला में सहायक अध्यापक के रूप में 32/– रूपये प्रतिमाह पारिश्रमिक पर कार्य किया। इस दृष्टांत से पता चलता है कि सरन अपने अंतिम उद्देश्य पर पहुंचने के लिये योजनाबद्व तरीके से लक्ष्य को भेदने में सक्रिय रहे।[1]

मार्च 1955 में इनको स्टेट बैंक ऑफ इंडिया में लिपिक की नौकरी मिल गयी। लेकिन इनका उद्देश्य आगे शिक्षा ग्रहण करना था। इसलिये उन्होंने इस नौकरी को नहीं किया और इण्टर कॉलेज के अध्यापक बनने में जुट गये। जुलाई 1955 में इन्होंने गॉधी स्मारक इण्टर कॉलेज, एटा के प्रधानाचार्य श्री ओम प्रकाश मिश्र से भेंट की और अपने मन की सारी बातें और व्यथा सुनाई श्री ओमप्रकाश मिश्र एक श्रेष्ठ मानव विद्वान थे। उन्होंने आश्वासन दिया कि वह प्रबंधतंत्र से बात करेंगे और 5 जुलाई को निर्णय सुनायेंगे। एक तारीख से 5 जुलाई तक का समय पहाड़ की तरह गया, क्योंकि सरन के मन में व्याकुलता घर कर रही थी। वह बताते हैं कि वे अपने इष्ट देवता के मंदिर कैलाश मंदिर गये और शाम को 5 बजे से लेकर रात्रि 11 बजे तक आंख बन्दकर प्रार्थना करते रहे।

जब मंदिर बन्द हुआ तो उन्हें आना पड़ा। अगले दिन वो प्राचार्य के घर पहुंचे उनके पैर छुये व निर्णय जानने की इच्छा करने से पहले ही ओमप्रकाश मिश्र ने उन्हें आशीर्वाद देते हुये कहा कि तुम्हारी नियुक्ति आर्ट एण्ड क्राफ्ट टीचर के पद पर हो गयी है। तुम आज ठीक दस बजे कार्यभार ग्रहण कर लो मैं वहीं मिलूंगा। ऐसा सुनकर सरन की आंखों में आंसू बहने

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया

लगे जो खुशी के थे। फिर वह कैलाश मंदिर पहुंचकर आशीर्वाद लेने के बाद विद्यालय साढ़े नौ बजे ही पहुंच गये। थोड़ी प्रतीक्षा करने के बाद श्री ओमप्रकाश मिश्रा आ गये और उन्हें नियुक्ति पत्र देने के बाद आशीर्वाद दिया और कहा मन लगाकर पढ़ाना खूब मेहनत करो, में आपको आगे की पढ़ाई बी0ए0 तथा एम0ए0 कराऊंगा।

उस दिन की घटना को सरन कभी नहीं भूल सके और गॉधी स्मारक में रहते हुये उन्होंने बी0 ए0 व एम0 ए0 चित्रकला की परीक्षा धर्म समाज कॉलेज, अलीगढ़ से शिक्षक अभ्यर्थी के रूप में प्राइवेट उत्तीर्ण की। शिक्षा के इस अभियान में सरन इसका श्रेय श्री ओम प्रकाश मिश्रा को देते हैं। श्री ओम प्रकाश मिश्रा उनके गुण, चरित्र व परिश्रम से बहुत प्रभावित थे और वह उनकी बहुत मदद करते थे।[1]

विद्यालय सेवाकल में उन्होंने सरन का विवाह होते ही एल0 टी0 ग्रेड दिलवाया व इंटर में कला की कक्षाएं खुलवाकर इन्हें प्रवक्ता नियुक्त करवाया और इसी बीच सेवा आधीन एल0 टी0 की ट्रेनिंग भी अलीगढ़ से करवाई। इस प्रकार सन् 1955 से 1969 तक डॉ0 सरन वहां पर कार्य करते रहे। इसी बीच उन्होंने उच्च्व शिक्षा ग्रहण कर ली। अपनी शिक्षा को विराम न देते हुये वह पी0–एच0 डी0 के काम में लग गये।

जब सरन सिर्फ 25 वर्ष के ही थे तब उनका विवाह सन् 1963 में सुधा रानी के साथ हो गया वे विवाह के समय मात्र 10 वीं पास थीं उनके चहरे पर फैला तेज उनके सौन्दर्य को निखारता था वे स्वभाव से बड़ी सहज, सरल, धर्मनिष्ठा तथा उनकी आबाज भी बड़ी मीठ़ी सुस्पष्ट, मानो फूल झड़ रहे हो, बड़ी निरमल, निष्कपट, अडिग पतिव्रत धर्म का पालन तो

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया

इतना कि स्वंय को शून्य मानकर पति के प्रति स्वंय को न्यौछावर कर दिया वे तन से ही सुन्दर नहीं थी बल्कि मन से बड़ी निर्मल थीं।[1]

डॉ0 सरन की धर्मपत्नी सुधा रानी एक आदर्श नारी भी जहॉं कला तथा संगीत में उनकी रूचि भी, वहीं वे अलंकृत स्वरूप में रहना बहुत पसन्द करती थीं। उन्हे जेवर पहनने का कोई शौक नहीं था। अतः डॉ0 सरन बताते है कि उन्होंने तॉबे की एक अंगूठी जिस पर (राम) खुदा था अपनी अँगुली में 35–40 वर्ष तक धारण की मरते समय भी उनके साथ गई। प्राकृतिक सौन्दर्य उनको सदा से प्रभावित करता रहा है वे अनेकों बार नैनीताल, अलमोड़ा, रानीखेत, जम्मू–कश्मीर, गोवा, शिमला आदि की यात्रा करती रहती थी। बर्फ के पहाड़ों से उन्हें बड़ा लगाव रहा।

डॉ0 सरन बताते हैं कि उनकी पत्नि सुधा रानी को नयी–नयी जगह जाना भाता था और वे उनके साथ दो बार बम्बई, तीन बार जयपुर, दो बार मथुरा व वृंदावन तथा एक बार गोवा गयीं, एक बार अजन्ता की गुफाएँ देखने गयी, दो बार कोटा गयीं आठ–दस बार आगरा व लखनऊ गयीं, डॉ0 सरन बताते हैं कि जब उनकी तबियत खराब होती थी और उपचार लाभ नहीं पहुँचता था तो वे अपनी पत्नि को लेकर नैनीताल चले थे जहाँ वे बिना दवा के ही स्वस्थ्य हो जाती थी शायद यह उनका शौक नहीं था। क्योंकि जब वे डिग्री कॉलेज में प्रवक्ता हुई उससे पहले मामूली कपड़े पहनकर खुश रहती थी।

डॉ0 सरन बिहारी लाल सक्सेना जी ने बतलाया कि उन्हें कभी स्मरण नहीं आता कि उनकी पत्नि ने कभी किसी सांसारिक वस्तु की इच्छा प्रकट की हो उनका स्वभाव बड़ा सन्तोषी था जो है उसी में सन्तुष्ट रहती थी। वे

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया

थी। वे आडम्बरों से शुरू से ही दूर रही और बनावटी पन से खिन्न रही यही कारण था कि जो भी उनसे एक बार मिलता था बिना प्रभावित हुये नहीं रह पाता था।

पारिवारिक जीवन की स्मरणीय घटनायें :

पारिवारिक जीवन की वह महत्वपूर्ण घटनायें जिनको डॉ0 सरन् आज भी नहीं भूल पाते हैं उनके द्वारा ही सुनकर लिख रहा हूँ।

डॉ0 सरन बतलाते हैं जब उनका विवाह सम्पन्न होने के लिए उनके चाचा ने 7 फरवरी 1963 को बरेली बुलाया। 8 फरवरी 1963 को सरन ने और उनके परिवार ने सुधा रानी को मंदिर में देखकर विवाह की स्वीकृति प्रदान कर दी तब अचानक समस्या सामने आयी 11 फरवरी 1963 को विवाह लग्न का कार्यक्रम होगा और 17 फरवरी 1963 को विवाह सम्पन्न होगा। डॉ0 सरन बताते हैं इस समय वह एक गम्भीर स्थिति का सामना कर रहे थे उनकी पासबुक में केवल 760 रू0 थे कहीं से किसी भी प्रकार का सहयोग दिखाई नहीं दे रहा था। इन रूपये में से 200 रू0 अपने चाचा को खाने–पीने के सामान लाने के लिए दे दिये अब बचे 500 रूपये मात्र जिसमें 300 रूपये में एक टीका, एक गले का हार, चार हाथों की चूड़ियाँ ले ली गई इस समय सोना 75 रूपये प्रति तोला था कुल मिलाकर बचे 500 रुपये में शादी के और सामान आदि खरीद लिये गये शादी के एक दिन पहले केवल 60 रूपये ही शेष रह गये जो बारात आदि चढ़ाने में समाप्त हो गये। वे बताते हैं कि वे इस स्थिति में बहुत खुश थे जब यह घटना मुझे वह सुनाते हैं तो बड़ें प्रसन्नचित दिखलाई पड़ते हैं मैने इसे लिखने के पश्चात डॉ0 सरन से एक प्रश्न किया कि जब आप पूर्ण से खाली हाथ अपनो को पा रहे थे तो आप खिन्न थे या खुश उन्होने बड़ी तत्परिता से उत्तर दिया

"मुझे नहीं याद मैं किसी भी स्थिति में खुश होता हूँ" अथवा मैं तो पूर्ण से सामान्य या न खिन्न था और न खुश।[1]

इस तरह उनका शिक्षण होता रहा और सन् 1963 में सुधा रानी से उनका विवाह हुआ और उनके परिवार का पालन पोषण सुचारू रूप से चलता रहा तथा वह शोध भी करते रहे। इस प्रकार डॉ. सरन ने मेहनत, लगन व दृढ़ संकल्प से कुछ न होते हुये भी वो प्राप्त कर लिया जो सम्पन्नता के बीच भी कभी–कभी संभव नहीं हो पाता है। इनकी यह कहानी उन लोगों के लिये उदाहरण है जो अभावों को दर्शाते हुये जीवन में कुछ भी नहीं कर पाते हैं। सत्य तो यही है कि कुछ पाने के लिए सब कुछ ईमानदारी से करना पड़ता है। जैसा कि डॉ0 सरन के जीवन से प्रमाणित हो जाता है।

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया

अध्याय द्वितीय

डॉ० एस० बी० एल० सक्सेना का शिक्षण का अध्ययन

- स्कूली – शिक्षण
- विश्वविद्यालय शिक्षण
- चित्रकला शिक्षण
- विशेष शिक्षण और उस पर प्रभाव

डॉ० एस० बी० एल० सक्सेना का शिक्षण का अध्ययन

डॉ0 एस0बी0एल0 सक्सेना की शिक्षा का प्रारम्भ 5 वर्ष की आयु में हुआ है। प्रारम्भ में एक मौलवी साहब को घर पर आकर इन्हें पढ़ाने के लिये लगाया गया था। जो रोज आकर इन्हें पढ़ाते–लिखाते थे। इसी के साथ–साथ इनका प्रवेश अंग्रेजी माध्यम के स्कूल जार्ज लिली हाईस्कूल, एटा में कराया गया। उस समय यही एकमात्र स्कूल था, जो अंग्रेजी माध्यम से शिक्षण दिया करता था। ये स्कूल इनके घर से लगभग आधा मील आगे ईशन नदी के किनारे पर एटा–आगरा मार्ग पर स्थित था। इस स्कूल में इन्होंने कक्षा प्रथम से लेकर कक्षा पंचम् तक शिक्षण को ग्रहण किया। इसके उपरान्त इन्होंने श्री अविनाशी सहाय इण्टर कॉलेज, एटा में कक्षा छटवीं में प्रवेश लिया।

यह समय इनके जीवन में घोर विपत्तियों का था। डॉ0 सरन की माँ आपको शहर में रखकर गुजारा कर रही थीं। इस समय इन्हें आर्थिक सहायता का अभाव था। इन्होंने इस स्कूल में पढ़ाई का प्रारम्भ करते ही निश्चय किया था, कि उन्हें कठिन परिश्रम करके हमेशा अच्छे अंकों के साथ अपनी परीक्षाएं पास करनी होंगी। इस बात को उन्होंने करके भी दिखाया, ये न केवल वार्षिक परीक्षाओं मे अपनी कक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त करते थे, बल्कि सदैव 70 प्रतिशत से ऊपर अंक प्राप्त करते थे। इस प्रकार सारी

कक्षायें उत्तीर्ण करते हुये उन्होंने सन् 1952 में हाईस्कूल की परीक्षा में जिले के समस्त स्कूलों में प्रथम स्थान प्राप्त करते हुये उत्तीर्ण की और इस सफलता के कारण इनको अगली कक्षा में 2 वर्ष तक सोलह रूपये प्रतिमाह का वजीफा मिलता रहा। इसी विद्यालय से इन्होंने सन् 1954 में अपनी इण्टरमीडिट की परीक्षा उतीर्ण की।[1]

स्कूली – शिक्षण :

डॉ0 सरन बिहारी लाल सक्सेना की शिक्षा पूर्ण व्यवस्थित नहीं रही और न ही उनकी शिक्षा के लिए कोई विशेष प्रबन्ध ही कराया गया। उनकी आर्थिक तंगी की हालत और अनिश्चित स्थिति उनकी शिक्षा पर हमेशा राहू की तरह भारी पड़ी। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि सरन की मात्र ढाई वर्ष की अल्पायु में उनके पिता का देहान्त हो गया था, उनके पास संसाधनों का अभाव हो गया था। जो उनकी शिक्षा व्यवस्था में बहुत बड़ा अवरोध सिद्ध हुआ। लेकिन जब भाग्य फलता है, तो कहते हैं कि विषम से विषम परिस्थितियां भी समय के अनुकूल हो जाती है और अपने उद्देश्य की प्राप्ति में सहायक सिद्ध होती है। शायद यही स्थिति डॉ0 सरन बिहारी सक्सेना की शिक्षा व्यवस्था से जुड़ी एक दैवीय सहयोग की स्थिति है।

बचपन से ही अपने उदय के लिए अपने सगे सम्बन्धियों पर आश्रित हो जाना वास्तव में एक दयनीय स्थिति है। लेकिन उस परमब्रह्म परमेश्वर की असीम अनुकम्पा से काल प्रवर्तन और समय की चाल ने आपकी माता जी को हर स्थिति में साहसी और दृढ़ संकल्प से पूर्ण महिला बना दिया। उनके रहन–सहन व खाने पीने की सम्पूर्ण व्यवस्था उनके पिताजी के मौसा

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना से वार्ता पर आधारित

जी के परिवार में करा दी। अतः उनकी पूर्ण शिक्षा का उत्तरदायित्व भी उन्हीं लोगों का हो गया।

सर्वप्रथम उनकी शिक्षा का प्रथम अध्याय भगवान शंकर के दिन सोमवार को शुरू हुआ। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई। आप छः वर्ष के हुये तो आपका प्रवेश आपकी माताजी ने प्रथम कक्षा में "जार्ज लिली मिशन स्कूल" एटा में करा दिया। उस समय यही एक मात्र स्कूल था, जो अंग्रेजी माध्यम से था। इसी विद्यालय में वर्ष दर वर्ष उत्तीर्ण होते हुये कक्षा पांच तक की शिक्षा प्राप्त की।

इसी अन्तराल में एक दिन अचानक उनके बाबा का स्वर्गवास हो गया। कुछ दिनो के बाद उनकी दादी का भी स्वर्गवास हो गया। अब स्थिति ऐसी हो गयी। उनकी छोटी चाची की जो एटा में जो कोठी थी, उसमें रहने लगी। इस प्रकार उनकी सम्पूर्ण व्यवस्था ने एक नया स्वरूप ग्रहण कर लिया। अब उनके चाचा एटा में वकालत करने लगे थे। वे बहुत सज्जन, शालीन व विद्वान व्यक्ति थे। लेकिन चाची का स्वभाव ठीक इसके विपरीत था। वे एक पुलिस अधिकारी की बेटी थीं। उनका स्वभाव बड़ा रुग्ण था। वाणी बहुत कर्कश थी। जिससे उनके व्यवहार में शालीनता की स्पष्ट रूप से कमी झलकती थी। डॉ0 सरन बिहारी लाल सक्सेना को उनका यह स्वभाव बिल्कुल रास न आया। जिसको सहन करना सरन की माताजी के लिए बहुत मुश्किल था।[1]

चूँकि सरन की माता जी एक सुलझी हुई महिला थीं। इसलिए उनमें स्वाभिमान, दूरदर्शिता और किसी काम को सुचारू रूप से करने की सूझ–बूझ कूट–कूट कर भरी हुई थी। अतः उन्होंने बहुत सोच समझ कर

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना से वार्ता पर आधारित

निर्णय लिया, कि अब वे उस परिवार के साथ नहीं रहेंगी। परिणामस्वरूप वे बालक सरन को लेकर एटा में ही एक किराये के मकान में रहने लगीं। समय बीतता गया और धीरे–धीरे उनके उच्च स्तरीय विचारों से उनके निष्पक्ष उचित व्यवहार से, उन्होंने नगर के सभ्रान्त परिवारों में अपनी एक अलग पहचान बना ली थी।[1]

अब जीवन का वास्तविक दौर शुरू होता है। उसमें आर्थिक संकट, अभाव और असुरक्षा की भावना आदि कठिनाईयों के बीच अकेले ही जीवन के मार्ग पर अग्रसर होना था। यदि कोई सहायक भी था, तो दिखाई नहीं देता था। अनेकों नाते रिश्तेदारियां थीं, लेकिन लगता है, ये सभी आपको भुला चुके थे। चारों ओर निराशा के बादल छाये हुये थे। उसी समय सरन का प्रवेश आर्य इंटर कॉलेज एटा में कक्षा 6 में कराया गया। आर्थिक संकट के कारण पुस्तकों का अभाव था तथा मासिक शुल्क देने की भी व्यवस्था नहीं थी। लेकिन विद्यालय की तरफ से उनका शुल्क पूर्णतः माफ कर दिया गया था। पुस्तकें वे जान पहचान के परिवारों के बच्चों से मांगकर पुरानी पुस्तकों पर जिल्द चढ़ाकर उन पुस्तकों से सदैव पढ़ते थे। अध्ययन में बालक सरन की विशेष रुचि होने के कारण सरन अपनी कक्षा में हमेशा श्रेष्ठ अंक प्राप्त करते थे। इसी आधार पर विद्यालय की ओर से सदैव उनकी पूर्णतया शुल्क मुक्त शिक्षण व्यवस्था अनवरत बनी रही। उन्होंने हाईस्कूल की परीक्षा में एटा जिले में प्रथम स्थान प्राप्त करते हुये उत्तीर्ण की। अब सरन ने ग्यारहवीं कक्षा में उसी विद्यालय में प्रवेश प्राप्त कर लिया। सरन एक प्रतिभाशाली छात्र होने के कारण शासन की ओर से आगामी दो वर्षों तक सोलह रुपये प्रतिमाह की सहायता राशि मिलने लगी।

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया

अब उनकी शिक्षा शुल्क सम्बन्धी कठिनाईयां दूर हो गयी थी। अतः उन्होंने पूर्ण परिश्रम और लगन के साथ अध्ययनरत रहते हुये अच्छे अंको में इण्टरमीडिएट की परीक्षा भी उत्तीर्ण कर ली। इसी बीच अध्ययन करते हुये उन्होंने छोटे बच्चों को ट्यूशन पढ़ाना भी प्रारम्भ कर दिया। यहां पर उनकी शिक्षा में रुकावट आ गयीं क्योंकि उन दिनों जिला एटा में कोई महाविद्यालय नहीं था। आर्थिक रूप से सम्पन्न घरानों के बच्चे आगरा व अलीगढ़ पढ़ने के लिए जाते थे। सरन के लिए यहां के महाविद्यालयों में शिक्षा ग्रहण करना सम्भव नहीं था। क्योंकि यहां 150 रुपये से 200 रुपये प्रतिमाह का खर्च आता था। जो वर्तमान परिस्थितियों में उनके लिए अनुकूल नहीं था। अतः अब शिक्षा का क्रम पूर्णतः रुक गया।[1]

विश्वविद्यालय शिक्षण :

उन दिनो आगरा विश्वविद्यालय शिक्षकों को ही स्नातक और स्नातकोत्तर की परीक्षाओं के लिए व्यक्तिगत रूप से परीक्षा देने की अनुमति प्रदान किया करता था। डॉ० सरन ने इस पर गहनता से विचार किया और शिक्षक की नौकरी प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील हुये। समय और भाग्य ने उनका साथ दिया तथा भगवान की कृपा से नगर पालिका द्वारा संचालित प्राथमिक विद्यालय में उन्हे 32 रुपये प्रतिमाह की नौकरी प्राप्त हो गयी। यहां पर भी डॉ० सरन एक वर्ष तक सेवारत रहे, तत्पश्चात श्री गाँधी स्मारक इंटर कॉलेज, एटा में उनको 45 रू० प्रतिमाह वेतन पर क्राफ्ट अध्यापक के पद पर आपकी नियुक्ति हो गई। इस विद्यालय में उन्होंने अपना स्थान बना लिया। विद्यालय ने इनको शिक्षक अभ्यर्थी के रूप में स्नातक की परीक्षा में सम्मिलित होने की अनुमति प्रदान कर दी। इस प्रकार से इन्होंने स्नातक की

[1] डा० एस०बी०एल० सक्सेना ने स्वयं बताया

परीक्षा उत्तीर्ण कर ली। अब विद्यालय ने इन्हे 75 रु0 प्रतिमाह पर कला अध्यापक के पद पर नियुक्त कर दिया। सरन की शिक्षण पद्धति बहुत प्रभावशाली थी। निरन्तर तीन वर्षों तक हाईस्कूल की परीक्षा में इनके 35 विद्यार्थियों में से 18–20 विद्यार्थियों की कला विषय में विशेष योग्यताएँ आयीं। इस परीक्षाफल से प्रबन्धतन्त्र अत्यधिक प्रभावित हुआ और सरन को वर्ष 1982 में 120 रु0 प्रतिमाह पर स्नातक वेतन क्रम में प्रोन्नत कर दिया। इसके साथ ही सरन को एम0ए0 (ड्राईंग एण्ड पेन्टिंग) की परीक्षा में बैठने की अनुमति प्रदान कर दी।

डा0 सरन ने विद्यालय में 12वीं0 की कक्षाओं में अपने अथक प्रयास से चित्रकला विषय का अध्ययन प्रारम्भ करा दिया। ड्राइंग एण्ड पेन्टिंग विषय में एम0एम0 की परीक्षा उत्तीर्ण करने पर प्रबन्धतंत्र ने इनको कला प्रवक्ता के पद पर 150 रुपये प्रतिमाह वेतन पर नियुक्त कर दिया, लेकिन डॉ0 सरन की नियुक्ति चित्रकला विभाग में उनको रास नहीं आयी। यद्यपि यहां पर उनकी प्रगति के प्रभात की आभा स्वतंत्र रूप से चमकने लगी थी और उनके स्थायित्व की जड़ें धीरे–धीरे मजबूत होने लगी थी। लेकिन ईश्वर को उन्हे बरेली कालेज, बरेली ड्राइंग एण्ड पेन्टिंग विभाग का विभागाध्यक्ष बनाना था। इसलिए ईश्वर ने डॉ0 सरन को सर्वप्रथम बरेली कॉलेज, बरेली के बी0एड0 विभाग में नियुक्त करा दिया। तत्पश्चात् डॉ0 सरन ने अपने भागीरथी प्रयास से बरेली कॉलेज में कला विभाग 1980 में खुलवाया, जिसके आप फाउन्डर हेड हुये बरेली जनपद के कलाप्रेमियों, चित्रकला विद्यार्थियों और कला अध्यापकों को अपनी कला जीवन्त रखने के लिए बहुत प्रतिरक्षित उपहार दिया।[1]

---

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना से वार्ता पर आधारित

इस प्रकार डॉ0 सरन बिहारी लाल सक्सेना ने अपने जीवन में शिक्षा का यह कठिन सफर उसी प्रकार बिना किसी हिचक के साथ, रात दिन अनवरत अध्ययनरत रहते हुये, कछुए की भांति सफल और सरल कर लिया। आप की विश्वविद्यालयी शिक्षा सुगमता से पूर्ण हो गयी।

उनके जीवन का यह कार्यकाल उनके लिए विशेष महत्वपूर्ण रहा। उनके लिए इस समय की स्थिति और परिस्थितियां रेगिस्तान में नाव चलाने के समान रहीं, जो उनके लिए भविष्य का सही मार्ग दर्शक बनीं। वह आज अपने उस परिश्रम को नहीं भूलते जिसका मीठा फल आज उन्हें मिल रहा है। डॉ0 सरन ने मुझे एक साक्षात्कार में बताया कि जटिल से जटिल परिस्थितियाँ और विसंगतियां उनको पथभ्रष्ट नहीं बना सकीं और न ही उन्हें कायर, आलसी और हीन व्यक्तित्व का गुलाम बना सकीं। वे सदा से निर्भीक और निडर रहे। वास्तव में उच्चदर्शता तथा लग्नशीलता, परिश्रमी व्यक्तियों को तपाकर कंचन बना देती है, जैसा कि डॉ0 सरन बिहारी लाल सक्सेना के जीवन से हमें ज्ञात होता है। उनका जीवन इस प्रकार से एक श्रेष्ठ उदाहरण है। यदि व्यक्ति का आत्मबल उच्चस्तरीय रहे और श्रेष्ठ आचरण बना रहे तो हर कोई परिश्रम और लगन से हिमालय की बुलन्दियों को भी छू सकता है। मैने यहां पर उनकी प्राथमिक, माध्यमिक और विश्वविद्यालय स्तर की शिक्षा का विवरण यथासम्भव प्रस्तुत किया है। अब मैं तृतीय सर्ग में उनकी चित्रकला सम्बन्धी शिक्षा प्रस्तुत कर रहा हूँ।

चित्रकला शिक्षण :

डॉ0 सरन बिहारी लाल सक्सेना का पूरा परिवार चूंकि पूर्ण शिक्षित था, यही कारण रहा कि डॉ0 सरन को बचपन से कला के प्रति कोई विशेष रुझान नहीं रहा, लेकिन ऐसा भी नहीं था कि कला से या संगीत से नफरत

रही हो, बस कभी कभार कुछ उल्टा सीधा बना लेते। किन्तु कलाकृतियां देखने का संगीत सुनने का और रंगो के प्रति आकर्षण का आप पर बहुत प्रभाव रहा है।[1]

आप में बचपन से ही कक्षाओं में या घर पर चित्रकला सम्बन्धित कार्यों को करने में इतना अल्हड़पन था, कि अध्यापक आम बनाने के लिए कह रहा है तो अपनी चपलता और चंचलता से वह अमरूद बना देते थे। शिक्षक इनकी इस आदत से प्रभावित होते थे क्योंकि सरन में सदैव नवीन कार्य करने की क्षमता होती थी। जो अमरूद बनाया था उससे उनकी स्मृति इतनी साफ सुथरे कार्य की अपेक्षा सरन से नहीं की जा सकती थी इसलिए सरन से सभी अध्यापक और मित्र प्रसन्न रहते थे।

प्रारम्भ से ही डॉ0 सरन इस प्रकार के सृजनात्मक कार्य करने में अपनी मनमानी करते रहे हैं। उन्होने कभी संतरे को संतरा नहीं बनाया बल्कि संतरे से खरबूजा या नाशपाती या फिर उस समय उनके मस्तिष्क में जो होता वही बनाते। जब डॉ0 सरन कक्षा आठ में आये तो यही क्रम, यही सृजनता, यही प्रक्रिया आपने कक्षा आठ में प्रारम्भ कर दी, जिसे देखकर आपके प्रथम कला शिक्षक या यूँ कहें कि प्रथम कला गुरू श्री महेश स्वरूप सक्सेना ने बड़े स्नेह के साथ अपने पास बिठाना प्रारम्भ कर दिया। धीरे–धीरे अपने साथ कला के विभिन्न प्रकार के चित्रों का अभ्यास कराना शुरू कर दिया।

समय गुजरता गया बालक सरन का रुझान अब चित्रकला के प्रति बढ़ता जा रहा था। अब उस बालक का हाथ गुरू की कृपा से सधता जा रहा था। अब उसकी रेखाएँ कमजोर और दिशाहीन नहीं थीं बल्कि चित्र को

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया

जीवन्त करने के लिए सशक्त और यथार्थ थीं। बालक सरन की मेहनत रंग लाई और देखते ही देखते यह क्या हुआ...? बड़ा आश्चर्य था कि वह बालक जो आम को अमरूद बना देता था जहाँ उसने कभी चित्रकला को कभी गम्भीरता से लिया ही नहीं, वहीं बालक आज इतने सुन्दर चित्र संयोजन, बना रहा था, कि हर कला प्रतियोगिता चाहे वह जनपदीय हो या प्रादेशिक में उसे भेजा जाता और पुरस्कृत भी किया जाता। यही उनके जीवन का वह बिन्दु है, जहां से उन्होने अपने अन्दर की कला की बहुलता समझी और दिन प्रतिदिन कला में उत्तरोत्तर वृद्धि करने लगे। अब उनके जीवन में कला का महत्व और बढ़ गया था और चित्रकला की हर विधा को सीखने की तत्परता थी।

यह सच है कि वास्तव में श्री महेश स्वरूप सक्सेना ने उन्हें जो चित्रकला की बारीकियां बताई वे आज उनकी हर कलाकृति में परिलक्षित होती हैं, जो उनके सत्यनिष्ठ गुरुत्व को दर्शाती हैं।

सरन का ये हाल था कि सरन न रात देखते..... न सुबह देखते, न शाम..... न भूख देखते, न प्यास..... हमेशा बस चित्र ही बनाते रहे। कभी चित्र बनाते–बनाते झपकी लग जाती और आप सो जाते थे, ऐसी स्थिति देखकर आपकी माता जी बहुत परेशान हो जाती थीं। आपके चित्रों को तोड़–फोड़ देती या फेंक देती थीं। कई बार वह आपको काम करते रोक देती थीं क्योंकि माँ खाना बनाये घंटों बैठी रहती थी और खाना खाने के लिए आप बस माँ अभी आया...... बस माँ एक मिनट और, यही कहते–कहते घंटों लगा देते, माँ की भूख मिट जाती, आखिर कब तक वह भूखी बैठी रहे, क्योंकि

जब तक बालक भूखा है माँ खाना कैसे खाती। दिनों–दिन ऐसा ही चलता रहा और बालक सरन कला के प्रति और समर्पित होता गया।[1]

जब बालक सरन ने हाईस्कूल की परीक्षा दी तो उनके कला विषय में सबसे अधिक नब्बे अंक थे। जो उस समय जनपद में किसी के नहीं थे। यह कला के प्रारम्भ में एक प्रकार से पूरे जनपद में कीर्तिमान ही था। ऐसे समय उनकी गिनती कला के श्रेष्ठ विद्यार्थियों में होने लगी थी।[2]

जब सरन ने जिस कालेज में इंटरमीडिएट में प्रवेश लिया था, तो दुर्भाग्य से उस विद्यालय में कला विषय ही नहीं था। यह जानकर उनको बड़ा धक्का लगा क्योंकि कला अब उनका मनपंसद विषय था। इसलिए मजबूरन उन्हें कला विषय छोड़ना पड़ा। इण्टरमीडियेट की परीक्षा उन्होंने कला विषय के बिना ही दी। लेकिन कला का अभ्यास आपके श्रद्धेय गुरू जी श्री महेश स्वरूप सक्सेना जी ने निरंतर बनाये रखा। समय–समय पर आपके गुरू जी आपको कला की सारगर्भिता बाते बताते और उन्हें कला–प्रदर्शिनियों में भी अपने साथ ले जाते।[3]

चित्रकला में विशेष रूचि रखने के कारण इण्टरमीडिएट की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद ही अगले वर्ष उन्होने अतिरिक्त विषय के रूप में टेक्नीकल कला, रंजन कला एवं वाणिज्य कला में इण्टरमीडियेट की परीक्षा दोबारा अच्छे अंको में उत्तीर्ण की। इसी अन्तराल में आपका सम्पर्क श्री हृदयनाथ सिंह जी से हो गया जो उन दिनो राजकीय इंटर कालेज एटा में कला अध्यापक थे और कला के सच्चे पारखी थे। श्री हृदयनाथ सिंह जी उन दिनों वाश पद्धति से जल रंगों में अच्छा काम करते थे। क्योंकि उन्होंने

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना से वार्ता पर आधारित
[2] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया
[3] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया

महाविद्यालय लखनऊ से डिप्लोमा किया हुआ था। वर्षों से वहां वे श्रेष्ठ विद्यार्थी रहे थे। डॉ0 सरन को उनकी पद्धति बहुत अच्छी लगी। अतः उन्होंने श्री हृदयनाथ सिंह जी को अपना गुरू मान लिया। उनके साथ अब नियमित तीन चार घंटे व्यतीत करने लगे। डॉ0 सरन के कथनानुसार श्री हृदयनाथ सिंह जी ही उनके वास्तविक गुरू जी थे, क्योंकि जैसे ही सरन आपके घर पहुँचते थे, तुरन्त ही गुरू जी का आदेश होता था कि जाओ सबसे पहले हुक्का तैयार कर के लाओ। जब सरन उन्हें हुक्का तैयार करके देते थे तद्उपरान्त गुरू जी उन्हें अपने पास बिठाकर स्नेहवत् कला सिखाते थे। जो भी स्वंय खाते थे। सरन को अवश्य खाने को देते थे।[1]

श्री सिंह जी बहुत उदारचित्त वाले व्यक्ति थे। इसलिए उन्होने निःसंकोच बहुत स्नेहपूर्ण सरन को क्रेयान, पेन्सिल स्कैच, पेस्टल रंगो से व्यक्ति चित्र बनाना, जल रंगों से प्रकृति चित्र बनाना, वॉश पद्धति से चित्र संयोजन करना और तैल रंगो से आकाश, पहाड़, पेड और जल बनाने का बहुत अभ्यास किया। जिसका यह परिणाम निकला कि सरन ने अपनी स्नातक की परीक्षा में अच्छे अंक प्राप्त किये।[2]

चूंकि सरन बचपन से ही एक चतुर दूरदर्शी और जुझारू छात्र थे। अतः उन्होंने अपनी स्नातक की व्यक्तिगत परीक्षा को भी संस्थागत छात्र के रूप में उत्तीर्ण किया। क्योंकि सरन उन दिनों जनपद एटा में रहते थे। यहाँ महाविद्यालय में कला विषय था ही नहीं इसलिए वे हर शनिवार को एटा से शाम को अलीगढ़ के धर्म समाज कॉलेज में चित्रकला विभाग के अध्यक्ष प्रोफेसर बी0एल0 राजा राम साहब थे। जिनसे सरन समय–समय पर चित्रकला का शिक्षण लिया करते थे। जब कभी लम्बी अवधि का अवकाश

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया
[2] वही

मिलता तो सरन सीधे बी0एल0 राजाराम जी के यहाँ पहुँच जाते। वहाँ उन्हीं के घर रुककर अध्ययन किया करते थे। उनका यही कार्यक्रम स्नातक से अनवरत परास्नातक तक चलता रहा। इस प्रकार "करत–करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान" सूक्ति को चरितार्थ करते हुये डॉ0 सरन व्यक्तिगत छात्र होते हुये भी उन संस्थागत छात्रों से कहीं ज्यादा ज्ञानवान और प्रतिभावान हो गये थे।

जब डॉ0 सरन ने ड्राइंग एण्ड पेन्टिंग विषय को लेकर स्नातकोत्तर में प्रवेश लिया। उस समय प्रोफेसर गोपाल मधुकर जी बारहसैनी कॉलेज अलीगढ़ में चित्रकला के विभागाध्यक्ष थे। उन को उस समय तैल रंग में महारथ हासिल थी । लिहाज़ा उनसे भी यदा–कदा चित्रांकन में और ऑयल कलर के प्रयोग में शिक्षा हासिल की। फिर बाद में तो कई कलाकृतियां एक साथ बैठकर बनाई। बाद में प्रोफेसर मधुकर उनके मित्र बन गये थे। उन्होंने समय समय पर जब भी सरन होते, सरन की बड़ी सहायता की।

विशेष शिक्षण और उस पर प्रभाव :

सन् 1956 में सरन ने अपने माध्यमिक शिक्षण के साथ–साथ आई0जी0डी0 डिप्लोमा जो उन दिनों बम्बई से संचालित था, की परीक्षा व्यक्तिगत छात्र के रूप में उत्तीर्ण की। उन दिनो इस परीक्षा के छः प्रश्न–पत्र होते थे, जो अत्यन्त कठिन होते थे। जिनमें कला के हर पहलू जैसे प्राकृतिक चित्रण, आलेखन, चित्र संयोजन, दृश्य चित्रण, वस्तु चित्रण तथा ज्यामिति कला पर भी प्रकाश डाला जाता था। विद्यार्थी को हर तरह से चित्रकला में निपुण होना पड़ता था। लेकिन सरन के अथक परिश्रम से यह परीक्षा सहज रूप से उत्तीर्ण कर ली गयी। इसके साथ ही कुछ दिनों पश्चात् आपने चित्रकला की एक और परीक्षा आर0डी0एस0 (लंदन) भी

उत्तीर्ण कर ली। यह परीक्षा भी कोई–कोई लोग ही कर पाते थे। उनके लिए जीवन में उनका एक ही निर्दिष्ट लक्ष्य था कि किसी भी प्रकार से व कैसे भी संभव हो बस एक सफल चित्रकार बनें।

इन भिन्न–भिन्न परीक्षाओं के उत्तीर्ण करने के तत्पश्चात् उन्होंने अपनी एम0ए0 की पढ़ाई चित्रकला विषय में करनी शुरू कर दी। आगरा विश्वविद्यालय, आगरा के धर्म समाज कॉलेज, अलीगढ़, चित्रकला विभाग केन्द्र से सन् 1962 में सरन ने यह परीक्षा उत्तीर्ण कर ली थी। ये परीक्षा चित्रकला विषय में परास्नातक स्तर पर प्रथम थी। इस कारण इस अवधि में शिक्षा की व्यवस्था पद्धति बहुत उच्चस्तरीय नहीं थी, फिर भी एक विशेष वातावरण में इसका संचालन हुआ था। इसके उपरान्त डॉ0 सक्सेना ने प्रोफेसर बी0एल0 रायजादा और प्रोफेसर सी0पी0 शर्मा से चित्रकला का शिक्षण प्राप्त किया था।

प्रोफेसर रायजादा ने धर्म समाज कॉलेज अलीगढ़ में स्नातक स्तर पर चित्रकला विभाग खुलवाया था। वे विभाग संस्थापक एवं संरक्षक थे। वे एक अच्छे चित्रकार व एक उच्चस्तरीय शिक्षक भी थे। वे अलीगढ़ के जयगंज मौहल्ले में रहते थे। अपने मकान के नीचे एक कोठरी, जिसको उन्होंने बैठक बना लिया था। इस स्टूडियों में बैठकर रायजादा साहब अक्सर चित्र बनाते रहते थे। कला के कुछ पारखी छात्रों को जैसे सरन जी और एक दो छात्र हो जाते थे, उनको स्कैच करने के लिए तरह–तरह का प्रलोभन देकर बाध्य किया करते थे। डॉ0 सरन बताते हैं कि जब प्रोफेसर रायजादा साहब कम से कम बीस स्कैच करने को देते थे, जिससे सरन का अभ्यास निरंतर बढ़ता जा रहा था। उनके स्कैचिंग में नित नूतन निखार एवं ठहराव आता जा रहा था। डॉ0 सरन बताते हैं कि उन्होंने बड़ी जिज्ञासा और लगन से

स्कैच और ड्राइंग के महत्व को भली भांति समझा, वरना आज वे स्कैच नहीं कर पाते। उनका यह हमेशा से विश्वास रहा है कि स्कैच और ड्राइंग करने में कुशलता प्राप्त किये बिना कोई भी व्यक्ति चाहे वह कितना भी पढ़ा लिखा क्यों न हो लेकिन एक सफल चित्रकार नहीं बन सकता।[1]

प्रोफेसर रायजादा के साथ डॉ0 सी0पी0 शर्मा भी एक श्रेष्ठ चित्रकार थे। जो तैल व जलरंग का अच्छा प्रयोग करते थे। उनके द्वारा बनाये सभी तरह के चित्र सरन को बहुत प्रभावित करते थे। अतः डॉ0 सरन ने डॉ0 सी0पी0 शर्मा से तैलरंग एवं जलरंग दोनों माध्यमों का प्रयोग करना बड़े सुचारू एवं सुव्यवस्थित तरीके से सीखा। उन्होंने भी बड़े स्नेहपूर्वक सिखाया चूंकि अपने क्षेत्र में विशेषज्ञ थे। उन्होंने डॉ0 सरन को धीरे–धीरे रंग भरने की सभी प्राथमिक, माध्यमिक, स्नातकीय तथा स्नातकोत्तरीय तकनीक एवं उसकी बारीकियां सभी सहज रूप से बता दी थी।[2]

कला की शिक्षा का समय उनके जीवन में उस समय आया, जब डॉ0 सरन डी0ए0वी0 कालेज के चित्रकला विभाग में प्रवक्ता नियुक्त होकर आये थे। उस समय इस विभाग के विभागाध्यक्ष प्रोफेसर छैल बिहारी बरतरिया जिन्होने बाम्बे स्कूल ऑफ आर्ट से चित्रकला में डिप्लोमा किया था। इसलिए उनका हाथ बहुत सधा हुआ था। उन्होंने सरन में न जाने ऐसा क्या देख लिया कि उन्होंने स्वयं सरन से कहा कि "बेटा मैं तुझे बहुत अच्छा चित्रकार बनाना चाहता हूँ" इसके लिए बेटा तुझे मेरे सानिध्य में रहकर खूब जी लगाकर सीखना पड़ेगा। ऐसा सुनकर तो सरन साहब कहते हैं कि मैं बाग–बाग हो गया था, क्योंकि मेरी जो तीव्र इच्छा प्रतिक्षारत थी, वही अब मुझे लगता था कि पूर्ण होने वाली है। मुझे भी एक सफल चित्रकार होने की

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया
[2] वही

धुन सवार थी। मैं रात दिन यही सोचा करता था, कि वह शुभ दिन कब आयेगा जब में भी एक सफल चित्रकार बनूँगा।[1]

डॉ0 सरन बिहारी लाल सक्सेना लगन के बहुत पक्के थे। एक जुनूनी मिजाज वाले थे। अतः उनके सानिध्य में रात और दिन लगे रह कर बहुत कुछ सीखते और उनके ही निर्देशन में अपने शोध का कार्य भी करते थे। आज डॉ0 सक्सेना साहब उनका नाम बहुत सम्मानपूर्वक लेकर स्मरण करते हैं।

डॉ0 सरन बिहारी लाल सक्सेना ने सन् 1973 में "अजन्ता की चित्रकला में रस का अध्ययन" विषय पर प्रोफेसर छैल बिहारी बरतरिया जी के निर्देशन में कानपुर विश्वविद्यालय कानपुर से पी0एच0डी0 की उपाधि ग्रहण की।

डॉ0 सरन बिहारी सक्सेना ने अपना जो शोध प्रबन्ध कानपुर विश्वविद्यालय को पी–एच0डी0 की उपाधि प्राप्त करने के लिए जमा किया था। उसके परीक्षक डॉ0 श्रीवास्तव, निर्देशक राष्ट्रीय संग्रहालय, डॉ0 राम किशनदास, निर्देशक–कला भवन, बी0एच0यू0, वाराणसी और प्रो0 हरिशचन्द्र राय, प्राचार्य, राजकीय ललित कला संस्थान, शिमला के थे। इन तीनो परीक्षकों ने शोध के कार्य की इतनी अधिक प्रशंसा की, कि जिसको आधार बनाकर कार्यकारिणी परिषद कानपुर विश्वविद्यालय ने डॉ0 सरन बिहारी लाल सक्सेना को उनके शोध के लिए विशिष्ठ विद्वान घोषित किया था। विश्वविद्यालय में यह ऐसा प्रथम और अन्तिम निर्णय था, जो किसी शोध

---

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया

विद्यार्थी को विशिष्ट विद्वान के रूप में अपने विश्वविद्यालय में पी0–एच0डी0 निर्देशन का कार्य करने के लिए अपनी ओर से आज्ञा निर्गत की गयी थी।[1]

तत्पश्चात् अब प्रगति के पथ पर और आलोकित होने की आकांक्षा बढ़ती गयी। परिणामस्वरूप सन् 1985 में डॉ0 सरन बिहारी लाल सक्सेना ने **"An Critical Analysis of Orient and Oxidental Theories of Asthatics in Painting"** विषय पर कानपुर विश्वविद्यालय से डी0लिट0 की उपाधि ग्रहण कर ली। यह यू0जी0सी0 के (एच0आर0) के आधीन स्वीकृत प्रोजेक्ट था। जिसके लिएं उन्होंने बरसों–बरस अपनी तन्मयता से इस विषय का गहन अध्ययन किया और हमेशा कुछ नया कर दिखाने की प्रवृत्ति के अनुसार डॉ0 सरन हमेशा कला के बड़े–बड़े चित्रकारों के सम्पर्क में बने रहे। उनकी रूचि भारतीय रस दर्शन और सौन्दर्य में थी। संयोग से पी0–एच0डी0 का भी यही विषय था। इसलिए उन्होंने डी0लिट0 के लिए भी यही विषय चयन किया। क्योंकि पी0–एच0डी0 का विषय भारतीय रस दर्शन तक ही सीमित रहा इसलिए उन्होंने पाश्चात्य के सौन्दर्य, आकर्षण और अवधारणा पर गहनतम् अध्ययन किया। डी0लिट0 के लिए चित्रकला में रस और सौन्दर्य की अवधारणा को पूरब और पश्चिम की चित्रकला में तुलनात्मक दृष्टिकोण से अध्ययन किया तो उनके विषयानुसार पूर्णरूपेण सफल सिद्ध हुआ।[2]

डॉ0 सरन ने अपने शोध प्रबन्ध में यह सिद्ध कर दिया कि पाश्चात्य चित्रकला दर्शन में सौन्दर्य को लेकर एक विस्तृत प्रारूप किया गया है। अनेक विद्वानों ने भिन्न–भिन्न प्रकार से उसे प्रस्तुत करके महत्वपूर्ण बता

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया
[2] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना से वार्ता पर आधारित

दिया है। ये विचार नगण्य हैं क्योंकि सौन्दर्यशास्त्र की अवधारणा का जहाँ अस्तित्व पूर्णरूपेण समाप्त हो जाता है। वह आनन्द, लेकिन भारतीय रस दर्शन में चित्रकार के प्रसंग में यहां से **Aesthetics** का प्रारम्भ होता है। इस प्रकार से भारतीय दस दर्शन पाश्चात्य सौन्दर्य की अवधारणा की तुलना में श्रेष्ठ है।

उचित शिक्षा का प्रभाव आपके कार्य कलापों में झलकने लगता है। डॉ0 सरन की उच्चस्तरीय विषयात्मक पकड़ उनके उच्च शिक्षित होने का प्रभाव ही है। उन्होंने कभी किसी को विषय के प्रतिकूल नहीं जाने दिया। बड़े–बड़े विद्वान, नामीगिरामी लोग उनके शिष्यत्व को ग्रहण करने आये, जिनका नाम ही उनके परिचय के लिए पर्याप्त था। जैसे डॉ0 मकबूल हुसैन अंसारी, डॉ0 अविनाश बहादुर वर्मा, स्व0 प्रोफेसर आर0एस0 धीर, श्री नन्दू खन्ना, डॉ0 मनोरमा सिन्हा, डॉ0 पुष्पा भारद्वाज, डॉ0 इन्द्रा पाण्डेय इत्यादि लेकिन डॉ0 सरन कभी किसी को भी विषय के प्रति असत्य या काल्पनिक नहीं होने दिया, हमेशा सत्य की महत्ता रखते हुये सत्याग्रही बनाया। ये उनके उच्चतम शिक्षण और पूर्णतम परीक्षण का पर्याय है।

उन दिनों एटा जिले में कोई डिग्री कॉलेज नहीं था। इसीलिये इनके आगे पढ़ने की व्यवस्था संभव नहीं हो पा रही थी। लेकिन इनके मन में आगे बढ़ने की प्रबल इच्छा थी। इसलिए इन्होंने आई0जी0डी0 बाम्बे आर्ट का डिप्लोमा उत्तीर्ण किया। इस योग्यता के सहारे श्री गांधी स्मारक इंटर कॉलेज, एटा में सहायक अध्यापक के रूप में नौकरी करने लगे। इस नौकरी के दौरान इन्होंने शिक्षक अभ्यर्थी के रूप में अपनी बी.ए. की परीक्षा आगरा विश्वविद्यालय से सन् 1958 में उत्तीर्ण कर ली। इसके बाद इन्होंने एफ.आई. डी.एस. की चार परीक्षाए इंग्लैण्ड से पत्राचार के द्वारा उत्तीर्ण कीं। अब

इन्होंने सन् 1962 में शिक्षक अभ्यर्थी के रूप में चित्रकला विषय में एम0ए0 की परीक्षा आगरा विश्वविद्यालय, आगरा से उत्तीर्ण की। सन् 1965 में इन्होंने शिक्षक अभ्यर्थी के रूप में उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा संचालित शिक्षक परीक्षण एल0टी0 की परीक्षा उत्तीर्ण की।

सन् 1967 से इन्होंने चित्रकला में शोध कार्य प्रारम्भ किया। आपके **शोध निर्देश्क स्व0 प्रो0 सी0 बरतरिया, अध्यक्ष–चित्रकला विभाग, डी0ए0वी0 कॉलेज, कानपुर** थे। उनके सफल निर्देशन में इन्होंने सन् 1974 में अपने शोध विषय अजन्ता की चित्रकला में रस विषय पर कानपुर विश्वविद्यालय, कानपुर से पी–एच0 डी0 की उपाधि ली। फिर उन्होंने 1978 में अपने डी0लिट0 का शोध कार्य शुरू किया। वर्ष 1985 में कानपुर विश्वविद्यालय से डी0 लिट0 की उपाधि ग्रहण की।

डॉ0 सक्सेना से साक्षात्कार के समय किये गये उनके शिक्षण से सम्बन्धित कुछ प्रश्नों का विवरण निम्न प्रकार हैः–

प्र0 जैसा कि आपने बताया कि आपने उच्च शिक्षा को किसी शिक्षण संस्था में पढ़कर नहीं किया व शिक्षक अभ्यर्थी के रूप में पास किया है, तो बताये आपने परीक्षा की तैयारियां स्वयं कैसे कीं?

उ0 मैं स्वयं इतने दृढ़ संकल्प का व्यक्ति रहा हूँ कि जिस कार्य को करने का निश्चय कर लिया उसको करने में पूर्ण प्रयत्न से नहीं चूकता हूँ। तुम्हारी यह शंका उचित है, कि मैंने बिना कहीं पढ़े इतनी उच्च शिक्षा की परीक्षाएं कैसे उत्तीर्ण कीं? सच्चाई तो यह है कि मैंने अपने को धर्म समाज कॉलेज, अलीगढ़ से जोड़ लिया, और वहाँ पर मै हर छुट्टी तथा कभी–कभी अवकाश लेकर कक्षाओं में सम्मिलित होकर

पढ़ाई करता रहता था। मेरा परिश्रम, आचरण एवं आदरभाव आदि ने वहाँ के शिक्षकों को इतना प्रभावित कर दिया था, कि उन्होंने मुझे अपनी कक्षाओं में सदैव सम्मिलित होने के लिये आज्ञा दी। स्थिति कुछ ऐसी थी कि लोग मुझे वहाँ का संस्थागत अभ्यर्थी मानते थे। इस प्रकार सच यह है कि मैंने उच्च शिक्षा की पढ़ाई इसी महाविद्यालय की उच्च कक्षाओं में पढ़कर की और अपने साथियों जो वहाँ पर संस्थागत छात्र थे, उनमें मैं सदैव प्रथम रहा।

प्र0 आपने एम0ए0 चित्रकला के अध्ययन में किस बाहरी शिक्षण को जोड़ा?

उ0 मैं पूर्व में बता चुका हूँ कि मैंने बी0ए0, एम0ए0 का शिक्षण धर्म समाज कॉलेज, अलीगढ़ से वहां के संस्थागत छात्र की तरह ही ग्रहण किया है। वहीं मैंने एम0ए0 की शिक्षा वार्ष्णेय डिग्री कॉलेज से ग्रहण की तथा बीच–बीच में प्रयोगात्मक कार्य करने में मेरी सहायता श्री वार्ष्णेय कॉलेज के चित्रकला विभागाध्यक्ष श्री गोपाल मधुकर ने की। सच तो यह है कि उन्होंने मुझे इतना अधिक सिखाया और काम करवाया कि जिसके फलस्वरूप मैं संस्थागत अभ्यर्थियों के मुकाबले अधिक अंक लेकर उत्तीर्ण हो सका। आगे चलकर डी0ए0वी0 कॉलेज, कानपुर में चित्रकला का प्रवक्ता नियुक्त हो सका।

प्र0 जब आपने कहीं भी किसी संस्था में नियमित चित्रकला का अध्ययन नहीं किया है तो आप चित्रकला में इतने श्रेष्ठ चित्रकार कैसे बन गये?

उ0 चित्रकला किसी से सीखने का विषय नही है। यदि किसी के मन में कुछ करने की बात दृढ़ता से आ जाये तो वह चित्रकला ही क्या किसी भी कला को स्वयं सीख सकता है। इस प्रकार मैंने बिना किसी शिक्षक के अध्ययन के द्वारा चीजों को समझते हुये स्वयं ही सीखने का अत्यधिक परिश्रम किया। जैसे एकलव्य को तो आचार्य द्रोणाचार्य ने धनुष वाण की विद्या सिखाने से मना कर दिया था। लेकिन उसने स्वयं के अध्ययन व परिश्रम से इतनी ज्यादा योग्यता ग्रहण कर ली कि आचार्य द्रोण को लगने लगा था कि वह अर्जुन से भी श्रेष्ठ धनुर्धर है। यह कल्पना नहीं इतिहास का प्रामाणिक प्रसंग है। मेरी लगन, दृढ़ संकल्प, कर्तव्य के प्रति अटूट विश्वास व निरंतर अभ्यास ही मेरे शिक्षण में गुरू मंत्र रहे हैं। जिसकी सहायता से मैंने चित्रकला का अध्ययन पूर्ण किया।

प्र0 आप अपना गुरू किसे मानते हैं?

उ0 जीवन में जाने कितने लोग मिलते व छूटते हैं? कितनों के हाथ पकड़ते हैं व वह छुड़ाकर चले जाते हैं। मेरे जीवन में ऐसा सब कुछ होता रहा है। सत्य यह है कि मैं परम–पिता परमेश्वर को ही अपना गुरू मानता हूँ। जिनके आशीर्वाद के फलस्वरूप ही श्रेष्ठ चित्रकारों से सम्पर्क बनाने का अवसर मिला। जिनमें सर्वप्रथम सी0 बरतरिया, प्रो0 रणवीर सक्सेना, प्रो0 रामचन्द्र शुक्ल आदि ने समय–समय पर चित्र बनाने, शोध कार्य करने व जीवन के मूल्यों को समझने में मार्ग दर्शन दिया है। लेकिन सबसे ज्यादा प्रभाव मेरे ऊपर प्रो0 रामचन्द्र शुक्ल का है क्योंकि उन्होंने मुझे पुत्र के समान स्नेह दिया। हर समस्या

सुलझाने में मद्द की और मेरे चित्रकार के रूप में स्थापित होने में मेरा सदैव उत्साहवर्धन किया। मैं उनका सबसे अधिक आदर करता हूँ और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में, मैं उनको अपना गुरू मानता हूँ।

चित्रकला का अध्ययन आपने कब समाप्त किया?

सीखना और समझना जीवन पर्यन्त चलता रहता है। इस प्रकार चित्रकला का अध्ययन मैंने कभी समाप्त नहीं किया। आज भी इसका अध्ययन व अभ्यास कर रहा हूँ। इसके फलस्वरूप इसका नया स्वरूप निकलकर आया। वर्तमान में मैं ''चित्रों के द्वारा मनुय की जन्म कुण्डली के अनुसार उसके ग्रहों को किस प्रकार बदला जा सकता है'' के शोध विषय पर पिछले 10 वर्षों से अध्ययन कर रहा हूँ।

अध्याय तृतीय

डॉ० एस० बी० एल० सक्सेना की चित्रकला में रूचि एवं चित्रकला के क्रियात्मक कार्य

डॉ० एस० बी० एल० सक्सेना की चित्रकला में रुचि एवं चित्रकला के क्रियात्मक कार्य

प्रो0 एस0 बी0 एल0 सक्सेना वर्तमान में अपनी चित्रकला की प्रतिभा के लिये देश में नहीं बल्कि विदेशों में भी पहचान बनाये हुये हैं। प्रारम्भिक स्तर पर उनकी कला में कोई रुचि नहीं थी। जैसा कि वह बताते हैं कि जब वह छोटी कक्षाओं में शिक्षण ग्रहण कर रहे थे तो कक्षाओं में जो चित्र बनाते थे, उनसे उनके कला अध्यापक श्री महेशचन्द्र सक्सेना बहुत प्रभावित हुआ करते थे। श्री महेश चन्द्र सक्सेना सरन से प्रदर्शनियों में भेजे जाने वाले चित्र भी बनवाते थे। वे अपने गुरू का बहुत आदर करते थे। उनकी आज्ञा के अनुसार तरह–तरह के चित्र बनाया करते थे।

प्रो0 सक्सेना बताते हैं कि उन्होंने कभी इन चित्रों को मन से नहीं बनाया फिर भी वह इतने अच्छे बन जाते थे कि उन्हें प्रदर्शनियों में इनाम भी मिल जाता था। धीरे–धीरे जब वह दसवीं कक्षा में आये तब उन्हें चित्रकला विषय में रुचि उत्पन्न हो गयी। यहीं से उनका चित्र बनाने का सिलसिला शुरू होता है। लगभग दो से तीन साल तक उन्होंने रेखांकन का अभ्यास

किया। 6B पेन्सिल से अनेक देवी–देवताओं, नेताओं व महापुरुषों के सौ से अधिक चित्र बनाये यह क्रम 1954 तक चलता रहा।[1]

सन् 1955 से जब इन्होंने कला अध्यापक होने के लिये दृढ़ संकल्प लिया तो उन्होंने कला साधना प्रारम्भ की और श्री हरनाथ सिंह सोलंकी जो राजकीय इण्टर कॉलेज, एटा में कला के अध्यापक थे। जिन्होंने राजकीय कला महाविद्यालय, लखनऊ से कला में शिक्षण ग्रहण किया था। उनको सरन ने अपना गुरू बना लिया। उनके मार्गदर्शन में जल चित्रण के चित्र बनाये। इस प्रकार सन् 1955 से लेकर 1960 तक उन्होंने जल रंगो के चित्र बनाये। प्रारम्भ में वे पेस्टल रंगो से चित्र बनाते रहे, लेकिन बाद में उन्होंने बंगाल की वॉश पद्धति से जल रंगों से कई दर्जन चित्र बनाये। इनमें से कुछ चित्र इतने श्रेष्ठ बने की उन्हें अन्तर जिला स्तर प्रदर्शनियों में पुरस्कार प्राप्त हुआ। इस प्रकार क्रमबद्ध तरीके से रेखांकन से प्रारम्भ करके पेन्सिल चित्रण शेड, पेस्टल, जल रंगों से चित्र बनाना धीरे–धीरे रंगों की कठिन पद्धति वॉश तकनीक में चित्र बनाते रहे। पाठ्य के सन्दर्भ में पूछे गये कुछ प्रश्नो के उत्तर निम्नवत है–

प्र0 आपने प्रारम्भिक चित्र बनाने में किस सोच को अपनाया?

उ0 जब मैंने चित्र बनाना प्रारम्भ किया तो मैंने क्रमबद्ध तरीके से अभ्यास करते हुये, उन्हें बनाने का दृढ़ निश्चय किया था। क्योंकि यह वो समय था, जब मैं चित्रकला का अध्ययन कर रहा था। इस अध्ययन के आधार पर चित्र बनाने का काम शुरू कर चुका था।

---

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना से वार्ता पर आधारित

प्र0 इस काल में चित्र बनाते समय आपको किसने प्रभावित किया?

उ0 मैं पूर्व से ही बता चुका हूँ कि मैं कला शिक्षक बनने के उद्देश्य से ग्रस्त था। मेरे इसी उद्देश्य ने मुझे प्रभावित किया। क्योंकि मैं यह जानता था कि यदि उद्देश्य के अनुकूल कार्य किया जाये तो उद्देश्य की प्राप्ति सम्भव होती है। मैं श्रेष्ठ कला अध्यापक बनना चाहता था। इसीलिये श्रेष्ठ रूप से चित्र बनाना भी मेरा एक मात्र लक्ष्य था।

प्र0 क्या आपको, आपके द्वारा बनाये गये चित्र संतोष प्रदान करते थे?

उ0 मेरा यह स्वभाव रहा है कि मैं हर काम को बहुत गंभीरता से करता हूँ मेरी यह सोच आज भी जिन्दा है। किसी छोटे काम को बहुत बड़ा मानकर पूर्ण करने की मेरी आदत है। इसलिये इस समय मैने जो चित्र बनाने का काम किया उसके पीछे मेरे उद्देश्य का विस्तार व क्रिया की दृढ़ता देखी जा सकती है। मुझे याद है कि मैं एक दिन में आठ घंटे का समय चित्र बनाने में देता था। यह काम नियमित रूप से करता था। ऐसा नहीं है कि सब चित्र बहुत अच्छे बन जाते थे जो चित्र मुझे संतोष नही देते थे, मैं उन्हें फाड़ कर फेंक देता था। अतः जो चित्र मुझे संतोष देते थे उन्हें मैं अपनी फाइल में रखता था। इस काल में मैंने 15 X 10 इंच के कागज पर ही चित्र बनाये थे। क्योंकि मैं यह समझता था कि इससे बड़े आकार में बनाये गये चित्र रखने व प्रदर्शन करने में कठिनाई कर देंगे। आपके प्रश्न का उत्तर यह है कि मैं चित्र बनाने के बाद बहुत खुश हो जाता था। मैं ऐसा अनुभव करता था कि परमात्मा ने मुझे विशेषता प्रदान की है और मैं

उन्हें बहुत धन्यवाद देता था। क्योंकि मैं हर काम को ईश्वर की कृपा मानता हूँ।

इस प्रकार श्री सरन बिहारी लाल सक्सेना ने प्रारम्भ में पेन्सिल स्केच में चित्र बनाने शुरू किये थे। इस प्रकार के चित्र उन्होंने बड़ी संख्या में बनाये इन चित्रों का विषय दैनिक जीवन से जुड़ा होता था। कुछ चित्रों को देवी—देवताओं, महापुरुषों और राजनेताओं के व्यक्ति चित्रण के रूप में इन्होंने पेन्सिल द्वारा ही खूब बनाया। इसके बाद इन्होंने जलरंगों में आकृति अंकन करना शुरू किया। इन्होंने बताया कि वे बाहर के आस—पास के पार्कों में जाकर बैठते थे और वहाँ के पुष्प पौधों को चित्रित किया करते थे। उस समय इन्होंने प्रकृति के आधीन दृश्य चित्र भी बनाये थे। उनका मानना है, कि इन चित्रों को बनाने में उन्हें बहुत अधिक खुशी मिलती थी। अब इन्होंने पेस्टल जलरंग, वॉश टेक्नीक जलरंग में बड़ी संख्या में चित्र बनाये। जिनका विषय विशेष रूप से प्राकृतिक ही था। ग्रामीण जीवन को इन्होंने अपने चित्रों का विषय बनाया था, जिनमें पशुओं को चराने वाले लोगों को विशेष महत्व दिया। घर के अन्दर बैठी हुई चक्की पीसती औरत, कुँओं से पानी भरती औरतें, खेत में किसानों का काम करना और गॉव के मेले व त्योहारों का विषय इन्होंने अपने इस चित्रण में विषेश रूप से दर्शाया। आप बताते हैं, कि इन दिनों में उन्हें चित्र बनाने का शौक इस कदर बढ़ गया था कि अधिकांश समय चित्र बनाने में ही लगाते थे।[1]

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया

प्र0 आपने जलरंग में बहुत चित्र बनाये। कृपा कर बताइये कि जल रंग पद्धति में चित्र बनाते समय किस बात का ध्यान अधिक रखते हैं?

उ0 जल रंग चित्रण विधि देखने में बहुत सरल है लेकिन चित्रण करना कठिन है। जब कोई रंग लग जाता है तो वह हटाया नहीं जा सकता इसलिए जलरंग पद्धति में रंगो का प्रयोग हल्के से गहरे की तरफ किया जाता है। इस बात का ध्यान रखा जाता है कि रंगो में पारदर्शिता समाप्त न हो जाये। क्योंकि ऐसा होने पर चित्र प्राणहीन हो जाता है। वॉश टेक्नीक में गति से युक्त पतली रेखाओं का प्रयोग चित्र का आभूषण होता है। इसलिये चित्रकार को इस काम में बहुत सावधानी बरतनी चाहिये।

प्र0 आपने जलरंग व तैलरंग दोनों में चित्र बनाये, किसको अधिक महत्व देते हैं ?

उ0 जलरंग व तैल रंग चित्र बनाने के माध्यम हैं। लेकिन चित्रण पद्धति अलग–अलग है। एक चित्रकार के लिये आवश्यक समझता हूँ कि उसको अपनी वर्तना (रेखांकन) पर पूर्ण अधिकार प्राप्त होना चाहिये। दोनों ही पद्धतियां महत्वपूर्ण हैं। जल रंग पद्धति पूर्ण रूप से भारतीय है और परम्परावादी है। जबकि तैलरंग चित्रण पद्धति पाश्चात्य है और आधुनिक है। वर्तमान में यह मानना ही पड़ेगा कि चित्रकार को तैल चित्रण विधि को ही अधिक महत्व देना चाहिये। क्योंकि इस समय बड़े आकार के चित्रों का महत्व अधिक हो गया है। जिसके लिये तैलरंग

चित्रण ही अधिक उपयोगी है और मैंने भी 30 वर्षों से तैल रंग में ही अपने सभी चित्र बनाये हैं।

सन् 1961 से इन्होंने धीरे–धीरे जल रंग में काम करना बन्द कर दिया व तैल रंग से चित्र बनाने लगे। प्रारम्भिक तैल रंग चित्रों में इन्होंने तैल रंग कागज का इस्तेमाल किया। क्योंकि इस समय इन्होंने जलरंग से तैलरंग में प्रवेश किया था। इस प्रकार वह तैलरंगों को बहुत पतला प्रयोग करते थे। उनके प्रारम्भिक चित्र इसी प्रकार के दिखलाई देते हैं। लेकिन बाद में इन्हें अनुभव हुआ, कि तैल–चित्रों में रंगों के टेक्चर का बहुत अधिक महत्व है। इसलिये उन्होंने पतले रंगों के स्थान पर गाढ़े रंगों का प्रयोग शुरू किया। परन्तु यह समस्या आयी कि कागज पर बनाये गये चित्र ज्यादा टिकाऊ नहीं थे। अब इन्होंने कैनवास पर तैलरंगों से बड़ी संख्या में तैलचित्र बनाये। वे बताते हैं कि जब उन्होंने ब्रश के स्थान पर नाईफ को चित्र बनाने में प्रयोग किया तो उन्होंने प्लाईवुड के ऊपर चित्र बनाये।[1]

इस प्रकार इनका दृष्टिकोण प्रयोगवादी रहा। इनके चित्रों का आकार बढ़ता गया। प्रारम्भ में 3 x 2 के चित्र बनाये। धीरे–धीरे सन् 1978 तक इनके चित्रों का आकार बढ़कर 10 x 8 फिट तक हो गया। ऐसे लगभग 100 बड़े चित्र इन्होंने बनाये होंगे। तैल रंग में चित्र बनाते समय इन्होंने आकार को कभी अमूर्त नहीं होने दिया। आकृतियों का डिस्टोसन भी नहीं किया। वास्तविकता यह है कि इन्होंने भारतीय जलरंग पद्धति के स्थान पर तैलरंग पद्धति को अपनाया व सम्पूर्ण चित्रण भारतीय परम्परा के आधीन ही किया है। इन्होंने अपने चित्रण में बहुत मोटे रंग लगाये हैं और बमुश्किल कहीं रंगों का घिसना या मिश्रण करना इनके चित्रों में दिखलाई पड़ता है।

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना से वार्ता पर आधारित

उन्होंने सदैव ओरिजनल रंगों को बिना किसी अन्य रंग के साथ मिलाकर प्रयोग किया है। चित्र में रंग की टोन ओरिजनल रंगों की है। इन्होंने लाल, पीला,नीला, रंग अपने चित्रण के लिये चुना है तथा लाल पर पीले के प्रभाव में इन्हें बहुत मजा आता है। इसलिये इनके चित्रों में नारंगी रंग का प्रयोग अधिक होता है । हरा रंग, लाल रंग के विरोध में प्रकट किया गया है। चित्रों की आकृतियों के बाहर मोटी रेखायें बनाकर आकृति को उभारा है। छाया–प्रकाश का न के बराबर प्रयोग किया है। जिसके लिये सीधे ओरिजनल रंग ही प्रयोग किये हैं। प्रभावपूर्ण संयोजन देखने को मिलता है।[1]

आप बहुत धार्मिक प्रवृत्ति, संवेदनपूर्ण, श्रेष्ठ व्यक्तित्व हैं। इन्होंने रंगो का प्रयोग कलर ऑफ साइक्लॉजी को ध्यान में रखते हुये किया है। जिससे चित्र के विषय और दर्षक के बीच में संबंध बड़ी सरलता से हो जाता है और भाव की अभिव्यक्ति स्पष्ट हो जाती है। वो इस बात पर जोर देते हैं कि भाव जो कि चित्र का प्राण होता है, अगर वो शून्य हो जाये तो दर्षक के लिये कुछ रहता ही नहीं है, क्योंकि उनका मानना है कि इस प्रकार का चित्रण निरर्थक होता है। उसकी संरचना कुण्ठित होती है और वह कदापि सुखद नहीं हो सकता है, वह गूंगा होता है। इस प्रकार इनके तेल रंगों के चित्रों के विषय की व्यापक भूमि है। जिससे व्यक्ति जीवन से सम्बन्धित विषय, सामाजिक कुण्ठाओं पर व्यंग्य और राजनैतिक विषयों का अंकन है। स्वर्गीय श्रीमती इंदिरा गाँधी ने जब देश में आपातकाल घोषित किया था। तब इन्होंने इस स्थिति को लेकर लगभग 50 चित्र बनाये। उन चित्रों में टेरर ऑप इमरजेन्सी, डाउनफाल ऑफ कांग्रेस, दि बर्थ ऑफ जनता पार्टी, राइज ऑफ कांग्रेस अगेन, इन्ट्री ऑफ राजीव गांधी इन द पॉलिटिक्स, द मिस यूज

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना से वार्ता पर आधारित

ऑफ डेमोक्रेसी आदि इस समय के इनके प्रमुख चित्र हैं। महत्वपूर्ण बात यह है कि इनमें से कोई भी चित्र 6 X 4 फिट के आकार से छोटा नहीं है। इस प्रकार से वह 1980 तक इसी गति से चित्र बनाते रहे। लेकिन 1982 से उन्होंने अपने कला गुरू प्रो. रामचन्द्र शुक्ल जो हिन्दु विश्वविद्यालय बनारस में चित्रकला के प्रोफेसर थे। जिन्होंने भारतीय चित्रकला में समीक्षावादी आन्दोलन को जन्म दिया था। डॉ0 सरन भी इस आन्दोलन में शामिल हो गये और समीक्षावादी दर्शन के अनुसार उन्होंने 1995 तक चित्र बनाये थे। इन चित्रों की प्रदर्शनियां भी लगायीं। इन चित्रों में इन्होंने व्यंग्यात्मक शैली मे अपने चित्र बनाये हैं। जैसे इनका एक चित्र है "मुझे मुख्यमंत्री बनना है" इस चित्र में इन्होंने व्यक्ति की महत्वकांक्षा की पूर्ति के लिये हर गलत काम करके उसे पूर्ण करने की क्रिया को स्पष्ट किया है।[1]

1995 में आपने एक चित्र 'राजनेताओं की दीवाली' पर बनाया जो बहुत प्रसिद्व है। समीक्षावाद के आधीन इन्होंने जितना काम किया है उसमें आपने उल्लू की आकृति को महत्व दिया है। शायद ही ऐसा कोई चित्र हो जिसमें उल्लू को न दिखाया गया हो। जब उनसे पूंछा गया कि आपने ऐसा क्यों किया? तो उन्होंने बड़ी सरलता से बताया कि उल्लू को शास्त्रों में बड़ा चालाक और विशेष दृष्टि का मालिक बताया गया है। वह सभी पक्षियों के बीच में एक मात्र एक ऐसा प्राणी है जो अंधेरे में ही देख पाता है। अतः वह गलत चीजों का अच्छा अनुभव रखता है। उल्लू को प्रतीक मानकर इन्होंने अपने चित्रों में महत्वपूर्ण स्थान दिया। काफी समय तक इनके चित्रों की

---

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया

पहचान उल्लू की आकृति थी। इसे वह चित्र का फैशन कहते हैं या यूं कहिये कि चित्र का आकर्षण है।[1]

सन् 1985 से डॉ. सक्सेना ने समीक्षावादी दर्शन को अपने चित्रों का आधार बनाया। वे समीक्षावादी दर्शन को अपने चित्रों का आधार मानते थे। वे समीक्षावादी चित्रकारों के संघ के सदस्य बन गये। इस संघ के मुखिया डॉ0 रामचन्द्र शुक्ल थे जो सेवानिवृत्त होकर इलाहाबाद में रहने लगे थे। समीक्षावादी संघ के चित्रकारों ने देश के बड़े–बड़े शहरों में अपनी प्रदर्शनियां आयोजित की थीं। इन प्रदर्शनियों का विषय सामाजिक कुंठा, धार्मिक अंधविश्वास एवं राजनैतिक हलचल आदि रहे। डॉ0 सरन ने इन सभी विषयों पर सन् 1985 से 1995 तक लगभग दो सौ के करीब चित्र बनाये। यह सभी चित्र प्लाईवुड के आधार पर बनाये गये थे। इन चित्रों की आकृति सरल व लोकतत्वों से प्रभावित है। चित्रों में आकृति विषय के अनुरूप अभिनय युक्त मुद्रा में अंकित की गयी है मैंने इन सभी चित्रों को देखा है और आदरणीय प्रो0 साहब से इन चित्रों की जानकारी प्राप्त की। जिसके उपरान्त निष्कर्शबद्ध मैं यह मानता हूं कि इन चित्रों में इन्होंनें इतना प्रबल संयोजन प्रस्तुत किया है कि विषय की सम्पूर्ण भावाभिव्यक्ति एक केन्द्रित ऊर्जा में प्रकट होती दिखलाई देती है। देखते ही चित्रों में वो सब कुछ दिखलाई देता है जो उस चित्र के विषयक ज्ञान को लेकर चला है। अतः उनके इन चित्रों में निश्प्राण अनुभूति का सशक्त प्रदर्शन ही गुण है। दर्शक को उनके इन चित्रों के विषय में देखने के बाद चित्रकार से उनके विषय में पूछने की कभी आवश्यकता नहीं पड़ती। क्योंकि सभी चित्र अपनी कहानी स्वयं व्यक्त करते हैं।

---

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना से वार्ता पर आधारित

इस समय के चित्रों में उन्होंने बड़े आकार में आकृतियां बनायी हैं। अतः आकृतियों का संयोजन सन्तुलित ढंग से यथास्थान पर प्रस्तुत किया गया है। इन चित्रों में प्रकाश की गति को विशेष महत्व दिया गया है। जिसके कारण इनके चित्र चलचित्र की भाँति मानस पटल पर स्वयं ही अंकित होते चले जाते हैं। इन दस वर्षों का इनका कार्य स्पष्ट रूप से इनकी शैलीगत विशेषताओं को स्पष्ट करता है। क्योंकि यहाँ पर पहुँच कर डॉ0 सरन ने अपनी शैली स्थापित कर ली है। चित्रण की पहचान के लिये इन्होंने किसी न किसी रूप में उल्लू की आकृति को अवश्य चित्रित किया है।

पाठ्य के सन्दर्भ में पूँछे गये प्रश्नों का उत्तर निम्नवत् है :-

प्र0 आपने समीक्षावाद के बाद किस प्रकार के चित्रों का चित्रण किया?

उ0 सन् 1985 से 1995 तक सैकड़ों की संख्या में समीक्षावाद को लेकर चित्र बनाये। उनकी प्रदर्शनियां भी आयोजित कीं। क्योंकि मैं सन् 1975 से शोध कार्य कराने में बहुत व्यस्त रहा। मेरे अधिकांश छात्रों ने कला में धर्म, कला में अध्ययन, भारतीय पुराण कला, रंगो का मनोविज्ञान, रस–भाव अभिव्यक्ति और उसकी प्रक्रिया पर ही कार्य किया है। बहुत कम काम ही ऐतिहासिक दृष्टिकोण से कराये गये हैं। 78 लोगों ने मेरे अधीन शोध कार्य किया। जिनमें 10–12 ऐसे रहे होंगे, जिन्होंने ऐतिहासिक विषय पर कार्य किया हो। इस प्रकार शोध करने व इससे जुड़े रहने के कारण मुझे चित्रकला में मोक्षगामी प्रभावों पर सोचने की विवशता ने नवीन चित्रण करने को मजबूर कर दिया।

सन् 1995 के बाद में मंत्र, यंत्र जंत्र, ग्रह–नक्षत्र कुण्डिलियों के प्रभावों का अध्ययन करने लगा यह मेरे शोध का विषय बन गया है।

मेरे शोध से यह परिवर्तन हुआ। जिस प्रकार, रंगों के नग किसी व्यक्ति की जन्म कुण्डली को प्रभावित करते हैं, उसी प्रकार आकाश, जल, थल के संयोजन को प्रस्तुत कुण्डली–शास्त्र के नियमों और ग्रहों की चाल के हिसाब से वास्तुशास्त्र के आधीन चित्रों की संरचना और उनकी रंगों से निकलने वाली तरंगो के प्रभाव से जन्मकुण्डली के ग्रहों को व्यक्ति विशेष के लिये नियंत्रित ही नहीं किया जा सकता है। बल्कि अशुभ ग्रहों को समाप्त भी किया जा सकता है। इस बात को लेकर पुराण एवं तंत्र की पुस्तकें तथा रावण संहिता आदि ग्रन्थों का मंथन किया है। तंत्र, यंत्र, नक्षत्र की चाल उनका शुभ–अशुभ होना उनके सम्मिलित प्रभाव आदि के समस्त प्रभावों को समझकर कुण्डली में स्थापित ग्रहों को बदलने की व्यवस्था सुनिश्चत कर ली है। सन् 1996 से आज तक में इस विषय को लेकर करीब 150 तांत्रिक चित्र बना चुका हूँ। देश के महानगरों में प्रदर्शनी लगा चुका हूँ। मेरा यह दावा है कि जिस उद्देश्य से यह चित्र बनाये हैं लगाने वाले का इसका परिणाम अवश्य मिलेगा। अगर कमी हुई तो जन्म कुण्डली अशुद्व होगी, क्योंकि अधिकांश जन्म कुण्डलियां अशुद्ध होती हैं।

प्र0 आप अधिकांश जन्म कुण्डिलयों को अशुद्व क्यों मानते हैं?

उ0 किसी व्यक्ति के जन्म से प्रायः यह धारणा है कि जब बच्चा अपनी माँ की कोख से बाहर आता है तो उस को जन्म का समय मान लिया

जाता है जो नितांत गलत है। आध्यात्मिक या वैज्ञानिक दृष्टि से उसका जन्म तब होता है जब उसके तथा उसके माँ के बीच का एकीकरण अलग होता है। जब उसके नाल को काटकर अलग किया जाता है। यही मेरे शोध का मूल केन्द्र है। मेरा यह दावा है कि इसके विरोध में कोई तर्क नहीं दे सकता है। अगर शास्त्रीय ढंग से दे तो मैं अपना शोध बन्द कर दूंगा। सन् 1996 से डॉ0 सक्सेना ने अपने चित्र बनाने की विधा को एकदम बदल दिया है। अपनी सोच तथा शोध के अन्तर्गत (चित्रों के द्वारा ग्रह नक्षत्रों को नियंत्रित ही नहीं किया जा सकता बल्कि उनके प्रभाव को भी बदला जा सकता है)। इस कला दर्शन में इन्होंने नवीन खोज की है। इस पर अब तक 80 चित्र बना चुके हैं। जिनमें 60 चित्र 3 X 3 फुट के आकार के हैं। इसके बाद केनवास बोर्ड पर छोटे चित्रों का निर्माण कर रहे हैं। इस समय वह जो चित्र बना रहे हैं, वह बहुत ही क्लिष्ट हैं। उनमें ग्रहीय एवं तांत्रिक व्यवस्था के अनुरूप आयाम नियंत्रित करके संतुलन और संयोजन को एक नया स्वरूप प्रदान कर रहे हैं। इन चित्रों में वे आकाश, जल के रूप में गंगा और नक्षत्रों के रूप में भूखण्डों को नक्षत्रों की स्थिति चाल व स्थिति के अनुसार एक दूसरे के प्रभाव को लेकन बना रहे हैं। इन चित्रों में अगर देखें तो लाल, पीला एवं नीला रंग मूल रूप से बहुत अधिक प्रयोग किया गया है क्योंकि वे इन तीनों रंगों ब्रह्म, विष्णु और महेश से स्थापित करके दैवीय स्वरूप के नियंत्रण को चित्रों के माध्यम से समायोजित करते हैं।

इस प्रकार जब मैंने उनके चित्रों को देखा तो पहले तो मैं कुछ समझ नहीं पाया तथा चर्चा के उपरान्त जब मैं उनके दर्शन में लीन हो गया, तो मुझे उनके चित्रों में वो सब कुछ स्पष्ट दिखाई पड़ने लगता है। जिसको वह चित्रित करते हैं। विशेष महत्वपूर्ण बात यह है कि आकाश में वायु का संचालन, सूर्य के प्रकाश की किरणों का तेजी से करेन्ट उत्पन्न करना और इनका गंगा के जलप्रभाव से संचालित होना तथा दर्शकों को यह चलते हुये दिखाई पड़ते हैं। प्रकाश के प्रभाव से ग्रह नक्षत्रों के रूप में बने भूखण्डों के रंग बदलते हुये चित्रित किये गये हैं। विशेष महत्वपूर्ण बात इन चित्रों के विषय में यह है कि जब कोई इन चित्रों को तन्मय होकर देखता है, तो दर्शक को अस्पष्ट लेकिन मूर्तरूप में अनेकानेक आकृतियां दिखाई पड़ती हैं। जिनकी मुख मुद्रायें अपने स्वरूप को ग्रह नक्षत्रों के रूप में प्रस्तुत करने में समर्थ हैं। इस प्रकार मेरा मानना है कि वर्तमान में डॉ0 सक्सेना भारतीय चित्रकला के क्षेत्र में एक नवीन शोध करते हुये जो चित्र बना रहे हैं, वह बहुत महत्वपूर्ण हैं। क्योंकि आदिकाल से आज तक इस प्रकार की खोज देखने को नहीं मिली है। इनके इन नवीन प्रयोगों द्वारा संभव है कि भारतीय चित्रकला का एक नवीनतम रूप सम्पूर्ण विश्व में महत्वपूर्ण स्थान पा सकता है। मुझे तो ऐसा लगता है लेकिन क्या होगा यह भविष्य ही बतलायेगा।

मेरा सौभाग्य है कि मैं 20 जनवरी 2007 से लगातार नियमित रूप से डॉ0 सक्सेना के पास पहुंच रहा हूं और आज आठ दिन हो गये हैं। उनसे मैं अपने शोध को पूर्ण करने के लिये चर्चायें कर रहा हूँ। मैं उनके साथ प्रातः 9 बजे से शाम 5 बजें तक रहता हूँ। इस बीच में उन्हें चित्र बनाते भी देखता हूँ। क्योंकि वह प्रतिदिन चित्र जरूर बनाते हैं। मैं उनसे अनेक प्रश्न भी करता हूँ। वह बड़ी सरलता से उनके उत्तर मुझे देते हैं। मैं उनसे इतना

प्रभावित हूँ कि यह कह सकता हूँ कि वो बहुत सरल हैं। अपने शयनकक्ष में बैठाकर ही शोध सम्बन्धी जानकारी स्नेहपूर्वक देते रहते हैं। यह उनकी सरलता का प्रतीक है।

प्र0 आजकल आप तांत्रिक ग्रह नक्षत्रों के चित्रों को बना रहे हैं इनके विषय में सविस्तार बतलाइये?

उ0 तांत्रिक चित्र जिसका आधार जन्मकुण्डली है, मेरे वर्तमान शोध का विषय है। इसको मैंने भारत सरकार के पास सीनियर फैलोशिप के लिये प्रस्तुत किया था। यह विषय धर्म, अध्यात्म, मंत्र, यंत्र, कुण्डली विज्ञान नक्षत्र–शास्त्र, रंग मनोविज्ञान फिजिक्स एण्ड केमिस्ट्री ऑफ कलर के साथ–साथ गणित की गण्नाओं के विधान से लक्षित है। आप ऐसा मानिये कि यह एक वैज्ञानिक खोज है। सिद्वान्त पौराणिक सूत्र तथा वैज्ञानिक प्रयोग के माध्यम से इसे पूर्ण किया जा रहा है। इस कार्य में कहीं भी चित्रकार की व्यक्तिगत रूचि को महत्व नहीं दिया जाता है। क्योंकि यह चित्रण का पूरा व्याकरण है। जिसके सही या गलत होने से चित्र के द्वारा निर्धारित परिणाम प्रभावित अवश्य होते हैं। इसलिये अनजाने में की गयी त्रुटि क्या कर देगी यह चित्र के प्रयोग के बाद ही पता चलेगा।

प्र0 इस प्रकार के बने हुये चित्रों से किसको लाभ होता है?

उ0 विज्ञान ने यह सिद्ध कर दिया है कि प्रकाश से हर जड़ व चेतन से विभिन्न प्रकार की किरणें निकलती हैं जिनका प्रभाव संपर्क में आयी हर चीज से होता है। यह हार्मोन प्रभाव ही जीवित व्यक्ति के हार्मोन में उथल–पुथल पैदा करते हैं। जिनका प्रभाव सम्पूर्ण शारीरिक क्रिया पर होता है। इस प्रकार दर्शक मेरे इन चित्रों के बार–बार संपर्क में आता रहे तो इन चित्रों में स्थापित योजना के अनुसार उस व्यक्ति और चित्र के बीच रियेक्सन प्रारम्भ हो जायेगा। जो उसके जन्म कुण्डली में व्याप्त ग्रहों को धीरे–धीरे बदलने लगेगा।

प्र0 क्या आपका यह चित्र किसी व्यक्ति के लिये सम्पूर्ण परिवार के लिये है?

उ0 मूल रूप से तो किसी व्यक्ति की समस्या के ऊपर चित्र बनाया जाता है, क्योंकि वो व्यक्ति परिवार के अन्य सदस्यों को भी अपने ग्रहों से परिलक्षित करता ही रहता है। इस प्रकार सम्पूर्ण परिवार पर उसके ग्रहों का प्रभाव पड़ने लगता है। इसे सामूहिक चेतन प्रक्रिया बताया गया इसलिये मेरे चित्र को परिवार के मध्य में ही लगाने का निर्देश है।

प्र0 आप अपना चित्र कहाँ और क्यों टंगवाते हैं?

उ0 मैं घर में अपने चित्रों को उस जगह टंगवाता हूँ जिसमें वो विशेष व्यक्ति व परिवार के अन्य सदस्य निकलने व बैठने की स्थिति बनाते हों। चित्र को इस प्रकार से टांगा जाता है कि उसके सामने पूर्व की

दिशा होनी चाहिये। जहाँ पर सूर्य या बिजली का प्रकाश सारे दिन पड़ना चाहिये। क्योंकि प्रकाश के प्रभाव में मेरे चित्र वैज्ञानिक दृष्टि से मृत्यु को प्राप्त कर जाते हैं। इनमें से कोई भी किरण नहीं निकलती है तथा रियेक्शन की प्रक्रिया रूक जाती है। चित्र अपना काम करना बंद कर देता है। इसलिये आवश्यक है कि चित्र पर बड़ा प्रकाश पड़ना चाहिये और उसके सामने पूर्व होना चाहिये। क्योंकि पूर्व में सूर्य निवास करता है। ग्रहों में सूर्य ऐसा ग्रह है जो किसी भी पुण्य को ताकतवर बना सकता है। सूर्य के लोप होने पर पाप ग्रह स्वतः ही बलवान बन जाते है, व तरह–तरह के कष्ट देते हैं। इस प्रकार मेरे चित्रों में प्रकाश का बहुत अधिक महत्व है।

प्र0 आपने अपने चित्र बनाने में तेल रंग में इसकी तकनीक को कई बार बदला है। ऐसा आपने क्यों किया?

उ0 जो चित्रकार अपनी स्वयं की शैली का निर्माण करता है, मौलिकता स्थापित कर लेता है। वो कभी भी किसी अन्य चित्रकार की तकनीक या विधि को नहीं अपनाता है। इस त्रुटि से उच्च प्रकार की मौलिकता समाप्त हो जाती है। जिस चित्रकार में मौलिकता का अभाव होता है, उसे चित्रकला के क्षेत्र में कभी सफलता नहीं मिलती उसकी मौलिकता चित्र में ही है, जिसे देखकर दर्शक चित्र को उस चित्रकार से तुरन्त जोड़ देता है। उदाहरण के लिये चित्रकार हुसैन को ही ले लीजिये उनके कार्य करने के ढंग में इतनी मौलिकता है कि उनके चित्रों को उस चित्रकार से तुरन्त जोड़ देता है। मैं पूर्व में बता चुका हूँ कि मैंने चित्रकला को एक साधन के रूप में अपनाया है। क्रमबद्ध

तरीके से पूरे 30 वर्ष कार्य करने के उपरान्त अपने को मौलिक चित्रकार के रूप में स्थापित कर पाया। मैं इस बात से सहमत हूँ कि मैंने अपने चित्र बनाने में समय–समय पर चित्र सृजना की तकनीक को बदला है। इसके पीछे एक मात्र कारण मेरी आवश्यकता और नवीनता की इच्छा ही रही है। वर्तमान में मै अकेले तेल रंगों से चित्र नहीं बना रहा हूँ। क्योंकि मै एक्रेलिक रंग और तेल रंग दोनों को मिलाकर मिक्स मीडिया में प्रयोगात्मक तकनीक से कार्य कर रहा हूँ। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि मै वार्निश को ही मीडियम बनाता हूँ। उसके साथ टर्पेन्टाइन या अन्य माध्यमों को नहीं मिलाता हूँ। जिसके कारण मेरे रंग बहुत गाढ़े लेप में चित्रों पर स्पष्ट चढ़े दिखलाई देते हैं। जैसे रंगों की परतें जमा हो गयी हों।

यहाँ मै तकनीक के विषय में यह भी बताना चाहूँगा कि सन् 1960 के आसपास मैने पेस्टल रंगों में भी कार्य किया है। इन रंगों के साथ–साथ ऑयल पेस्टल को मिलाकर प्रयोग किया है। जबकि उस समय ऐसा कार्य कोई नहीं करता था। मुझे अच्छी तरह याद है कि कई वर्षों तक मैं पेस्टल कलर में चित्र बनाता रहा था। मैने ऑयल पेस्टल को भी मिलाकर चित्र बनाये। इन सब कामों में मुझे आनन्द आता था। क्योंकि इनसे एक नई तकनीक उभरकर सामने आती है। संक्षेप में मै यही कहना चाहूंगा कि मै प्रयोगवादी दृष्टिकोण रखता हूँ, लेकिन अपने प्रयोगों को भारतीय चित्रकला की सीमाओं में बांधकर रहता हूँ। आज तक मैने कभी भारतीय चित्रण सर्जना की परम्परा का उल्लंघन नहीं किया है। चित्रण में भारतीयता को उसकी

आत्मा माना है। मेरा विश्वास है कि मेरे चित्र नवीनतम स्वरूप में भी भारतीय चित्रकला की परम्परा के श्रेष्ठ उदाहरण हैं–

1. डॉ0 सक्सेना पिछले 50 वर्षों से चित्र बना रहे हैं, उन्होंने चित्र बनाने का सिलसिला क्रमबद्ध तरीके से प्रारम्भ करके प्रत्येक 10 वर्षों के बाद अपने प्रयोगों को बदला है। इस प्रकार इन्होंने एक विधिवत् चित्रण को एक काल अवधि में बांधकर जब उसे पूर्ण कर लिया। तब उसके बाद अगले प्रकार के कार्य के लिये नई सोच के साथ अपना कार्य प्रारम्भ किया। जब उन्होंने एक प्रकार के काम को छोड़कर दूसरे प्रकार के काम को करना शुरू किया तो इन्होंने पिछले काम को छोड़ा नहीं, लेकिन किया भी नहीं। वे बताते हैं कि पिछले काम को करते हुये जो कुछ उस विधा में करने में असमर्थ रहे उसी को पूर्ण करने के लिये उन्होंने नई विधा को अपनाया। इस प्रकार उनके चित्र बनाने के प्रयास व चित्र बनाने की स्थिति में कई बार परिवर्तन देखे जा सकते हैं। इनमें हर बार एक नवीनता देखने को मिलती है। मैने इनके इन सभी कार्यों को देखा है और ऐसा मालूम पड़ता है कि जैसे–जैसे इनके कार्य का समय बढ़ा वैसे–वैसे इनके चित्रण में नवीनता के साथ–साथ विशेष आकर्षण उभरता चला गया।
2. डॉ0 सक्सेना बताते हैं कि उन्होंने सदैव सत्य यथार्थ और प्राकृतिक रूप को उन आकारों में प्रस्तुत किया जो वास्तव में उनका स्वरूप हैं। चित्र की आकृतियों में कभी यथार्थ को समाप्त नहीं किया गया। जड़ अथवा चेतन आकृतियां उसी आकार एवं स्वरूप में बनाई गईं जिसमें वो देखी व पहचानी जा सकती हैं। इन्होंने बताया कि वे मानते हैं कि यदि पदार्थ के, प्रकृति के और दृष्टि के वास्तविक स्वरूपों से हटकर

काल्पनिक एवं प्रतीकात्मक स्वरूपों की संरचना चित्र में कर दी जायेगी। दर्शकों को उन्हें समझने में कठिनाई होगी। इस प्रकार चित्र और दर्शक का सम्पर्क टूट जायेगा और चित्र अपनी बात नहीं कह पायेगा। वो इस बात पर बहुत जोर देते हैं कि जो भी चित्र बने वो स्वयं अपनी कहानी सुनाये और बनाने वाले को उसके विषय में कुछ न बताना पडे। अगर यह स्थिति होती है, तो चित्र सार्थक होता है। उनके चित्रों को देखकर इस बात की पुष्टि होती है। अतः वे कला के मुख्य उद्देश्य से ग्रस्त हैं, उन्होंने कभी सिद्धान्त को नहीं त्यागा, क्योंकि वो मानते हैं कि चित्रकार एक साधक होता है और अपनी साधना के द्वारा चित्र की सिद्ध करता हैं।

अध्याय चतुर्थ

डॉ० एस० बी० एल० सक्सेना चित्रकार के रूप में

- डा. सक्सेना के तेल रंग चित्रों की विधि व तकनीक का विवरण

डॉ० एस० बी० एल० सक्सेना एक चित्रकार के रूप में

डॉ0 एस0 बी0 एल0 सक्सेना का व्यक्तित्व अनेकानेक श्रेष्ठ गुणों, विवेकशीलता और कर्मयोग का एक इतना सुन्दर उदाहरण हैं कि वे अनेकों में एक हैं। श्रेष्ठ पिता के रूप में श्रेष्ठ पति के रूप में, श्रेष्ठ परिवार के मुखिया के रूप मे, श्रेष्ठ कर्तव्य से युक्त मित्र के रूप में, योग्य शिक्षक के रूप में तथा चित्रकार के रूप में जाने जाते हैं। उनकी विशेषता यह रही है कि जिसे अन्य सामान्य लोग नही कर पाए वह उन्होंने कर दिखाया। चित्रकार के रूप में भी उनका चित्र बनाने का अनुभव लगभग 50 वर्ष का है, क्योंकि इन्होंने अपने बाल्यकाल 12 वर्ष की आयु से ही चित्र बनाने आरम्भ कर दिया था। इस समय तक वे एक विद्यार्थी के रूप में चित्र बनाने की विद्या को सीखने आदि कार्य बहुत ईमानदारी से करते रहे थे। इन्होंने मुझे बताया कि वे प्रारम्भ से ही चित्रकारों के प्रति आदर भाव रखते थे, और उनसे सीखने की प्रबल इच्छा रहा करती थी।[1]

डॉ0 एस0 बी0 एल0 सक्सेना ने एक चित्रकार के रूप में अपना कार्य सन् 1962 से प्रारम्भ किया। यह इनके जीवन में महत्वपूर्ण वर्ष था। क्योंकि इसी वर्ष इन्होंनें एम0 ए0 की परीक्षा उत्तीर्ण करके डी0 ए0 वी0 कॉलेज, कानपुर मे चित्रकला के प्राध्यापक के रूप में कार्य प्रारम्भ किया था। कानपुर

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया

में आने के बाद डी0 ए0 वी0 कॉलेज के चित्रकला के विभागाध्यक्ष स्वर्गीय श्री सी0 बरतरिया जी के व्यक्तित्व से डॉ0 सक्सेना बहुत प्रभावित हुए। क्योंकि प्रो0 बरतरिया एक ख्याति प्राप्त चित्रकार थे। उन्होंने जे.जे. स्कूल ऑफ आर्ट बाम्बे से चित्रकला का डिप्लोमा किया था। वो जल रंगों मे बहुत सुन्दर चित्र बनाया करते थे।

डॉ0 सरन बताते है कि जब भी वे उनके घर पर जाते थे तो बरतरिया साहब चित्र बनाते मिलते थे। यह देखकर सरन के मन में नियमित चित्र बनाने की बात उपजी, और उन्होंने नियमित रूप से जलरंग से चित्रण प्रारम्भ किया। शुरू में इन्होंने पेस्टल कलर से चित्र संयोजन, चित्रण बनाया। वे बताते है कि उनके चित्रों का आकार 12 **X** 10 इन्च का रहा। वो यह भी बताते है कि ऐसे चित्र वह महीने मे 10 बना लेते थे। इस समय तक इनके चित्रों का विषय धार्मिक व सामाजिक रहा। इसमें इन्होंने नवेली वधु, वधु का मुँह दिखाई, नवेली वधु को पति की प्रतीक्षा, ग्रामीण क्षेत्र में औरतों का कुओं से पानी भरना, मॉ का बच्चे को आंचल में छिपाकर दूध पिलाना, पहाड़ी क्षेत्र के लोगों का भेड़ चराना, गाँव के मेले, नट के तमाशे आदि। अनेक विषयों पर छोटे आकार में चित्र बनाए क्योंकि डॉ0 सक्सेना ने भारतीय चित्रकला में अजन्ता की चित्रशैली को बहुत महत्व दिया। इसलिए वहाँ के रेखाकंन का आपने आज तक साथ नही छोड़ा है। इस प्रकार प्रारम्भिक चित्र आकृतियों के चारो ओर मोटी गहरी कत्थई रंग की रेखाए बनाई व आकृति में रंग सपाट भरे हैं। जब मैने डॉ0 सक्सेना से प्रश्न किया कि आपने अपने चित्रों में इस तकनीक को क्यों अपनाया? उन्होंने हँसकर बताया कि मै भारतीय चित्रकला का चित्रकार हूँ प्रारम्भ से आज तक भारतीय चित्रकला के प्रथम और अनिवार्य रूप, रेखा को प्रारम्भ से ही अपनाया। भारतीय चित्रकला की

आत्मा को जीवित रखे हूँ। आपने छोटे–2 चित्र सफेद कागज के माउन्ट पर चिपकाए थे। एक वर्ष में लगभग सौ के करीब ऐसे चित्र बनाए। इसके बाद इन्होंने बंगाल की वॉश टेकनीक में काम करना आरम्भ किया। क्योंकि ये प्रो0 छितेन्द्रनाथ मजूमदार जो इलाहाबाद विश्वविद्यालय में चित्रकला के प्राध्यापक थे। आपके सम्पर्क मे बार–2 आ रहे थे। इनके वॉश तकनीक में बने चित्रों को बनाते देखकर आपने बहुत कुछ सीखा। उनकी सलाह के अनुसार आप वॉश चित्रण करने लगे।[1]

डॉ0 सक्सेना बताते हैं कि प्रो0 मजूमदार एक सन्त व्यक्ति थे। जो भी उनके पास जाता वह उसे बहुत प्यार करते थे। सही दिशा निर्देश देना अपना कर्तव्य मानते थे। इसी बीच इनकी मुलाकात स्वर्गीय प्रो0 अजमत शाह से हुई, जो अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में चित्रकला विभाग में प्राध्यापक थे। उनका बहुत ही अच्छा काम था। इनसे सम्पर्क के बाद सरन ने 1965 तक जलरंग वॉश तकनीक में लगभग 14–15 चित्र ही बनाए। इनका आकार 30 X 20 इंच था। डॉ0 सक्सेना बताते है इस सारे काम की प्रदर्शिनी जून 1965 मे नैनीताल के प्लैट पर लगा दीं। इन्हें आश्चर्य हुआ कि दो–तीन दिन में ही घूमने आए पर्यटक सभी पेन्टिंग खरीदकर ले गए। चित्र अच्छे थे, परन्तु कीमत कम थी। छोटे चित्रों की कीमत दस रुपये प्रति चित्र थी, तथा बड़े चित्रों की कीमत मात्र 50 रुपये थी। इस प्रकार इनका जो पैसा चित्र बनाने में खर्च था वो मिल गया। मैने इनसे प्रश्न किया कि आपने इतनी कम कीमत क्यों रखी थी? उन्होंने सरलता से बताया कि मेरा उद्देश्य इन चित्रो को बेचकर धन अर्जन करना नहीं था। बल्कि जब तीन वर्षो मै इनका खर्च लगभग एक हजार रुपये आया था। इस खर्च की धनराशि प्राप्त

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना से वार्ता पर आधारित

करके आगे चित्र बनाना चाहते थे। वह चाहते थे कि यह चित्र लोगो के घर जाकर टंग जायें वो उस प्रदर्शिनी से बहुत खुश थे, शायद इनका जलरंग का कार्य यहाँ आकर श्रेष्ठ श्रेणी में आ चुका था।

1966 में पहली बार इन्होंने तेल रंग से अपने परिवार के कुछ सदस्यो के चित्र बनाये। इनकी इच्छा थी कि वो सबसे पहले अपनी स्वर्गीय पत्नी डॉ0 सुधाशरण का चित्रण तैयार करें। आपने ऐसा ही किया। आपने अपनी पत्नी का चित्र बनाया। इनकी पत्नी जितनी सुन्दर थीं, चित्रण उतना ही लावण्य युक्त सुन्दर आया। वे बताते है कि यह चित्र इन्होंने ड्राइंग रूम में टांग लिया था। यहाँ पर हर आने वाला व्यक्ति पूछता था कि आपने इतनी सुन्दर नारी को कहाँ देखा था। यह सुनकर आपको बड़ी प्रसन्नता होती थी। तथा वे यह कहते थे कि नारी मेरी पत्नी है। यह सब कुछ बताते हुए मैंने उनके चहरे पर प्रसन्नता देखी वो अपनी पुरानी जिन्दगी में खो गये।

प्रो0 एस0 बी0 एल0 सक्सेना ने तेल रंगों में अपनी एम0ए0 फाइनल की परीक्षा में लैण्ड स्केप बनाया था। जो उस समय के सभी परिक्षार्थियों के किए गये कार्य से श्रेष्ठ था। डॉ0 सक्सेना बताते है कि लोगो की यह धारणा है कि जल रंग में चित्र बनाना तेल रंग में बनाने से कठिन है। अतः तेल रंग में चित्रण करना अधिक सरल है। लेकिन डा0 सक्सेना ऐसा नहीं मानते जिसके लिए वे निम्न तर्क प्रस्तुत करते हैं।

1. चित्र बनाने में जल, तेल आदि अनेक माध्यम होते है। अतः माध्यम का काम रंगों की घुलनशीलता को प्रस्तुत करना होता है। जिस व्यक्ति को चित्र बनाने के मैालिक सिद्धान्तों का अच्छा ज्ञान होता है। उसके लिए किसी भी माध्यम में चित्र बनाना सरल होता है। माध्यम का चित्र से कोई सम्बन्ध नही होता है।

2 तेल रंगों से चित्रो का निर्माण करना बहुत कठिन होता है। क्योंकि उनमें स्वाभाविकता लाने के लिए चित्रकार को विशेष ध्यान करना पडता है। क्योंकि तेल रंग में बने चित्र दर्शक के मनोभाव से सीधे व जल्दी जुड़ते है। इसीलिए उनमें सन्तुलन और आकर्षण बिन्दु को निश्चित करना बहुत आवश्यक होता है। यह कार्य काफी अभ्यास के बाद होता है।

3 तेल रंगों के घनत्वीय प्रभाव इतने अधिक उत्तेजक होते है, कि भाव के मूल तत्वो को रंगों में संरक्षित रखना कठिन काम है। उदाहरण के लिए–क्रोध अथवा भय के भाव के लिए लाल काले रंग का प्रयोग अनिवार्य होगा।

4 ऑयल रंग के चित्रों में अप्रत्यक्ष प्रभाव (इन डायरेक्ट इफेक्ट) बहुत महत्वपूर्ण है उनके बचाने में चित्रकार को बहुत सावधानी रखनी पड़ती है। यह कार्य भी जटिल है जबकि जल रंग में अप्रत्यक्ष प्रभाव उनके घुलनशीलता और पारदर्शिता के कारण आ जाते हैं। अतः वहाँ यह कठिनाई नहीं आती।

एक चित्रकार के रूप में डा0 सक्सेना का लगभग 50 वर्ष का अनुभव है। चूंकि उन्होंने क्रमबद्ध तरीके से चित्र बनाकर जल रंग की पद्धतियों के अध्ययन के बाद तेल रंग के चित्रों का निर्माण शुरू किया। इसीलिए तेल रंग विधा, तेल रंग प्रयोग, तेल रंग पद्धति, तेल रंग तकनीक के विषय में वो पढ़ाते समय भी अपने छात्रों को गहन अध्ययन कराया करते थे। आप बताते हैं कि तेल रंग के चित्रों के रहस्य को उन्होंने गहराई में जाकर समझा है। उनका मानना है कि तेल रंग में श्रेष्ठ चित्र बनाना सरल नहीं है। अतः मैने प्रश्न किया किं आप अपने तेल रंग चित्रण की सम्पूर्ण प्रयोगात्मक प्रक्रिया व

विधि के बारे में सविस्तार बतलाइये? इस प्रश्न को सुनकर प्रसन्नता से उन्होंने निम्न विवरण प्रस्तुत किया।

डा. सक्सेना के तेल रंग चित्रों की विधि व तकनीक का विवरण-

डा0 सक्सेना ने प्रारम्भ में तेल रंग में जल रंग पद्धति को आधार बनाकर चित्र बनाने शुरू किये उनके प्रारम्भिक चित्रों में जल रंग की पारदर्शिता देखने को मिलती है। इस तरह का काम इन्होंने लगभग 10 वर्षो तक किया। जिसका कारण यह था कि इससे पहले एक दशक तक वह जल रंगों में चित्रण करते रहे हैं। आप पर जल रंग पद्धति का अभ्यास हावी हो गया था। जिसको छोड़ने में बहुत समय लगा था। ऐसा प्रतीत होता है कि जो चित्र लाल रंग में बने हुए हैं, उनमें रंगों का प्रयोग पतला किया गया है। नीचे का रंग ऊपर वाले रंग से बाहर झांकता दिखाई देता है। मूल रंग लाल, पीला, नीला है।

अपने चित्रों का रंग स्वरूप (फार्म आफ कलर्स) माना तथा इन तीनों रंगो का मिश्रण हरा, बैगनीं और नारंगी रंगो की सहायता ली है। वे तेल चित्र बनाते समय प्रारम्भ से आज तक रंगो के मिश्रण (मिक्सिंग आफ कलर) से बचते हैं। उनकी चित्रण विधि में मौलिक रंगो की स्पष्ट छाप देखने को मिलती है। प्रारम्भिक तेल चित्रों में भी यही विधा व तकनीक अपनाई है। कुछ ऐसे चित्र भी मिले हैं, जिसमें जल को पारदर्शी (ट्रान्सपेरेन्स) बनाया गया है। यह काम सरल नहीं है। विशेष तौर पर ऑयल पेन्टिंस में प्रारम्भ में तेल चित्र माध्यम से दृश्य चित्र बनाने का काम बहुत समय तक किया। जो लगभग 6–7 वर्ष तक चला। जिसमें इन्होंने 50–60 चित्र बनाये होंगे। ऐसा लगता है कि डा0 सक्सेना ने किसी भी माध्यम में जिस पद्वति व तकनीक को अपनाया उसे पूर्ण सफलता के साथ समझा व किया। उनका यह मानना

है कि वे सदैव हर काम को बहुत समझ कर और न जानकारी की स्थिति में श्रेष्ठ व्यक्तियों से इसका ज्ञान प्राप्त कर प्रारम्भ करते हैं। बीच–बीच में अपना कार्य श्रेष्ठ चित्रकारों से मूल्यांकित भी कराते हैं। उन्होंने बताया कि सन् 1968–70 के बीच उन्होंने प्रो0 रामचन्द्र शुक्ल (बी0एच0यू0) वाराणसी स्वर्गीय डी0 पी0 धोलया गोरखपुर, रामगोपाल विजय वर्गीय जयपुर से चित्र बनाने की विधि व तकनीक का समय समय पर संपर्क करके उनसे तेल रंग चित्रण की गहराई को सीखने का बहुत प्रयास किया। जिसके फलस्वरूप उन्हें पता चला कि ऑयल चित्रण में पकड़ (ग्रिप) पैदा करने के लिए मोटे रंगों का प्रयोग आवश्यक होता है तथा पारदर्शिता चित्र में इस गुण को कम करती है। यह बात इनकी समझ में इसलिए आयी थी क्योंकि इन्होंने यूरोपिय चित्रकार रैफेल, के लैण्ड स्केप्स का मूल्यांकन किया। जिन्हें वे आज भी सर्वश्रेष्ठ मानते हैं, उन चित्रों में भी इसकी सत्यता प्रमाणित हुई।

डा0 साहब पतले पद्धति के स्थान पर गहरे, मोटे, गाढ़े तेल रंग का अपने चित्रों में प्रयोग करना आरम्भ किया। धीरे–धीरे यह विधि इन पर इतनी हावी होती चली गई कि वर्तमान में बहुत ही मोटे रंगों की परते जमाते हैं। यही कारण है इनके चित्रों में 6–7 परते (लेयर्स आफ कलर्स) देखने को मिलते हैं। रंग लगे हुए मालूम नहीं पड़ते बल्कि ऐसा मालूम होता है कि चिपकाया गया है। डा0 सक्सेना बताते हैं कि तेल चित्रण में जो रंगों की प्रयोग विधि अपनाई है, वह मौलिक है, अपनी है। जो इनकी कार्य शैली (वाशिंग स्टाइल) मानी जाती है। जिसे देखकर किसी भी प्रर्दशिनी में बिना नाम पढ़े वे लोग उनका चित्र पहचान लेते हैं जिन्होंने उनके चित्र पूर्व में देख रखे हैं। एक मौलिक चित्रकार के रूप में इस गुण ने भी अन्य चित्रकारों से अलग कर रखा है।

डा0 सक्सेना ने बताया कि उन्होंने तेल चित्र कागज पर नहीं बनाये। प्रारम्भ में उन्होंने अधिकांश चित्र हार्ड बोर्ड पर बनाये और इसके बाद प्लाई वुड पर भी चित्र बनाये। उसके बाद कैनवास बोर्ड पर बनाये। आपने इसको अपनी विधि का एक अंग माना क्योंकि कढ़ी सतह पर ऑयल रंग से चित्र बनाना उन्हें संतोषजनक लगा। क्योंकि ब्रश फोर्स इस कठोर सतह पर बहुत प्रभावित रूप से उभर कर आता है। उन्होंने यह भी बताया कि तेल रंग से बने चित्रों में जितना मोटापन, अपारदर्शिता बनाई रखी जानी है, उसके लिए चित्र का आधार मजबूत व मोटा होना चाहिए। यह काम भी उन्होंने प्रयोगात्मक विधि को समझने के लिए किया व धीरे धीरे कैनवास कपड़े पर चित्र बनाने की विधि को अपनाया। इनके प्रारम्भ में बने चित्र हार्ड बोर्ड, प्लाईबोर्ड, कैनबास बोर्ड पर दिखाई पड़ते हैं। वह मानते थे कि बड़े आकार का चित्र नहीं बनाना चाहिए, इसमें सन्तुलन कठिन होता है। इस प्रकार उन्होंने प्रारम्भ में छोटे 12 X 10 इंच के आकार को बढ़ाते–बढ़ाते 60 X 48 इंच के आकार में चित्र बनाये हैं। लेकिन अपने चित्रण की विधि व तकनीक के सैद्धान्तिक पक्ष को प्रारम्भ से लेकर आज तक बहुत सरलता से पकड़ा है। वे चित्र बनाने के प्रारम्भ में सीधे ब्रश से आकृति का खाका तैयार कर लेते हैं और फिर जगह–जगह समान रंग की स्थिति को लाल, पीला और नीला रंग एक एक करके भरते हैं इस प्रकार रंगो की पूर्ती का इनका अपना विधान है। आकृति को इसके बाद महत्व देते हैं। इतना कर लेने के बाद चित्र में रंग संयोजन के लिए व भाव को केन्द्रित करने के लिए नारंगी बैगनी और हरा रंग भी खूब प्रयोग करते हैं। मैंने इनके चित्रों में देखा कि वे अपने एक चित्र में प्रायः हल्का व नीला रंग से तीस प्रतिशत कैवास भर देते हैं, और तीस प्रतिशत नारंगी प्रयोग करते हैं।

बीस प्रतिशत लाल रंग का प्रयोग करते हैं। अतः पीला तथा अन्य रंग सब मिलाकर बीस प्रतिशत प्रयोग करते हैं। अगर यह कहा जाय कि उनके चित्रों में नारंगी रंग का बाहुल्य है तो अनुचित नहीं कहा जायगा। इस विशेष स्थिति में मैंने प्रश्न किया, कि आप चित्रों में नारंगी रंग को महत्व क्यों देते हैं? उन्होंने उत्तर में बताया कि नारंगी रंग में आध्यात्म है। वह धर्म चिन्ह का प्रतीक है। क्योंकि लाल, पीला, नारंगी रंग है। इस प्रकार इस रंग में ब्रह्मा, विष्णु दोनों की रंगत पायी जाती है। नीला भी इसलिए प्रयोग किया गया है, कि उसमें भगवान शंकर का स्वरूप निश्चित है। उनकी यह बात सुनकर ऐसा लगता है कि वो चित्रकार के साथ–साथ आध्यात्मिक साधना के आराधक हैं।

मुझे नहीं याद आता कि रंगों के विषय में कहीं इस प्रकार के प्रसंग देखने को मिलते हैं। इसलिए मैंने इस बात पर प्रश्न किया? तब उन्होंने बताया कि पुराण व वेदों में देवताओं के रंग निर्धारित किये गये हैं। जिन लोगों को इसका ज्ञान है, वे ही आध्यात्म से जुड़कर रंग की व्याख्या कर सकते हैं। इस प्रकार रंग पद्धति के प्रयोग में इनकी एक मौलिक धारणा देखने को मिलती है। जो भारतीय चित्रकला की आत्मा कही जा सकती है। जैसा कि आपने पूर्व में बताया है कि वे भारतीय चित्रकला के चित्रकार हैं, आपकी यह बात प्रमाणित होती है।

डा0 सक्सेना की शैली मौलिक तकनीक से बंधी हुई दिखाई देती है। ऑयल रंग चित्रण में मोटे रंगों को चिपकाना लाल पीला रंग को नीले रंग के साथ जोड़ना लेकिन इस कार्य में एक विशेषता देखने को मिलती है रंग आपस में जुड़े हुए हैं क्योंकि वे एक दूसरे से अलग कहीं दिखलाई नहीं पड़ते लेकिन एक दूसरे में प्रवेश करते हुए भी नहीं दिखाई पड़ते हैं। मैंने

अनेकानेक चित्रकारों के चित्र देखे हैं ऐसा कहीं देखने को नहीं मिला क्योंकि अधिकांश चित्रकारों ने जोड़ने के साथ साथ प्रवेश कराते हुए उल्टे घिसकर काम किया है मैंने इनसे प्रश्न किया कि आपने इस रंग की तकनीक को इस प्रकार से क्यों अपनाया है?

उन्होंने उत्तर दिया कि चित्रकार अगर वास्तव में मौलिक होगा और लम्बे समय का अनुभव होगा, तो निश्चित रूप से ही वो अपनी एक अलग पहचान बना लेगा। जिसके फलस्वरूप उसकी चित्रण विधि और तकनीकिय प्रयोग उसके अपने अनुभव के आधार पर एकदम नवीन होंगे। इसी कारण मेरे चित्रण में ये दोनों बातें एकदम नवीन हैं। जो पूर्णरूप से मेरी शैली को प्रस्तुत करने में सफल है।

यहाँ पर डा0 सक्सेना ने कुछ विशेष महत्वपूर्ण रहस्य का उद्घाटन किया। उन्होंने बताया कि सन् 1975 से लेकर दो वर्ष तक ऑयल चित्र बनाने में ब्रश के स्थान पर चाकू अथवा नाईफ का अनेक चित्रों में प्रयोग किया। इस चित्र का विषय उनके अपने पारिवारिक जीवन से सम्बन्धित है।

उन्होंने बताया कि एक बार उनकी बेटी जिसकी आयु छः महीने की थी। वह इतनी अधिक बीमार थी, कि उसका बचना नामुक्किन था। आप और आपकी पत्नी बच्ची को गोद में लेकर एक पूरी रात बैठे रहे। इस समय उनको जो पीड़ा का अनुभव हुआ उस अनुभव का चित्र हार्ड वोर्ड पर चाकू अथवा नाईफ पद्धति से बनाया है। डा0 सरन के इस चित्र को जब मैंने देखा तो उसमे पाया कि रंग सजीव व ओरिजनल है मिश्रित नहीं किया गया है। इस पद्वति में इन्होंने कुल मिलाकर 5–6 चित्र ही बनाये। आपने बताया जब वे इस प्रकार का कार्य कर रहे थे, तो विशेष आनन्द नहीं आ रहा था। अतः विचार किया जब नाईफ से चिपकाकर चित्र बनाना है तो क्यों न अगूंठे

व उंगली से इस काम को किया जाय। आपने बताया कि यह विचार आते ही उन्होंने चाकू नाईफ से चित्र बनाना बन्द कर दिया। अब कैनबास, हार्डबोर्ड पर अगूंठे व उगंलियों से लगाकर चिपकाने लगे। इस पद्धति को इन्होंने (थम्ब टेकनिक) बताया है। इससे सम्बन्धित कई चित्र आपके पास अब भी हैं। इन चित्रों में इनकी पूर्व की चली आ रही शैली में कुछ भिन्नता दिखलाई पड़ती है। जो विशेषता रही है, एक रंग दूसरे में प्रवेश न करे। यह बात इस तकनीक के विषय में कम होती दिखलाई पड़ी। अंगूठे से रंग लगाकर उंगली से रंग फैलाना दो रंगों के आकार को अलग नहीं कर सका है।

डा0 सक्सेना तुलिका व उसके प्रयोग के विषय में भी विशेष धारणा रखते हैं। उनका मानना है कि तुलिका चित्रकार का शस्त्र होती है, रंग का प्रयोग उसमें से निकलने वाली गोली होती है। कैनवास विषय वस्तु की भूमि होती है। अगर शस्त्र को चलाना न आये तो गोली निकले न निकले वो लक्ष्य को भेदन कर पाय न कर पाय और अगर कर ले तो इसमें शंका बनी रहती है। उन्होंने बताया यह सत्य उन्हें प्रारम्भ से ही पता था। इसलिए उन्होंने तूलिका पर पूरा अधिकार प्राप्त कर लिया है। विशेष बात उन्होंने यह बताई कि उन्होंने नाईफ, अगूंठा जैसे औजारों को चित्र बनाने में प्रयोग किया है यह सब प्रयोग करके देखे। आपने इस विषय में बताया कि सन् 1985 के बाद उन्होंने ऐसे प्रयोग बन्द कर दिये व तेल रंग चित्रण में सेबिल हेयर (Sable Hair) मुलायम बालों वाला ब्रश का ही प्रयोग आज तक करते आ रहें हैं। उनसे पूछा गया कि ऑयल पेंटिग को कड़े बाल (हाँग हेयर) से नहीं बनाया? उन्होंने बताया कि मुझे रंगो को मिश्रित नहीं करना पड़ता और न मैं ऐसा करता हूँ। इसलिए कड़े बालों वाली तूलिका मेरे लिए

बेकार है। मैंने उन्हें काम करते देखा है क्योंकि मैं अपने शोध कार्य से इनके पास लगभग 8–10 बार गया हूँ। इस प्रकार पिछले दो वर्षों में मुझे सदैव यही देखने को मिला है। जब भी चाहे प्रातः का छः बजे हो डा0 सक्सेना चित्र बनाते मिले। मैं बहुत अचम्भित हुआ जब ऐसा बार बार होता रहा, तो मैंने प्रश्न किया कि कृपया बताये आपकी दिनचर्या क्या है? आप इतने सरल व सीधे इंसान हैं कि आप से बात करने में खुशी मिलती है, परन्तु डर भी लगता है, क्योंकि उनका व्यक्तित्व गंभीर है और वो अपने काम से काम रखते हैं, व व्यर्थ में कुछ न बोलते हैं फिर भी मैने पूछ लिया मुझे आश्चर्य हो रहा था कि 70–71की आयु में पहुँचकर एक व्यक्ति जागकर चित्र बनाने में कैसे संलग्न हो जाता है।

मेरे इस प्रश्न का उत्तर देते हुए उन्होंने बताया कि मैं प्रातः 5 बजे जागता हूँ और रात्रि में 12 बजे सोता हूँ ऐसा मैं 20 वर्ष की आयु से कर रहा हूँ। अब यह मेरी आदत बन गयी है कि मैं पाँच घंटे सोता हूँ व पाँच घंटे चित्र बनाता हूँ और पाँच घंटे पढ़ता लिखता हूँ। शेष बचे 9 घंटे में अन्य जीवन सम्बन्धी एवं सामाजिक आदि कार्यों को पूरा करता हूँ जिसमे नियमित एक घंटा सुबह एक घंटा दोपहर में और 1 घंटा रात्रि में पूजा–पाठ, मंत्र–जाप और तांत्रिक क्रियाओं को नियमित 40 वर्षों से करते आ रहा हूँ। इस प्रकार मैंने पाया कि डा0 सक्सेना एक कर्म योगी हैं। वे जीवन के अर्थ को भली प्रकार समझते हैं। उसकी महत्वपूर्ण कीमत जानकर क्षण–क्षण का सदुपयोग करते है तथा अपनी जीवन यात्रा पूर्ण कर रहे हैं। 1 मार्च से अप्रैल 2007 तक मैं उनके पास दो बार गया हूँ। मैं उनके पास सारे दिन रहता व होटल सिर्फ सोने जाता था। मैंने उनकी इन बातों में चित्र 5 घंटे बनाने की बात सही पायी। जो प्रातः 1–1 घंटा करके 5 घंटे चित्र अवश्य

बनाते हैं। ये चित्रकार के रूप में एक साधक हैं और साधना स्वरूप लगे रहते हैं।

सन् 1975 से 1981 तक डा0 सक्सेना ने अपने चित्रों का विषय अधिकांश राजनैतिक घटना क्रम को ही बनाया। जब स्वः श्रीमति इन्दिरा गाँधी ने देश में आपात काल स्थिति घोषित की। तब समाज उससे तृषित दिखलाई पड़ा, तो इस अवस्था ने सहृदय कवि, बुद्विजीवियों, लेखकों और चित्रकारों को सीधा प्रभावित किया था। जैसा डा0 सक्सेना बताते हैं, कि इस भयानक स्थिति का उनके चित्रकार मन पर गहरा प्रभाव पड़ा। उन्होंने उस समय से लेकर अगले 5 वर्षों तक राजनैतिक परिस्थितियों, प्रजातंत्र की व्यवस्था नेताओं का आपस में लड़ना, कांग्रेस का निराशा से अंधकार में डूब जाना, जनता द्वारा जय प्रकाश नायक जी को महत्व देना आदि आन्दोलनात्मक जो स्थिति पैदा हुई उसका डा0 सक्सेना पर बहुत गहराई से प्रभाव पड़ा। इन विषय स्थिति को ही उन्होंने अपने चित्रों का विषय बनाया, लेकिन इस समय के इनके जो चित्र हैं। इनमें प्रतीकात्मक शैली (सिम्बोलिक स्टाइल) ज्यादा देखने को मिलती है। इस समय के चित्र मे किसी न किसी रूप में कहीं न कहीं उल्लू को देखा जा सकता है। जब मैंने उल्लू चित्रण के बारे में जानकारी चाही, कि आपने उल्लू को अनिवार्य रूप से क्यों बनाया? आपने उत्तर देते हुऐ बताया कि व्यवहारिक रूप में उल्लू एक गाली है, जिसका तात्पर्य मूर्खता वाले व्यक्ति से लगाया जाता है। परन्तु वह इससे सहमत नहीं है।

आपका मत है कि उल्लू समझदार व चालाक पक्षी है वही एक ऐसा जीव है जिसे ईश्वर ने रात्रि के घोर अंधकार में देखने की शक्ति प्रदान की है। डा0 सक्सेना ने बताया कि इस बात को मानते हुए उन्होंने अपने चित्रों

में उल्लू को राजनीति से जोड़ते हुए प्रतीकात्मक रूप में चित्रों में बनाया है। विषय की गहराई में बताते हुए उन्होंने कहा वर्तमान कलयुग में सबसे बड़ा महत्व धन का है। व्यक्ति उसे प्राप्त करने के लिए पाप से युक्त हर काम करता है। अतः लक्ष्मी को प्राप्त करना चाहता है, जबकि लक्ष्मी बहुत विवेकशील मानी जाती है। धर्म ग्रन्थों मे पाया जाता है कि अगर वह पापी के यहाँ पहुँच भी जाय तो उसकी बुद्धि नाश कर देती है। इसी प्रकार जब वो पुण्य आत्मा के पास पहुँच जाय तो दान, पुण्य, धर्म, आदि कराती है। उसकी मुक्ति कराती है। विशेष बात यह है कि लक्ष्मी का वाहन उल्लू है, जो उनको गलत स्थान से तुरन्त उड़ाकर वापस ले जाता है।[1]

डा0 सक्सेना बताते हैं उन्होंने चित्रकला के ग्रन्थों को पढ़ने चित्र बनाने के स्पष्ट अनेक धार्मिक, आध्यात्मिक तंत्र सम्बन्धी ग्रन्थ और रहस्यमय विज्ञान के ग्रन्थों का बहुत लम्बे समय से गहराई के साथ–2 अध्यन किया है। जिसके कारण सन् 1975 के बाद उनके चित्रों में ये दर्शन स्पष्ट दिखाई पड़ता है। इस प्रकार मेरा मानना है कि डा0 सक्सेना श्रेष्ठ विद्वान व उच्च कोटि के चित्रकार ही नहीं वरन्, वे उच्च कोटि के साधक, चिंतक और धर्मनिष्ट व्यक्ति हैं। ऐसा लगता है कि वे हर विषय में ज्ञान रखते हैं और इस ज्ञान को उन्होंने अपने चित्रों में अवश्य प्रस्तुत किया है।

सन् 1982 में डा0 सक्सेना की चित्रकला में एक दम बड़ा परिवर्तन देखने को मिला है। उन्होंने बताया कि वे 1970 से ही प्रो0 रामचन्द्र शुक्ल हिन्दु विश्वविद्यालय वाराणसी के संपर्क में आने के बाद उनके साथ बहुत घनिष्टता से जुड़ते चले गये। अब तो वह उनके परिवार के सदस्य के रूप में जाने जाते हैं। उन्होंने अब समीक्षावादी दर्शन को अपनी चित्रकला का

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया

आधार बना लिया। जब आपने मुझे यह बात बताई तो मैंने इनसे पूंछा कि आप समीक्षावादी चित्रकार कैसे बन गये? समीक्षावाद होता क्या है? इस प्रकार इन्होंने निम्न प्रकार से समीक्षावाद के विषय विस्तार से बताया–

उन्होंने बताया कि प्रो0 रामचन्द्र शुक्ल ने समीक्षावाद को जन्म दिया है। कलाकार रामचन्द्र शुक्ल स्वयं किसी एक निश्चित शैली के आधार पर चित्र नहीं बनाते हैं। उनके चित्रों की टेक्निक विविधता देखकर यही कहना पड़ता है, कि वे यर्थात में एक प्रयोग वादी कलाकार हैं। उनका मत है कि कलाकार को कभी किसी एक शैली या टेक्निक से बंधना नहीं चाहिए। जिस दिन कलाकार ऐसा करना आरम्भ करता है, वह कला स्वाधीन नीरस हो जाती है। कलाकार शैली या टेक्निक का गुलाम नहीं होता। शैली व टेक्निक कलाकार बनाता है, शैली व टेक्निक से अधिक महत्व विषय वस्तु का है। कल्पना तथा क्रियात्मक प्रवृति उसके बल पर कलाकार अपनी कला को ऊँचे स्तर पर उठा सकता है।

समाज को नित नई मंजिल पर पहुँचा सकता है। कला सुन्दर भविष्य तक पहुँचने की सीढ़ी तैयार करती है एवं उसके आधार पर समाज अपने विकास की चरम सीमा पर पहुँचता है। यही कारण है कि कलाकार शुक्ल के चित्र अति काल्पनिक तथा निर्वाणवादी हो गये हैं। उनकी प्रत्येक रचना में नवनिर्माण का दर्शन होता है, इनके चित्रों का विषय ही कल्पना तथा नवरूप हो गया है। यह चित्र देखने में बड़े अजीब लगते हैं। उनको समझना तो बहुत कठिन मालूम पड़ता है, क्योंकि समझने के लिए उन चित्रों में कुछ होता भी नहीं वे तो कलाकार की नई रचना मात्र होते हैं। उन्हें देखकर आनन्द मात्र ही लिया जा सकता है। कलाकार की रचना से हिलमिलकर वही गीत गाया जा सकता है, जो सदैव मनुष्य को नवजीवन का संदेश देता

रहता है। इन चित्रों में चित्रकार की मनोस्थिति का दर्शन अवश्य हो जाता है।

श्री शुक्ल की कला का मुख्य विषय यही कल्पना और नवीनता है। अन्य विषयों पर भी इनके काफी चित्र मिलते हैं। यह चित्र प्राचीन भारतीय चित्रकला शैलियों से बहुत कुछ प्रभावित लगते हैं। जैसे– 'बलि वध' अजन्ता शैली से 'हंसदूत' तथा प्रेम–पुष्प कांगड़ा शैली से तथा कला मान वाले चित्र सरिलिज्य शैली से।

समीक्षावाद का प्रथम चित्र श्रीकृष्ण की तरह आपातकाल में बना। यही चित्र उन दिनों राज्य ललित कला अकादमी की वार्षिक कला प्रदर्शिनी में प्रदर्शित हुआ, तो दर्शक चौंक उठे मुँह तथा कलम पर लगे ताले की वजह से कोई कला समीक्षक एक शब्द बोलने व लिखने का साहस नहीं जुटा सका। आपात काल के बाद इस कला शैली से प्रभावित होकर अनेक चित्रकारों की भीड़ शुक्लजी के साथ लग गई। आज देश के प्रमुख नगरों में 'समीक्षावाद' की प्रदर्शिनियाँ लग चुकी हैं। प्रदर्शिनियों में लगी जनता की अपार भीड़ ने समीक्षावादी कलाकारों के मनोबल को बढ़ाया है।

समीक्षावाद में कलाकारों ने तीखी व सशक्त कला चित्रण के द्वारा समाज के उत्पीड़कों की खबर लेनी चाही, जो समाज को बल प्रदान करे तथा उत्पीड़कों का पर्दाफाश करे। इसी कारण समीक्षावादी कलाकारों ने पश्चिमी देशों की आधुनिक कला की नकल पर आधारित कला का तिरस्कार कर प्रतीकात्मक तथा व्यंगात्मक शैली के माध्यम से शोषकों तथा भ्रष्टचारियों की खुली समीक्षा प्रस्तुत की है। प्रो0 शुक्ल हमेशा किसी सृजनात्मक कार्य में भीड़ का इंतजार नहीं करते बल्कि रास्ता खुद ढूढ़ते हैं और अकेले चल देते

हैं। अतः इतना अवश्य है कि रास्ते में इनके साथ भीड़ हो जाती है, रचना 'सृजन' काशी तथा समीक्षावाद इसके प्रमाण हैं।[1]

समीक्षावाद भारत में आधुनिक कला का प्रथम स्वदेशी आन्दोलन है। यह पाश्चात्य आधुनिक कला के आन्दोलनों से अपनी भिन्न पहचान रखता है। यह न तो पाश्चात्य आधुनिक कला से प्रभावित है, न ही उससे कोई प्रेरणा ग्रहण करता है। इसकी मूल प्रेरणा अपने देश की वर्तमान सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, वैचारिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियाँ हैं। इसका प्रमुख प्रयास है कि भारतीय आधुनिक कला को पश्चिमी आधुनिक कला की परिपाटी से मोड़ कर मौलिक पक्ष पर अग्रसर करना। कला को व्यक्तिवादी सीमा से निकालकर समाजोन्मुख बनाना, रहस्यवादी जामें से निकालकर उद्देश्य परक बनाना।

अनावश्यक जटिलताओं से निकलकर एक सरल स्पष्ट तथा प्रभावशाली भाषा का रूप देना कला को वर्ग विशेष के आधिपत्य से दूरकर सर्वसाधारण के लिए सुलभ कराना। कला की प्रदर्शिनियों को बड़े–2 नगरों की सीमा से बाहर निकालकर छोटे–2 नगरों, कस्बों, गाँवों, मजदूर बस्तियों तक ले जाना। उनके उद्बोधन का साधन बनाना। इस आन्दोलन का कोई राजनैतिक उद्देश्य नहीं है, बल्कि कला को सामाजिक जीवन का एक प्रमुख तथा प्रभावशाली अंग बनाना है। यह आन्दोलन कला को नई दिशा देने के लिए है।

डा0 सरन बिहारी लाल सक्सेना एक मौलिक चित्रकार भी हैं। उन्होंने 'वॉश पद्वति' में चित्र बनाना प्रारम्भ किये। बाद में चित्रों को टेम्परा पद्धति में जल रंगो से बनाया। प्रारम्भिक चित्रों का विषय सामाजिक रहा। फिर वे दृश्य

---

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना से वार्ता पर आधारित

चित्रण में रुचि लेने लगे। उन्होंने क्रियेटिव दृश्य चित्रण बनाये। सन् 1985 से प्रो0 रामचन्द्र शुक्ल के समीक्षावादी दर्शन के प्रभाव में और समीक्षावादी विषयों के अधीन सामाजिक कुरूतियों और राजनैतिक, अनैतिकता पर अनेक चित्र बनाये। इमरजेंसी के दौरान उनका बनाया गया चित्र (TERROR OF EMERGENCY) ने दर्शकों को बहुत आकर्षित किया। उन्होंने सदैव अपने चित्रों की एकल प्रदर्शिनियाँ आयोजित की सन् 1960 में नैनीताल, 1961 में एटा, 1965 कानपुर, 1995 नई दिल्ली, 1996 में कलकत्ता में तथा कला मेला–दिल्ली, कलकत्ता मुम्बई, बंगलौर में आयोजित की । उन्होंने अपने चित्र राष्ट्रीय ललित कला अमृतसर पंजाब में सन् 1992 में भेजे। राज्य ललित कला अकादमी लखनऊ में उनके 1993, 94, 95 और 1996 में चित्र चयनित हुए। डा0 सक्सेना राष्ट्रीय चित्रकला प्रदर्शिनी, पटियाला और अमृतसर में MEMBER OF JURY भी रहे।

डा0 सरन बिहारी लाल सक्सेना कला इतिहास की समीक्षा एवं आलोचना, प्रशिक्षण और सौन्दर्यशास्त्र के अध्ययन एवं अध्यापन पर विशेष दक्षता रखते हैं। वे चित्रकला विषय में विशेषज्ञ हैं और अकादमिक कार्यों प्रश्न–पत्र निर्माण, मूल्यांकन, पी–एच0डी0 तथा डी0 लिट्0 उपाधि हेतु मूल्यांकन एवं मौखिकी परीक्षा आदि क लिए निम्न विश्वविद्यालय से सम्बद्धः–

इन्दिरा कला एवं संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़ मध्यप्रदेश, श्रीहेमबती नन्दन बहुगुणा, श्रीनगर गढ़वाल विश्व विद्यालय, श्रीनगर–गढ़वाल (उ0प्र0), पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला (पंजाब), श्री साहूजी महाराज विश्वविद्यालय कानपुर (उ0प्र0), चौ0 चरण सिंह विश्वविद्यालय मेरठ (उ0प्र0), राजस्थान विश्वविद्यालय, कुरूक्षेत्र (हरियाणा), जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर (मध्य

प्रदेश), इलाहाबाद विश्वविद्यालय इलाहाबाद (उ0प्र0), गुरूनानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर (पंजाब) कुमाऊँ विश्वविद्यालय नैनीताल (उ0 प्र0), उदयपुर विश्वविद्यालय उदयपुर (राजस्थान), डा0 भीम राव अम्बेडकर विश्वविद्यालय आगरा (उ0प्र0), कोटा मुक्त विश्वविद्यालय कोटा (राजस्थान), पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर (उ0प्र0), भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर ((बिहार), जबलपुर विश्वविद्यालय, जबलपुर (मध्यप्रदेश), अजमेर विश्वविद्यालय, अजमेर (राजस्थान), सुखडिया विश्वविद्यालय उदयपुर तथा विश्वविद्यालय, रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली (उ0प्र0) तथा ललि कला की विभिन्न स्वशासी संस्थायें।

डा0 सरन बिहारी लाल सक्सेना ने काशी हिन्दु विश्वविद्यालय, वाराणसी दयालबाग शैक्षिक संस्थान आगरा, हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल, साहूजी महाराज विश्वविद्यालय कानपुर, बरेली कॉलेज, बरेली आदि के चित्रकला विभागों में शिक्षा अनुदान आयोग द्वारा संचालित कार्यक्रमों में भाग लिया है। वे अनेक शोध–पत्रिकाओं के सलाहाकार समिति के सदस्य है।

वे वर्ष 1988, 1992, 1993, 1996, 1997 और 1998 में साहू जी महाराज विश्वविद्यालय, कानपुर के केन्द्रीय मूल्यांकन के परीक्षा नियंत्रक बरेली में रहे हैं। बर्श 1995 में वे कुमाँऊ विश्वविद्यालय, नैनीताल के लिए केन्द्रीय मूल्यांकन के परीक्षा नियंत्रक बरेली में रहे हैं। और 1999 तथा 2001 में वे एच0 एन0 विश्वविद्यालय (गढ़वाल) के केन्द्रीय मूल्यांकन के परीक्षा नियंत्रक, बरेली में रहे हैं। उनके द्वारा लिखित वर्ष 1987 में प्रकाशित "**कला सिद्वान्त और परम्परा**" पुस्तक अनेक विश्वविद्यालयों में प्रयोग में लाई जा रही है दूरदर्शन केन्द्र लखनऊ बर्ष 1990 में उनका साक्षात्कार चित्रकार के रूप में अपने "कला और कृति" कार्यक्रम बनाकर भारतवर्ष में प्रसारित किया

दूरदर्शन बरेली ने सन् 2001 में उनका साक्षात्कार ''ललित कलाओं का शिक्षण और उनका अनुभव'' विषय पर कलाकृति तैयार करके दूरदर्शन पर प्रसारित किया [illegible]।

अध्याय पंचम

डॉ० एस० बी० एल० सक्सेना चित्रकला के एक अध्यापक के रूप में

- शोध का शिक्षण
- कला शिक्षण के अनुभव
- कला शिक्षण मे कला शिक्षक का व्यवहार
- कला शिक्षक के रूप में सुधार के सुझाव
- स्वतंत्र भाव चित्रण
- चित्रों को बनाने की विधि एवं तकनीक

डॉ० एस० बी० एल० सक्सेना चित्रकला के एक अध्यापक के रूप में

डॉ0 सक्सेना ने प्राथमिक शिक्षक के रूप में कार्य प्रारम्भ किया था। लेकिन यह उनकी असीम प्रतिभा एवं इच्छा शक्ति थी कि वह शिक्षा के उच्च पायदान को छूने में सफल रहे। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में उतर कर उन्होंने नवीन आयाम विकसित किये और चित्रकला विषय में अपना शोध प्रस्तुत किया जो कि भारत में चित्रकला का प्रथम शोध ग्रन्थ था। यह उनकी विषय के प्रति आसक्ति एवं समर्पण को ही व्यक्त नहीं करता, बल्कि बताता है, कि चित्रकला को उन्होंने अपने अंतःकरण में किस तरह समाहित कर रखा है। आज वे जीवित किवदंती के रूप में हमारे समक्ष उपलब्ध है। वे अभी भी अपने अथक प्रयास इस दिशा में बनाये हुए है।[1]

डॉ0 सक्सेना ने प्राथमिक शिक्षा से लेकर विश्वविद्यालय शिक्षण में योगदान दिया है। प्रत्येक स्तर पर वे उत्कृष्ट शिक्षक रहे हैं। उन्होंने सन् 1956 से 1969 तक गाँधी स्मारक इण्टर कॉलेज एटा में छोटी कक्षा से इण्टर तक कला शिक्षण प्रदान किया।

डॉ0 सरन जी के प्रयास व प्रबन्ध तंत्र के सहयोग से इस विद्यालय में शासन ने इण्टरमीडिएट की कक्षाओं को बढ़ाने के लिए चित्रकला विषय

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना से वार्ता पर आधारित

की अनुमति प्राप्त हुई थी। जिसमें डॉ0 सक्सेना जी का बड़ा योगदान रहा। इन्होंने शिक्षण में सदा ही ईमानदारी से अपने कर्तव्य का निर्वाहन किया। साथ ही साथ छात्रों की आवश्यकता को देखते हुए उनकी कुशलता के अनुसार साधारण व सरल तरीके से शिक्षण कार्य किया। इसी कारण छात्रों की कला के प्रति न केवल समझ बड़ी बल्कि उनका रूझान कला की ओर बढ़ गया।

जब आपने कॉलेज में शिक्षण कार्य आरम्भ किया तो उनका उत्साह व लगन और अधिक बढ़ गयी साथ ही कर्तव्य निष्ठा अपनी पूरी पराकाष्ठा पर पहुँच गयी। डॉ0 सक्सेना उच्च शिक्षा में कला के अध्ययन के महत्व से वाकिफ थे। डॉ0 सरन जी बताते है कि जब उन्होंने विश्वविद्यालय स्तर पर शिक्षण कार्य आरम्भ किया तो उन्होंने सैद्धान्तिक रूप से इस बात पर जोर दिया। कि शिक्षक को अपने विषय का अधिकतम ज्ञान होना चाहिए। इसी बात को ध्यान में रखकर उन्होंने कलात्मक सृजन व पाठ्यक्रम सम्बन्धी ज्ञान व अपने शिक्षण को आधारभूत तत्व मान लिया। वे बताते हैं कि उन्होंने निःसंकोच तत्कालीन चित्रकारों व कलाविदों से पढ़ना लिखना लगातार बनाये रखा। जिसका परिणाम यह हुआ कि वे आरम्भ से ही कला शिक्षक के रूप में प्रतिस्थापित होकर कला शिक्षण की एक महत्वपूर्ण कड़ी बन गये। वे बताते है कि बिना पूर्व तैयारी के उन्होंने कभी शिक्षण कार्य नहीं किया। क्लास में जाने के पूर्व वे अध्ययन करते थे। इतना ही नहीं वे लेसन प्लान को सदैव ध्यान में रखकर शिक्षण किया करते थे। उनका मानना पूर्णताः सही है कि एक शिक्षक को अपने शिक्षण में पूर्णतः लाने के लिए पूरी कमर कस के पढ़ाई करना चाहिए। आपका मानना था, कि कला में भाव की अभिव्यक्ति ही कला की पूर्णतः प्रदान करती है। आप मानते है कि छात्र की

मनोस्थिति को जानकर उसकी प्रतिभा को निखारना चाहिये। शिक्षक ही छात्र को उचित वातावरण प्रदान करके उसके कलात्मक रूझान को निखार सकता है। वे बताते हैं कि उन्होंने छात्रों को बलपूर्वक या उनकी अनिच्छा से जबरदस्ती किसी कार्य अथवा चित्रण के अध्ययन के लिए बाध्य नहीं किया, बल्कि इसमें छात्र की अभिरूचि की महत्ता पर बल दिया।[1]

डॉ0 सक्सेना ने बरेली कॉलेज, बरेली में बेचलर एवं मास्टर डिग्री में कला शिक्षण आरम्भन परिणति सकारात्मक रही। कॉलेज में पृथक विषय के रूप में कला विभाग स्थापित हुआ। इस विभाग को डा0 सक्सेना द्वारा दिए गए अमूल्य निर्देशन की परिणति यह रही कि लगातार 10 वर्षों तक इसी संकाय के छात्रों ने विश्वविद्यालय परीक्षा में अपना परचम लहराते सर्वश्रेष्ट स्थान प्राप्त किया।

डॉ0 सरन एक साधक रूप में अपने कर्तव्यों का निर्वाहन करते रहे और उन्होंने समय के महत्व को समझा। समय को अमूल्य निधि बताते हुए उसे व्यर्थ न गवाने की सलाह छात्रों को दी। डॉ0 सरन आठ बजे के पूर्व ही कॉलेज परिसर में उपस्थिति दर्ज करा देते थे और अपरान्ह 6 बजे ही घर की राह पकड़ते थे। अनुशासन व चरित्र को डॉ0 सरन बिहारी जी सफलता की कुंजी मानते थे। अनुशासन के मामले में तो वे अत्यधिक कठोर थे। जिससे छात्र–छात्रायें उनके सामने बोलने की हिम्मत नहीं कर पाते थे।[2]

छात्र–छात्रायें उनका अत्यधिक आदर भी करते थे, क्योंकि वे असीम दयालु प्रवृति के थे। डॉ0 साहब कुछ निर्धन छात्रों की फीस भर दिया करते थे। उनको कागज, ब्रश रंग जैसी सामग्री दे दिया करते थे। वह ट्यूशन परम्परा के घोर विरोधी रहे हैं उन्होंने पैसा लेकर कभी भी ट्यूशन नहीं दिया

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया
[2] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना से वार्ता पर आधारित

बल्कि जिन छात्रों को अतिरिक्त निर्देशन की आवश्यकता होती थी, तो वह अतिरिक्त समय देकर निशुल्क दिया करते थे। उनकी यह श्रेष्ट प्रवृत्तियाँ छात्रो को प्रभावित करती थी।

डॉ0 बिहारी जी जिस तरह अखिल भारतीय रूप से कलाविद् के रूप में जाने जाते हैं। उसी तरह से अपने परिचितों में वे अंग्रेजी भाषा के एक अच्छे आलेखक माने जाते हैं। अंग्रेजी पर जिस तरह की उन्होंने पकड़ बनायी, वह किसी विजन इमेज से कम नहीं थी। गणित जैसे कठिन विषय पर भी श्रीमान् जी का अच्छा वर्चस्व रहा, लेकिन स्वाध्याय उनकी अभिरूचि में शामिल रहा था। अतिरिक्त समय में किताबे पढ़ना और अच्छी किताबों का संकलन करना डॉ0 साहब का शौक रहा है। डॉ0 साहब के घर का एक कमरा एक छोटी लाईब्रेरी की तरह है, जिससे अनेकानेक अनूठी काव्यात्मक एवं गद्यात्मक पुस्तक सामग्री दिखाई दे सकती है।

अध्ययन अध्यापन से इतर बिहारी जी खेलकूद को भी महत्वपूर्ण मानते थे। डॉ0 सक्सेना जी की सुदृढ विद्धता के कारण कला जैसा जटिल विषय कला छात्रों के लिए समझने में सरल बन गया। यह सरलता उनके कठिन तप का परिणाम है। नित–प्रति अभ्यास करके सीखो में श्रीमान जी का असीम विश्वास रहा है। अतः वे फल के नहीं बल्कि कार्य करने के द्योतक जान पढ़ते है। निष्काम कार्य के सम्पादन हेतु डॉ0 साहब बल देते रहे है।[1]

डॉ0 सरन ने कला शिक्षण का कार्य विभिन्न स्तरों पर किया है क्योंकि आरम्भ से ही उन्होंने कक्षा शिक्षण को अपना निर्दिष्ट लक्ष्य माना है। जब हाईस्कूल के बच्चों को आप कला पढ़ाते थे तो उस समय स्वंय आप तरह तरह के कागज कटिंग करके सुन्दर–सुन्दर विभिन्न प्रकार के फूल पत्तियाँ

[1] डा0 एस0बी0एल0 सक्सेना ने स्वयं बताया

पशुपक्षियों आदि का कागज द्वारा क्राफ्ट कार्य कराया करते थे। तथा पेस्टल रंगों से वस्तु चित्रण तथा प्रकृति चित्रण कराया करते थे।

डॉ0 सरन जब कला प्रवक्ता हुये तो तब उन्होंने इण्टरमीडिएट और बाम्बे आर्ट की परीक्षा की तैयारी करने में छात्रों को सहयोग दिया और अपने शिक्षण का योगदान दिया। व्यवसायिक कला में भी आपकी विशिष्टता थी। इस कारण आपने व्यवसायिक कला के शिक्षण में भी अपना योगदान दिया। डॉ0 सरन ने चित्रकला के प्रयोगात्मक कार्य व शिक्षण का भी ज्ञान कराया एम0ए0 पूर्वाध एवं उत्तरार्द्ध दोनो ही कक्षाओं में डॉ0 सरन ही लिखित प्रश्न–पत्रों का शिक्षण कराते और उन प्रश्न–पत्रों की सैद्धान्तिक तैयारी कराते थे। उनका कला विषय का ज्ञान चरमोम्कर्ष पर था। सारे देश के लगभग काफी लोग जो उच्चस्तरीय कलाकारों की गिनती में आते थे, उनसे कला शिक्षण का विषयक ज्ञान लिया करते थे। क्योंकि कला एक प्रयोगात्मक विषयक पहले रहा है। बाद में सैद्धान्तिक, इसलिए बहुधा कलाकारों को इस का विषयक ज्ञान नगण्य होता ही होता है। यही कारण है कि डा0 सरन ने कला शिक्षण के लिए कई उपयोगी पुस्तकें लिख दी जिसका लाभ आज प्रत्येक अध्यापक अपने कला शिक्षण में कर रहा है।

शोध का शिक्षण

कला शोध का शिक्षण कराना यूं तो इतना आसान कार्य नहीं था, लेकिन डॉ0 सरन के कला विषयक ज्ञान की पकड़ के कारण यह अत्यन्त सरल सा हो गया था। क्योंकि उनका शिक्षण का अपना अलग तरीका है। जिससे विद्यार्थी सहज रूप से अपने शोध के गन्तव्य तक पहुँच जाता है। वस्तुतः कला शोध का शिक्षण कराना आसान नहीं है, जटिल विषय के विभिन्न पहलुओं से गुजरना पड़ता है। कई तरह की खोज बीन करनी

पड़ती है। जिसमें विद्यार्थी कभी–कभी भयाक्रान्त सा हो जाता है और विषय से हट जाता है। या पूर्ण निष्ठा से शोध नहीं कर पाता है क्योंकि शोध सम्बन्धी शिक्षण कोई भी सहज रूप से नहीं कराता या फिर यूँ कहें कि उन्हें विषयक ज्ञान का आभाव होता है। तो छात्र भी येन–केन–प्राकारेण अपना शोध ग्रन्थ पूरा कर ही लेता है। वास्तविकता क्या है? इससे न तो शोधार्थी को कोई सरोकार होता है और न ही शोध का शिक्षण कराने वाले को होता है। जिनके अस्पष्ट विषयक ज्ञान और थोड़ा शिक्षण के गलत तरीके की काली छाया शोधार्थी पर पढ़ती है।

डॉ0 सरन के अनुसार शोध का शिक्षण अर्थात पूर्ण विषयक ज्ञान ही होता है। क्योंकि पूर्णतः के बिना शिक्षण अधूरा ही रह जाता है और शोधार्थी अक्सर सत्य की खोज से भटक जाता है। जिसका पूर्णतया दोषी एक शिक्षक व उसका अधूरा ज्ञान ही होता है। डॉ0 सरन तो वैसे भी सभी कलाविदों में शोध के शिक्षण के विशेषज्ञ माने जा रहे है। क्योंकि उनका शिक्षण विषय की समग्र पूर्णता एवं सत्यता को इंगित करता है। इसलिए उनकी शोध शिक्षण की पहुँच शोध विषय के प्रत्येक बिन्दु को सुस्पष्ट करके वस्तुनिष्ट सत्य को उजाकर करती है, जिससे शोधार्थी की सारी कठिनाईयां दूर होने लगती है और उसको शोध से प्रेम होने लगता है।

कला शिक्षण के अनुभव

डॉ. सरन के अनुसार कला शिक्षण के भिन्न–भिन्न अनुभव जो उनको समय–समय पर उनके जीवन से प्राप्त हुये उसके विषय मे डॉ0 सरन स्वयं बताते है कि उन्होनें प्रारम्भिक कक्षाओं से लेकर विश्वविद्यालयी स्तरीय कला शिक्षण का कार्य किया है उनका अनुभव है–

कि कला के अधिकांश छात्र व छात्राएं कला सृजन में रूचि रखते है

लेकिन उनकी रूचि की भिन्नता के कारण जब सामान्य शिक्षा पद्धति का संचालन किया जाता है तो उन्ही छात्रों, जिनमें कला के प्रति जन्मजात प्रवृत्ति होती है वे स्वाभाविक रूप से रूचि लेने लगते है और शेष छात्र शिक्षण में मजबूरी से सलंग्न होते है। यह बात अधिकतर कला शिक्षण के प्रत्येक स्तर पर पायी गयी है।

कला शिक्षण मे कला शिक्षक का व्यवहार

कला के विद्यार्थियों मे कला के प्रति छुपे हुये उद्‌गारों को विकसित करने में कला अध्यापक की अहम् भूमिका होती है। अध्यापक छात्रों के कलात्मक एवं सृजनात्मक कार्यो मे बहुत सहयोगी होता है। डा0 सरन का अनुभव है कि जिन बच्चों में शिक्षक से जुड़ने की तीव्र प्रवृत्ति होती है और कुछ सीखने की लालसा है तभी शिक्षक अपना भरसक प्रयास करके उनको कला के प्रति जागृत करने की चेष्टा करता है। समय पर कला शिक्षक उनको बहुत थोड़ा सा दर्शन भी देने का प्रयत्न करता है। ऐसे छात्र कला के प्रति विशेष रूचि लेने लगते है तथा सुयोग्य कला अध्यापक का शिक्षण एवं मार्ग–दर्शन पाकर वे भविष्य मे एक नया इतिहास रचने मे समर्थ हो जाते है लेकिन इसके लिये कला शिक्षण और छात्र का तारतम्य बड़ा सीधा व सरल अनवरत होना चाहिये इसमें लेशमात्र भी स्वार्थी स्वभाव छात्र के लिये अहितकर हो जाता है और एक कला अध्यापक की शिक्षण की छवि धूमिल हो जाती है जिससे समस्त कला जगत को समाज में लज्जित होना पड़ता है।

सर्वप्रथम अगर हम ध्यान से देखें तो हमे महसूस होगा कि जिस छात्र में कला के प्रति अनुराग नहीं है। वह कभी किसी भी स्थिति मे कलाकार या कला प्रेमी नही हो सकता और इसका सीधा सम्बन्ध कला शिक्षक से होता

है। अगर कला शिक्षक वास्तव में एक आदर्श कला शिक्षक हैं तो उसका यह दायित्व और धर्म हो जाता हैं कि वो येन–केन प्राकारेण छात्र में कला के प्रति अनुराग जागृत करे।

डॉ0 सरन के अनुसार उनका कहना है कि जब तक कला के छात्र में कला के प्रति अनुराग की भावना उत्पन्न नही होती, तब तक वह कला का छात्र नही बन पाता हैं इसीलिये उनका अनुभव है कि कला शिक्षण का यही प्रथम उद्देश्य होना चाहिये और उसके बाद कला का शिक्षण प्रारम्भ करना चाहिये। उनके इस सारगर्भित व्यक्तव्य से यह सिद्ध हो जाता है कि कला शिक्षण के लिये सबसे महत्वपूर्ण है कि कला के छात्र –छात्राओं मे कला के प्रति अनुराग होना परमावश्यक हैं।

कला शिक्षण में अनुकरण

कला शिक्षण में अनुकरण, वास्तव में रीढ की हड्डी होती है। क्योंकि जब अनुकरण ही निर्दिष्ट नहीं होगा तो चित्र भी सुस्पष्ट एवं प्रभावी नही होगा इसके लिये यह आवश्यक है कि शिक्षण के पूर्णत्व के लिये सटीक अनुकरण की अपेक्षा अपेक्षित है।

डॉ0 सरन के अनुसार ''डॉ0 सरन का अनुभव है कि कला शिक्षण के क्षेत्र में अनुकरण का बहुत विशेष महत्व होता है। इसलिये कल शिक्षंक को एक अच्छा कलाकार भी होना चाहिये और कला शिक्षण में कर के दिखाना भी चाहिये। विभिन्न प्रकार के Demonstration Method का प्रयोग करना चाहिये और उसके बाद विद्यार्थियों को अनुकरण के आधार पर स्वतंत्र चित्रण करने की छूट देनी चाहिये। जिनमें उनके अपने भाव महत्वपूर्ण होने चाहिये।''

डॉ0 सरन के इन अनुभव विचारो से यह सिद्ध हो जाता है कि कला

शिक्षक में शिक्षण पद्धति कठिन से सरल होकर नही बल्कि सरल से कठिन की ओर अग्रसर होनी चाहिए जिससे बालक की रूचि में परतंत्रता न आ पाये।

प्रशिक्षत शिक्षण

कला के शिक्षण में यह अत्यन्त आवश्यक है कि कला शिक्षक प्रशिक्षित होना चाहिये अन्यथा वह किसी भी वस्तु का चित्रण क्रमबद्ध तरीके से नही करा सकेगा जो विद्यार्थियों को रूचि लेने में बाधक होगा। इस प्रसंग के सन्दर्भ में डॉ0 सरन ने मुझे बताया कि "कला शिक्षण में कला के शिक्षक को प्रशिक्षित होना चाहिये, न कि उपाधिधारक लोग, जिन्हें कला शिक्षा का ज्ञान ही नहीं होता उनकें द्वारा शिक्षण कराना उचित नही, क्योंकि यह तो प्रयोगात्मक विषय है, इसीलिये चित्रण के सिद्धान्तों को जानना तो सरल है लेकिन इनको प्रयोग में लाना तो स्वयं के लिये भी कठिन है, विद्यार्थियों से इनका प्रयोग करना तो बहुत ही कठिन है इसलिये सिद्धान्त हो कि कला शिक्षण में सरल स्थिति से बालक को धीरे–धीरे बढ़ते हुये कठिनतम स्थिति पर पहुंचाया जा सकता है। जिसको Easty to touch method बताया गया है जैसे स्कैच के बिना ड्राइंग नही बन सकती, सही ड्राइंग के बिना चित्र नही बन सकता इस प्रकार कला शिक्षण मे प्रोन्नति शिक्षण किया जाता है।

उदाहरण के लिये माध्यमिक शिक्षाओं में कुछ चित्रण सिखाया जाना है तो सबसे पहले छात्रों को उस पुष्प से सम्पर्क कराया जाना चाहिये अर्थात बगीचे में ले जाकर कई दिनों तक उस पुष्प की बनावट रंग और सुन्दरता का आनन्द उठाने देना चाहिये फिर उस का स्कैच और ड्राइंग बनाना चाहिये। जब सही ड्राइंग बन जाये तब रंग भरवाना चाहिये, रंग भरने के

बाद उसमें अलंकरण के लिये छाया–प्रकाश का प्रयोग किया जाना चाहिये।

इस प्रकार यह सिद्ध हो जाता है कि शिक्षण में डॉ0 सरन बिहारी लाल सक्सेना के अनुभव परीक्षित है और विद्यार्थियों के लिये हितकर तो है ही साथ ही साथ विद्यार्थियों में कला के प्रति जागरूकता पैदा करने में भी रामवाण है। जबकि वर्तमान समय में कला अध्यापकों में प्रायः इसका अभाव सा नजर आने लगा है मेरी समझ में शायद यह अत्याधुनिक, गतिशीलता या फिर पूर्ण व्यवसायिकता का ही प्रभाव नजर आता है।

कला शिक्षक के रूप में सुधार के सुझाव :–

एक आदर्श कला शिक्षक के रूप में डॉ0 सरन बिहारी लाल सक्सेना अक्सर कभी समाचार पत्र के माध्यम से तो कभी दूरदर्शन के माध्यम से कला और कला शिक्षक के रूप में सुधार के लिए अपने व्यक्तिगत सुझाव देते रहे थे। उन्होंने इसके सुधार के लिए सेमीनारों एवं कला गोष्ठियों का भी सफल आयोजन किया। जिसमें उनकी कला और कला शिक्षक के रूप में सुधार लाने की कई सुधारात्मक नीतियों को लगभग एक स्वर होकर स्वीकार भी किया गया। जिसके प्रमुख अंश यहां पर प्रस्तुत हैं :–

कला की समझ :

एक कला शिक्षक के लिए कला विषय की सही समझ होनी चाहिये। कला विषय में प्रचीन पद्धति के अनुसार एवं परम्परागत ज्ञान के विषय में जानकारी होना विशेष महत्व रखता है । प्रायः देखा जाता है, कि कला शिक्षक होता तो कला पढ़ाने के लिए हैं, लेकिन उसका कला के प्रति ज्ञान, जैसे सही रेखाओं से रेखांकन करना, रंगो का ज्ञान होना, रंगों की संगति समझना तथा रंगों का क्या प्रभाव होता है, इत्यादि से सब शून्य होता है। वर्तमान में अधिकतर कला शिक्षकों को कला के तत्वों का ज्ञान नहीं है।

कभी फ्री हैण्ड ड्राईंग नहीं की है, न ही उन्हें कला में लय, प्रवाह तथा परिप्रेक्ष्य का ही ज्ञान होता है। बस किसी भी प्रकार से कला विषय से स्नातक की परीक्षा पास की। या फिर येनकेन प्रकारेण आई0जी0डी0 (बाम्बे) आर्ट की परीक्षा पास की, और बस हो गये कला शिक्षक। ऐसी स्थिति में कला शिक्षक में विषयक ज्ञान की आवश्यकता अनिवार्य है । डॉ0 सरन बिहारी लाल सक्सैना के अनुसार

A true understanding of drawing is very much required not only to a true art teacher but also for the students of Arts प्रत्येक कला अध्यापक के लिए यह बात अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि उसको कला की प्रारम्भिक शिक्षाओं का ज्ञान स्वयं होना ही नहीं चाहिये वरन कला के विद्यार्थियों को भी कराना चाहिये।

विषय के प्रति जागरूकता –

सर्वप्रथम कला शिक्षक के लिए यह परमावश्यक है कि उसे विषय के प्रति उदार एवं जागरूक होना चाहिए। क्योंकि इससे कला विषय में और कला के विद्यार्थियों में समय–समय पर आने वाली उदासीनता एवं शिथिलता का ज्ञान होता रहता है। जिसके लिए कला शिक्षक समय रहते हुये अपनी सुधारात्मक प्रक्रिया प्रारम्भ करके कला विषय एवं छात्रों में आने वाले दोषों को दूर करने में सक्षम सिद्ध होता है। जब शिक्षक कला विषय की ओर जागृत रहेगा, तभी छात्र में भी कला के प्रति जागृति एवं संवेदना प्रगट होती रहेगी। डॉ0 सरन के अनुसार कला विषय के प्रति जागरूकता होना कला शिक्षक के लिए प्राथमिक आवश्यकता है। जो छात्रों में रूचि पैदा करने के लिए उचित आधार स्थापित करता है।

प्रयोगात्मक स्वरूप :

कला का वास्तविक स्वरूप तो मूल रूप में प्रयोगात्मक ही है। क्योंकि कला चित्रांकन की प्रक्रिया है। उसमें चित्रकार वहीं प्रकट करता है, जो देखता है। जैसे कोई गवैया पढ़कर नहीं गा सकता है, उसके द्वारा प्रयोगात्मक अभ्यास ही सफल गायक बना बनाता है ठीक इसी प्रकार चित्रकार निरन्तर अभ्यास के द्वारा सफल होता है। इसलिए कला शिक्षक को विशेषतौर पर पहले प्रयोगात्मक पद्धति का निर्वाह करना चाहिये। डॉ0 सरन के अनुसार चित्रकला का प्रथम स्वरूप तो प्रायोगिक ही है क्योंकि अगर शिक्षक का रेखांकन उचित नहीं होगा तो चित्र में विकृति आना स्वाभाविक ही हो जाता है। अतः कला शिक्षक को स्केच पर विशेष ध्यान देना चाहिये।

स्वतंत्र भाव चित्रण :

भावों को स्वतंत्र रूप से चित्र के रूप में प्रकट करना स्वतंत्र भाव चित्रण कहलाता है। कला शिक्षक के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वह चित्रों में पहले रेखाओं द्वारा चलने, बैठने, नाचने, कूदने, पूजा, भिखारी तथा रोने व हँसने आदि के भाव प्रकट करने की कोशिश करे। तदोपरान्त छात्र एवं छात्राओं में भी स्वतंत्र भाव चित्रण कराने की कोशिश करे। तथा मुक्त हस्त रेखाएँ खींचने का प्रयास करायें। जिससे रेखांकन करने में परिपक्ता आ जायेगी। ये सशक्त रेखाएँ भविष्य में एक कला के छात्र के लिए वरदान साबित होगी ।

According to Dr. S.B.L. Saxena " Free feeling Drawing means it is pure drawing for the students to become an artist. It is soul of drawing.

नव जागरण के प्रति उत्तेजना :

कला विषय या किसी भी विषय में देखें तो नित नये–नये शोध होते हुये दिखायी पड़ते है । अतः कला शिक्षक के रूप में यह आवश्यक हो जाता है कि हम छात्रों में भिन्न–भिन्न प्रकार से कुछ नया करके दिखाये तथा उनमें कला विषय के उत्थान के लिए नित नूतन, आकर्षण पैदा करें। जिससे उनमें कला के विषय में रूचि पैदा हो तथा चित्रकला में कुछ और अच्छा करने की ललक पैदा हो। नवान्तुक कला के छात्र–छात्राओं में कला संस्कृति के प्रति नव–जागरण की उत्तेजना पैदा हो, जो कला के भविष्य को प्रगति के समान आलोकित करे ।

कला जगत में कला का शिक्षक ही कला के उत्थान और पतन का प्रथम उत्तरदायी है क्योंकि कुपात्र में कार्य की सिद्धि नहीं होती और बालक अपने गुरू–रूपी शिक्षक का ही सर्वप्रथम अनुकरण करता है अगर शिक्षक ही अल्पज्ञ और नीरस है तो छात्र से पूर्ण उपेक्षा अपेक्षित नहीं होगी। इसलिए सभी सम्मानीय कला शिक्षकों से अपेक्षा की जाती है कि वे स्वयं के प्रति पूर्ण सहानुभति प्रकट करें। कला विषय का एक उच्च स्तरीय एवं सुसंस्कृतिक आदर्श प्रस्तुत करें।

आदर्शोन्मुख यथार्थवाद :

कला शिक्षक के रूप में सुधार के लिए हमें आदर्शोन्मुख यथार्थवाद का पक्षधर होना पड़ेगा। इसके लिए हमें आधुनिक कला में आयी विसंगतियों को दूर करके कला को सुसंस्कृतिक एवं परम्परागत करना होगा। जिसमें यथार्थ

की अभिव्यक्ति होगी। डॉ0 सरन के अनुसार छात्रों को कला विषय के अध्ययन के प्रति प्रेरित करना। उन्हें समीचीन उत्तरदायित्व की इतिश्री करना, यही एक कला शिक्षक के लिए आदर्शोन्मुख यथार्थवाद है ।

इस प्रकार कला शिक्षक को ऐसा आदर्श प्रस्तुत करना चाहिये। जो कला समाज के अन्दर इस प्रकार की क्रिया करे कि ठेस न पहुँचे, समाज के बीच स्वान्तय सुखाय के लिए ही चित्रकला का कार्य न हो बल्कि परान्तय सुखाय की भावना से परिपूर्ण जागृत होकर कलाकृति का निर्माण करना चाहिये।

चित्रों को बनाने की विधि एवं तकनीक :

डॉ0 एस0बी0एल0 सक्सेना के जीवन में चित्रकला के लिए सदैव समर्पण रहा। चित्रकला उनका पर्याय रहा है । उन्होंने अपने अब तक के जीवन में नाना प्रकार के सैकड़ों चित्र बनाये, जिनमें मानव चित्रण, दृष्य–चित्रण, रेखाचित्र, वस्तु चित्रण, प्राकृतिक चित्रण, चित्र संयोजन इत्यादि चित्र बनाये। और उन्होंने हर माध्यम का सफलतम प्रयोग किया। डॉ0 सक्सेना चित्रकला में किसी बन्धन को स्वीकार नहीं करते थे। वे चित्रों को समयानुकूल बदलते रहते थे। उन्होने कभी टाईप्ड होने का सहारा नहीं लिया। वे कुछ न कुछ नया करने के लिए हमेशा प्रयोग करते रहते थे। परम्परावादी होने के बावजूद भी वह लीक से हटकर काम करने के आदी हैं।

डॉ0 सक्सेना की चित्रण विधि व तकनीक कभी एक सीमा में बधंकर नहीं रही। उन्होंने चित्रकला में कलाकृति के पूर्व रेखांकन को ही अति आवश्यक माना। क्योंकि उनके विचार में सशक्त रेखांकन चित्र की रीढ़ की हड्डी होती है। इसलिए उन्होंने अपनी चित्रण शैली का प्रारंभ भी अनगिनत

रेखाचित्र बना कर ही किया। 20 से लेकर 30 स्कैच रोज बनाना उनकी आदत सी थी। इसलिए काफी वर्षों तक उन्होंने खूब स्कैच बनाये और स्वंय को रेखांकन की सशक्त रेखाओं के योग्य बनाया। जिससे उनकी चित्रकला उत्तरोत्तर प्रभावशाली होने लगी। अब उनका हाथ इतना सध गया कि जब जो चाहा तुरन्त बना लिया करते थे । रबड़ का प्रयोग उन्होने कभी नहीं किया।

रेखांकन के लिए डॉ0 सक्सेना ने पेन्सिल, पैन, स्कैच, चाक, कोयला तथा जल रंगों का प्रयोग किया। डॉ0 सक्सेना को चित्र बनाने के लिए अब पेन्सिल से चित्र बनाने की आवश्कता नहीं पड़ती थी। बल्कि सीधे ब्रश से ही रेखांकन कर लिया करते थे। वे बताते है कि उन्होंने अपने चित्रण में निम्नलिखित विधियों व तकनीक का प्रयोग किया।

वॉश तकनीक :

इस तकनीक का प्रारम्भ सर्वप्रथम बंगाल स्कूल में हुआ था। इसलिए बंगाली कलाकारों जैसे नन्द लाल बसु, यामिनी राय, इत्यादि ने इस शैली में बहुत काम किया है। इसमें कार्य करने के लिए सर्वप्रथम व्हाइटमैन सीट, हेन्डमेड शीट या कोई भी मजबूत कागज लेकर बोर्ड पिन की सहायता से स्टिक कर लिया जाता है। अब ब्राउन टेप के द्वारा पेपर के चारों कोने चिपकाकर टेपिंग की जाती है। इसके बाद कागज पर हल्के हाथ से ड्राइंग की जाती है। इसमें गाढ़ी लाईनों को मिटा कर हल्का कर देते हैं। इसके द्वितीय चरण में कलर प्लेट में पानी को मिलाकर पतला करके 0 या 1 नं0 के पतले ब्रुश से पूरी ड्राईग करते हैं ताकि हमारा रेखांकन सुस्पष्ट हो जाये। अब एक ट्रे में साफ पानी भरकर कागज पर लगे हुए बोर्ड को डिप करते है। ताकि कागज अच्छी तरह से गीला हो जाये इसके 10–15 मिनट

बाद बोर्ड व कागज को पानी में से निकाल लेते है और तिरछा करके बोर्ड को छाया में रख देते है, ताकि उसका सारा पानी सूख जाये ।

अब इसमें रंग भरने की शुरूआत सबसे पहले बॉडी कलर से करते है। यदि हमने चित्र में कोई मानव चित्रण बनाया है, तो रंग इस प्रकार से लगाया जाता है कि कागज पर कोई धब्बा न पडे। उसके बाद वस्त्रों में रंग भरा जाता है। सबसे अन्त में बैकग्राउण्ड या फोरग्राउण्ड में रंग भरे जाते हैं । इस प्रकार से सपाट रंग भरने के बाद बोर्ड को कागज सहित पुनः 10–15 मिनट पानी में रखते हैं। फिर वही पूर्व की तरह छाया में सुखा लेते है। पूर्ण रूपेण सुखा लेने के पश्चात जहाँ से भी कलर डिप की प्रक्रिया में निकल गया है। वहां पर पुनः वही रंग लगाकर सुखाते हैं। फिर से डिप वाली प्रक्रिया करते हैं, इसके बाद कागज के सूखने पर प्रत्येक रंग की थोड़ी गहरी रेखाओं के द्वारा आउटलाईन करते हैं। प्रयास यह करते हैं कि अगर बाल बनाने हों तो एक–एक बाल का आभास हो इसके बाद जहाँ–जहाँ भी हाईलाईट है, वहाँ साफ ब्रश से रगड़ना चाहिये। ताकि रंग हट जाये और हाईलाईट का आभास हो। अब अलग–अलग जगह जिस रंग की वॉश लगानी हो उस रंग की हल्की और गाढ़ी टोन लेकर आधी के करीब पेन्टिंग में गहरा व आधी में हल्का रंग हल्के हाथ से लगायें जहां दोनो टोन मिले वहां रंग मिक्स हो जाना चाहिये। इसके सूखने के बाद पुनः आऊट लाईन करते हैं। टोनिंग को फिक्स करने के लिए भी पानी में डाला जाता है। कभी–कभी टोनिंग कर रंग अधिक निकल जाता है। तो दुबारा इसी प्रकार से टोनिंग की जाती है। वॉश तकनीक में डॉ0 सक्सेना ने दैनिक जन–जीवन से सम्बन्धित चित्र बनाये जैसे बकरी चराने वाली, प्रतीक्षा आदि।

पेस्टल रंगो का प्रयोग :

चित्रकला में पेस्टल रंगो का भी अपना विशिष्ट महत्व है। पेस्टल रंग शीशी के अन्दर अवलेह के रूप में मिलते है। इनका प्रयोग व्यवसायिक कला में विशेष तौर पर किया जाता है। जैसे–पेस्टल बनाने, चार्ट बनाने व सूक्तियाँ लिखने आदि। ये रंग चमकदार और तीव्र होते हैं। पेस्टल प्रायः ओपेक्यू होते है। अर्थात अपारदर्शी होते हैं। इस विधि में सबसे पहले ड्रांइग कर लेते हैं। तत्पश्चात् जो रंग लगाना हो उसे संयोजन के अनुसार लगा लेते हैं। डॉ0 सरन ने पेस्टल रंगो में बहुत कम काम किया है।

पेस्टल रंग :

पेस्टल रंगो का प्रयोग बहुत सरल होता है, किन्तु थोड़ी सी भी असावधान से पूरी पेन्टिंग खराब हो जाती है । पेस्टल कलर दो प्रकार के होते हैं – (1) ऑयल पेस्टल, (2) ड्राय पेस्टल । ऑयल पेस्टल में चिकनाहट होती है। ये शीट पर लगने के बाद चिपक जाते है। पेस्टर शीट की सतह खुरदुरी होती है, इससे सबसे पहले शीट को पिन लगाकर बोर्ड में लगा देते हैं, फिर ब्राउन टेप से टेपिंग कर देते है। उस पर लाईट पेन्सिल से स्कैच करते हैं, फिर उसमें मध्यम तान लेकर रेखांकन स्पष्ट कर देते है। डैप्थ की हल्की तान लेकर डैप्थ की जगह रंग लगाया जाता है। फिर उसको उंगली सहायता से मिला दिया जाता है। अब डैप्थ का रंग लेकर डैप्थ लगाई जाती है। इसमें डैप्थ के लिए कई रंगों को ले लिया जाता है। बारी–बारी से उसका प्रयोग किया जाता है। रंगों को हल्के से उंगली से घिस देना चाहिये ताकि रंग अलग–अलग न रहकर एकसा हो जाये। इसके बाद क्रीम या सफेद रंग अलग–अलग न रहकर एकसा हो जाये। इसके बाद क्रीम या सफेद रंग लेकर हाईलाईट लगानी चाहिये। धरातल में हल्की

आकृति की जगह गहरे रंग की तान से स्ट्रोक्स में उभार दिया जाना चाहिए। अन्त में बायीं ओर से वटर पेपर पेन्टिंग के ऊपर लगाना चाहिए।

ड्राई पेस्टल रंगो का प्रयोग भी ठीक इसी तरह से किया जाता है। इन रंगों में ध्यान देने वाली बात यह है कि इन्हें बार–बार घिसना नहीं चाहिये। क्योंकि इससे कागज फटने का डर रहता है। रंग भी गन्दे हो जाते हैं। इसे उंगली से मिलाना चाहिए। पृष्ठभूमि में तो पहले से ही ऊपर और नीचे पेपर लगा देना चाहिये ताकि ड्राई पेस्टल के हाथ में लगने से कागज गन्दा न हो। इसके अतिरिक्त रंग को फूँक मारकर उड़ा देना चाहिए। फिर फेविकोल घोलकर या ग्लोसी मीडियम से इस पर स्प्रे करना चाहिये। इसके बाद इस पर वटर पेपर लगा देना चाहिये।

तैल रंग :

इस तकनीक में सर्वप्रथम कैनवास पर टेक्सचर वाइट की दो कोटिंग की जाती है। फिर प्लेट में रंग निकालकर डिपर में 1 भाग अलसी का तेल और दो भाग तारपीन का तेल मिला लिया जाता है। तैल रंगो को करने में सपाट ब्रश का प्रयोग किया जाता है। अब सर्वप्रथम चारकोल स्टिक से ड्राइंग कर ली जाती है। अब यैलो ऑकर या बन्ट साइना को पतला करके स्केचिंग के ऊपर रेखांकन कर देते हैं। अब सबसे पहले मध्यम तान का प्रयोग किया जाता है, बाद में डैप्थ लगाते हैं। इसके हल्का सूखने पर लाईट और हाईलाईट का प्रयोग करते हैं। सूखने के बाद यदि कहीं कोई टेक्सचर देना हो तो देते हैं तत्पश्चात् छाया में सुखाते हैं। इस शैली का प्रयोग डॉ0 सक्सेना ने सर्वाधिक रुप से किया है।

टैम्परा :

तरल रंगो से चित्रण की उस विधि को टेम्परा कहते हैं, जिसमें रंगो के घोल में माध्यम के रूप में किसी इमल्शन का प्रयोग किया जाता है। टेम्परा पद्धति के लिए कागज की रंग सोखने वाली तथा कठोर भूमि की आवश्यकता होती है। मोटे कागज के अतिरिक्त हार्डबोर्ड, काष्ठफलक, गैसोपट या कपड़े आदि पर भी टेम्परा माध्यम या प्लास्टर ऑफ पेरिस का गाढ़ा घोल को हार्डबोर्ड, काष्ठफलक, मोटे कागज, दीवार या कपड़े आदि पर एक सा फैला दिया जाता है। अब पूरे चित्र का अनुरंखन बनाकर उसी गैसोपट पर रखकर उस पर राख की पतली तह लगायी जाती है। टैम्परा चित्रण में धरातल का रंग निखरकर उठने लगते हैं। टेम्परा पद्धति में रंगों का मिलान छाया प्रकाश दिखाने के लिए नहीं किया जाता है, बल्कि इसमें हुए उतार–चढ़ाव को तिरछी रेखाओं तथा सामान्तर रेखाओं के द्वारा बिन्दुओं या तूलिका स्पर्शों के प्रयोग की विधि या ऐचिंग से दर्शाया जाता है। इस विधि में गहरे रंग का प्रयोग आरम्भ से ही किया जाता है। ऊपर से चित्र को तैल रंगो के चित्रण से पूरा किया जाता है। डॉ0 सक्सेना ने भी टैम्परा में अनेकों चित्र बनाये जिनमें प्रमुख हैं– नववधु, बहू की मुँह दिखायी आदि।

डॉ0 सरन ने लगभग हर माध्यम में काम किया है। लेकिन तैल माध्यम विधि ही उनका आकर्षण रही है। डॉ0 सरन नन्द लाल बसु की तकनीक एवं बद्रीनाथ आर्य की वाटर कलर से बहुत प्रभावित रहे। उन्होंने चित्रण से पूर्व रेखांकन को विशेष महत्व दिया उनके अनुसार चित्रण के लिए सबसे पहले फार्म एवं ड्राइंग का ज्ञान आवश्यक है। उनकी रेखाएँ बोल्ड और सशक्त हैं। उनका अनुभव है, कि पहले रेखा, बाद में रंग है। उन्होंने रंगों में हमेशा प्राथमिक रंगों को महत्व दिया। डॉ0 सरन को हमेशा चटकीले

व साफ रंगों से लगाव रहा। अक्सर देखने में आता है कि आपने, अपने चित्रों में लाल, पीले, नीले रंगो को बहुतायत मात्रा में प्रयोग किया है। आपका मानना है कि सादा व उच्च विचारों वाला व्यक्ति सदैव प्लेन कलर का प्रयोग करता है। कलुषित विचारों वाला व्यक्ति हमेशा निराशावादी रंग जैसे काला का प्रयोग करेगा। डॉ0 सरन ने अपने चित्रण में रंगो का प्रयोग मनोवैज्ञानिक प्रभावों को ध्यान में रखकर किया है। डॉ0 सरन में विविध रंगीय अमूर्तता को सहजता प्रदान करने की शक्ति है। आपके चित्र संसार का साक्षात्कार करते प्रतीत होते हैं। गाढ़े और आकर्षक रंग समूह में वे अपनी भावनाओं को प्रकट करने में सदैव तत्पर रहते हैं। डॉ0 सरन की धार्मिक प्रवृत्ति होने के कारण नारंगी रंग विशेषतया प्रिय है। ये रंग हमें उनकी चित्रण शैली में नहीं बल्कि उनकी सम्पूर्ण जीवनशैली में भी देखने को मिलते है।

प्रारम्भ से ही उन्हें किसी प्रकार का कोई बन्धन स्वीकार्य नहीं था। उनकी पूर्ण जीवन शैली एक आजाद पक्षी की तरह रही है। उन्होंने अपने चित्रों में ब्रुश का ही प्रयोग किया। आपका मानना है कि कड़े बालों वाले ब्रुश हमेशा रंगों को खुरचते ही हैं। डॉ0 सरन को उंगली और अंगूठे से भी पेन्टिंग करने का अच्छा अभ्यास है इस पद्धति का प्रयोग उन्होंने सर्वप्रथम 30 वर्ष पहले उस समय किया था, जब वे मथुरा वृन्दावन घूमने गये थे। वहाँ 12 बजें से 3 बजें तक हार्ड बोर्ड पर स्टूडेन्ट क्वालिटी के ऑयल रंगो में उंगली व अंगूठे की सहायता से एक दृश्य–चित्र का निर्माण किया था। क्योंकि वहाँ उन्हें ब्रश उपलब्ध नहीं हो पाये थे। तब से उन्होंने इस विधि से निरंतर चित्रण अभ्यास किया। उंगली व अंगूठे से पोर्ट्रेट बनाने में भी दक्षता हासिल की।

इस प्रकार उनके चित्रण व तकनीक की चर्चा करते हुये मैंने अनुभव किया कि डॉ0 सक्सेना जहाँ एक ओर सच्चे साधक के रूप में कला के द्वारा परमानन्द की प्राप्ति कर रहे हैं, वहीं दूसरी तरफ कला को जन साधारण को कला के उच्च्व स्तर तक उठाने तथा उनमें सौन्दर्य दृष्टि उत्पन्न करने का प्रयास कर रहें हैं। उनका विचार है कि चित्रकला की प्रकृति अनुकृति नहीं है। नकल का ना तो कोई अर्थ होता है न कोई प्रयोजन। कला एक सृजनात्मक क्रिया है। जो चित्रकार के अपने स्वभाव व अन्तर्दृष्टि पर निर्भर करती है। कला में वे सरलता और सत्यता का गुण परम आवश्यक मानते हैं, ताकि जनसाधारण उसे आसानी से समझ सके।

अध्याय षष्टम्

डॉ० एस० बी० एल० सक्सेना का शिक्षण में योगदान

डॉ० एस० बी० एल० सक्सेना का शिक्षण के लिये किया गया योगदान

प्रोफेसर एस0 बी0 एल0 सक्सेना विश्वविद्यालय शिक्षण एवं चित्रण के स्तर पर कला विषय के श्रेष्ठ विद्वान स्थापित हो सके हैं। उनकी कला–साधना, कला शोध, शिक्षण और उनके कला चित्रण पर आगरा विश्वविद्यालय में एम0 फिल0 और एम0 जे0 पी0 विश्वविद्यालय, बरेली तथा अनेक विश्वविद्यालयों में एम0 ए0 की कक्षाओं में लघुशोध और शोध किये जा रहे है। इससे यह सिद्ध हो जाता है कि उन्होंने कला शिक्षण और चित्रण में विशेष योगदान दिया है।

डॉ0 सरन एक मौलिक चित्रकार भी हैं। उन्होंने वॉश पद्धति में चित्र बनाना प्रारम्भ किये। बाद में उन्होंने चित्रों को टेम्परा पद्धति में जल रंग से बनाया। प्रारम्भिक चित्रों का विषय समाजिक रहा फिर वे एक अन्तराल के बाद दृश्य–चित्रण में रूचि लेने लगे। धीरे–धीरे उन्होंने प्राकृतिक दृश्य को क्रियेटिव दृश्य चित्रण के रूपान्तर कर दिया। सन् 1985 से वे अपने चित्रण में समीक्षावाद दर्शन का प्रयोग करते रहे जो कि उनके गुरू प्रो0 रामचन्द्र शुक्ल के समीक्षावाद दर्शन से प्रभावित था। डॉ0 सरन ने इसमें समीक्षावादी विषयों के आधीन समाजिक कुरीतियों, राजनैतिकता और अनैतिकता पर अनेक पुरस्कृत चित्र बनाये जिनकी कला समीक्षकों ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की। आपातकाल के दौरान उनका बनाया गया चित्र "Terror of

Emergency" ने दर्शकों को बहुत आकर्षित किया। उन्होंने सदैव अपनी एकल चित्र प्रदर्शनियों आयोजित कीं जिसका मुख्य उद्देश्य था जन–जन में कला के प्रति जागरूकता जगाना, कला चित्रण को सही दिशा दिखाना। उन्होंने सन् 1960 में नैनीताल में, 1961 में एटा, कानपुर में, 1995 में नई दिल्ली में, 1966 में कलकत्ता में तथा 2006 और 2007 में मुम्बई में तथा कला मेला दिल्ली में सन् 1975 से बनाये गये चित्र सृजन के उनके कार्य अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। इस समय आपने जलरंग व तेल रंग दोनों में चित्रण किया।

यद्यपि डा0 सक्सेना ने सैकड़ों की संख्या में चित्र बनाये हैं लेकिन मैने प्रमुख चित्रों को ही अपने शोध प्रबन्ध में प्रस्तुत किया है जिनके विषय में, मै निम्नलिखित विवरण प्रस्तुत कर रहा हूॅ।

चित्र संख्या 1 से 4 तक कलाविद् चित्रकार डा0 एस0 बी0 एल0 सक्सेना के छाया चित्र तथा चित्र संख्या 5 से 10 तक डा0 सरन अपनी स्वर्गीय पत्नी सुधासरन के साथ हैं। चित्र संख्या 11 व 12 में प्रो0 सरन की स्वर्गीय पत्नी श्रीमती सुधा सरन का छाया चित्र है एवं चित्र संख्या 19 से 22 तक डा0 सरन परिवार के साथ हैं। चित्र संख्या 29 में डा0 सरन बरेली कालेज, बरेली के मुख्य द्वार पर खडे हुए हैं। चित्र संख्या 30 से 60 तक डा0 सरन के शिक्षण कार्य से सम्बन्धित चित्र।

चित्र संख्या–66 जिसमें एक नारी आकृति निराशा की मुद्रा में बैठी है, जिसके पैर पर एवं समीप ही उल्लू दिखाये गये हैं, इस चित्र में नारी की मनोदशा को दर्शाया गया है, चित्र में लाल, पीला, नीला रंग प्रयोग किया गया है। इसके आगे चित्र संख्या–67 और 68 में नारी की ही मनोदशा को दर्शाया गया है इस चित्र में एक नारी आकृति बनाई गई है, जो भूमण्डल

को ऊपर उठाये अंकित है इसमें लाल, पीले और नीले के साथ गहरे रंग प्रयोग किये गये हैं। चित्र संख्या–69 राजनीति पर आधारित है इसमें एमरजेंसी के समय जनता में व्याप्त भय को दर्शाया गया है। चित्र संख्या–70 एवं 71 में इसी पद्धति पर चित्र बने हैं, इन दोनो चित्रों में आकृतियों की सृजना बहुत महत्वपूर्ण है और रंग योजना भी पूर्व की भाँति ही है।

चित्र संख्या–72 में तीन आकृतियां बनाई गई है जो तीन दिशाओं में देख रही है यह आकृतियां नग्न है। इन आकृतियों के ऊपर उड़ता उल्लू बनाया गया है एवं चित्र के निचले हिस्से में एक हाथ बनाया गया है, जो इस बात का संकेत देता है कि अलग–अलग दिशाओं में मत चलो इस चित्र में तेल रंगो का प्रयोग इतना हल्का किया गया है कि देखने वाले को जल रंग का भ्रम हो जाता है।

चित्र संख्या–73 राजनैतिक विषय अंकित किया गया है चित्र में उस समय का अंकन है जब आपातकाल के बाद कांग्रेस पार्टी का पूर्ण रूपेण विनाश हो गया था। इस चित्र में राजीव गाँधी को कांग्रेस पार्टी को दोबारा संगठित करते दिखाया गया है। चित्र में प्रतीकात्मक अनेक चित्रों को अंकित किया गया है। चित्र संख्या–74 में एक व्यक्ति के राजनीति में असफल होने पर निराशा की स्थिति में चित्रित किया गया है। चित्र संख्या–75 का भी यही विषय है, इस चित्र में एक माँ अपने बच्चे को बुला रही है, चित्र का संयोजन बहुत सुन्दर है और आकृतियाँ क्रियाशील दिखाइ देती है। चित्र संख्या–76 में एक ऐसे व्यक्ति का चित्रण किया गया है जो निराशा में डूबा है और अपना माथा पकड़े बैठा है। इसके पीछे एक तांत्रिक व एक पंडित को भी दिखाया गया है, जो यह दर्शाता है कि जब राजनैतिक असफल हो

जाते है तो वह तांत्रिक व पंडित के चक्कर काटते हैं। चित्र संख्या–77 में आपातकालीन स्थिति को दर्शाया गया है उस समय समाज में व्याप्त जो भय था, उसे बड़े सजीव ढंग से अंकित किया गया है यह चित्र बहुत महत्वपूर्ण है। आपात काल समाप्त होने के बाद चित्र की बहुत प्रशंसा हुई।

चित्र संख्या 78 डॉ0 एस0 बी0 एल0 सक्सेना ने जलरंग से दृश्य चित्रण का अंकन किया है। डॉ0 सक्सेना ने दृश्य चित्रण में विशेष रुचि ली है । अतः उन्होंने जल एवं तैल रंगों में दृश्य चित्रण अंकित किया है। डॉ0 सक्सेना बताते हैं कि उन्होंने दृश्य चित्रण कल्पना एवं यथार्थ दोनो ही आधारों पर चित्रित किया है। जो चित्र उन्होंने कल्पना के आधार पर बनाये हैं, वह चित्र बहुत आकर्षक एवं महत्वपूर्ण हैं। चित्र संख्या–79 में उन्होंने आकाश मे बादलों को उड़ता हुआ चित्रित किया है। ऐसा लग रहा है कि बादल हवा के झोके से दौड़ रहे हैं। इसी प्रकार का अंकन चित्र संख्या–80 में किया गया है और रंग की पारदर्शिता बहुत महत्वपूर्ण है। चित्र संख्या–81 में डॉ0 सक्सेना ने दृश्य–चित्रण में पर्वत और उसकी शिखा पर प्रकाश सुन्दर ढंग में बनाया है, तलहठी में नदी का बहता पानी सजीव रूप चित्रित किया गया है। इस चित्र में सुन्दर आकाश और धुधंले पेड़ों का सजीव चित्रण किया गया है चित्र में रंग बहुत प्रभावक है। चित्र संख्या 83 से 84 में दो दृश्य चित्रों को बनाया गया है। इन दोनो चित्रों में पहाड़ी के ऊपर प्रकाश का प्रभाव बहुत सुन्दर ढंग अंकित किया गया है। प्रकाश पृथ्वी से लेकर आकाश की ओर दिखलाई पड़ता है। इस प्रकार इन चित्रों में डॉ0 सक्सेना ने विशेष प्रयोग करके दिखाया है, जो अपने आप में एक विशेष बात है क्योंकि शायद ही किसी भी चित्रकार ने अब तक ऐसा किया हो।

चित्र संख्या–85, 86 व 88 में प्रकृति के इन अंकनों में वायु का संचालन प्रकाश के साथ साथ सुन्दर रंग योजना का अंकन किया गया है। इसी प्रकार का संयोजन चित्र संख्या–89 से 90 में देखने को मिलता है जिनमें रंगो का प्रयोग बहुत कुशलता पूर्वक किया गया है। इनमें भूखण्ड पर प्रकाश के विभिन्न प्रकाशों को चित्रित किया गया है इसलिए यह चित्र अत्यन्त महत्वपूर्ण है। मैने अपने शोध में यह पाया है कि डॉ0 सक्सेना के प्राकृतिक दृश्य के अंकन में प्रकृति की सजीवता और जिन्दगी को प्रकाश की गति से संचालित किया गया है।

चित्र संख्या–92 में माँ गंगा पर चित्र बनाया गया है। यह बताना आवश्यक है, कि प्रो0 सक्सेना ने पिछले एक दशक में माँ गंगा पर 300 से अधिक चित्र बनाये है। मैने इनमें से प्रमुख चित्रों का प्रयोग अपने शोध में किया है। चित्र संख्या–93 में चित्रकार ने भूखण्ड आकाश एवं जल सन्तुलन स्थापित किया है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि चित्रों में माँ गंगा का पानी बहुत तेज धाराओं के साथ प्रभावित हो रहा है। इन चित्रों में भी प्रो0 सक्सेना ने केवल तीन रंगो, लाल, नीला एवं पीला का ही प्रयोग किया गया है, क्योंकि वे बताते है कि यह तीनों रंग अध्यात्मिक दर्शन में ब्रह्मा, विष्णु और महेश है। मेरा यह मानना है कि प्रो0 सक्सेना ने इन चित्रों में, माँ गंगा का महत्व दर्शाते हुए उसमें निवास करती बाह्रय धाराओं को केवल तीन रंगो से समायोजित कर दिया है। चित्र संख्या–94 एवं 95 भी इन चित्रों के समान हैं। चित्र संख्या 96 में भी माँ गंगा का चित्र अंकित किया गया है। चित्र में आकाश व रंगीन बादलों को सुन्दर ढंग से बनाया गया है। गंगा के किनारे बनाये गये पत्थरों को विभिन्न रंगों से दर्शाया गया है। बहुत पीछे से बढ़कर आती हुई गंगा आगे की तरफ आते आते चौड़ी हो गई है। इन चित्रों

में आजीवन संयोजन और सृजना को बहुत ही सुन्दर बनाया गया है। इसी प्रकार चित्र संख्या–97 में आकाश में बादल, बहती हुई गंगा और रंगीन पत्थरों का संयोजन बहुत सुन्दर लग रहा है। मैं तो यह मानता हूँ कि इस दृश्य में प्रकृति के रंग जल रंग में उतर आये हैं।

चित्र संख्या–100 में प्रो0 सक्सेना ने माँ गंगा का जो चित्रण किया है। आकाश में एक ओर पीले रंग का बादल एवं दूसरी ओर नीले रंग के बादल बनाये गये है। गंगा की तीव्र लहरें वेग के साथ दिखाई पड़ रही है चित्र में रंगीन पत्थर बहुत सुन्दर बनाये गये है। इसी प्रकार चित्र संख्या संख्या–101 में आकाश में बादल दिख कर संध्याकालीन वातावरण निश्चित किया गया है। रंग बिरंगे पत्थर लुढ़कते चले आ रहे हैं। गंगा का पानी बहुत तेजी के साथ आगे बढ़ रहा है। चित्र संख्या–104 और 105 में माँ गंगा की ही चित्रण किया गया है। दोनों चित्रों में आकाश वायु, जल और थल का बहुत सुन्दर अंकन किया गया है।

सन् 1995 से डॉ0 सक्सेना ने अपने चित्र बनाने के दर्शन में बहुत बढ़ा परिवर्तन किया है। अब वे गंगा का सहारा लेकर तांत्रिक चित्रों की ओर बढ़ रहे हैं। इसी कारण उनके चित्र बनाने की विधि बदल रही है जो पूर्व में बनाये चित्रों से भिन्न है। चित्र संख्या–106 में उन्होंने माँ गंगा का चित्र बनाया है आकाश को पीले रंग से बनाया है, गंगा की धारायें गोल आकृति में बनाई गई है और पत्थरों को भी गोलाकार बनाया गया है। इसी प्रकार का अंकन चित्र संख्या–107 में है। चित्र संख्या–108 से 109 में गंगा के चित्र का अंकन है। चित्र आकाश, वायु, जल और पत्थरों के संयोजन में बहुत सुन्दरता है। चित्र संख्या–92 से 109 तक के इन चित्रों की विवेचना के उपरान्त मेरा यह मानना है कि प्रो0 सक्सेना के द्वारा माँ गंगा की सीरीज

इतनी बड़ी संख्या में तैयार की गई है। मेरे द्वारा उनमें से मुख्य चित्र शोध प्रबन्ध में प्रस्तुत किये गये हैं। अध्ययन द्वारा पाया गया कि एक चित्र दूसरे चित्र से भिन्न दिखाई पड़ते हैं।

डॉ0 सक्सेना ने वेद और पुराण में गंगा के स्वरूप का जो चित्रण है, उसी का अंकन किया गया है। लेकिन उनके अनुसार यह सभी चित्र अध्यात्मिक दर्शन पर आधारित है। विगत् एक दशक से प्रो0 सक्सेना वेद पुराण, तंत्र–मंत्र, कुण्डली, नक्षत्र और राग–रागिनी तथा जोगनियों के तांत्रिक विधान के अध्ययन में लगे रहे। उन्होंने भारतीय चित्रकला को लेकर एक नवीन खोज की है जिसके द्वारा चित्र यंत्र बनाने की विधा को स्थापित किया है। इनका मानना है कि चित्र यंत्र की व्यवस्था पूर्ण रूप से अध्यात्म, धर्म, भौतिक विज्ञान और रसायन विज्ञान पर आधारित है। मैं उनके नवीन खोज पर भौतिक दर्शन को अंग्रेजी में प्रस्तुत कर रहा हूँ जिसका विवरण देश के बडे अखबारों में हो चुका है।

MIRACLES OF GANGA

Ansforming the croTroked movements of the cruel Naksatra-s in favour of Subject:

"CHITRAYANTRA REMEDY"

Dr. S. Saxena, D. Lit., Former H.O.D., Deptt. of Fine Arts at the University level with is experience of 35 years, has conducted a higher research in the field of the Miracles of the Ganga, Mantra, Tantra, Yantra, Kundali, Yogini, Nakstra and the mysterious science for the last 17 years.

He hs established the thesis that "The Ganga" controls the life-cycle on this planet and his Ganga - painth'lgs based on the Ravana - Sanhita offer remedies for all kinds of suffering s caused by the Naksatra-and Graha-s.

In India during the ancient times all cosmological-thought-schools considered human-body water, fire, air and sky. The concept of Yantra treats sky, earth and water as the three basic constituents. With the action of fire and air on them, the entropy (Tapas) of the system in raised. During the Sadhana of Tantra this Tapas causes ripples and wave movements in water indicaating the portions of Naksatra-s to be put on Yantra, with the placements of the Power (Shakti-s) of Brahm a, Visnu and Mahes. In this placement the Ganga is defined as the Shiva Shakti. This power, governing the life- cycle, is represented by three colours Red, Yellow and Blue. The distribution and balance of these colours direct and control the movement of life and death.

Dr. Saxena has arranged many exhibitions of the "Ganga- Yantra Painting" in the big cities of the country. Recently in October 2006, his exhibition in Mumbai Art

Gallery, Andheri (W), proved to be a centre of attraction for art lovers, media and intellectuals.

"Mantra" is a sonographic projectile produced by the vibrations of sounds that travel through air and water and extend from finite to infinity on earth and in air and sky. In water they are tanned as the Ganga-movements. They practically enact the Powers of Brahma, Visnu and Mahesa, without disturbing the fundamental laws of Physics and Chemistry as comprehended by the scientists as the laws of propagation of light, especially, the 3 colors, Red, Yellow and Blue.

But the acceptance of the immediate and the now with the long-lasting effects of Yenta is demurely more creditable than Mantra, Junta, Kundali, Yogini and Siddhi, because in Yantra the seeker's or operator's active participation is not needed, which is essential for all the other modes of propitation of good luck e.g. the hanging of the Anushantik Yantra against natural or artificial light can destroy the nasty and the negative effect from the environment and promote the desired wishes of the subject.

The working of the "Chitrayanta" to annual the evil effects of the celestial bodies and to mould them in favour can be understand with the help of the evidences cites as Yantra Vidhan Rahasya' in the Veda-s, the Purana-s and the Ravna-Sanhita. In the Agni Purana, Siva Purana, Vayu Punma and Chitrasutrarm and many other documents ofliterature of ancient times, this working is based on an operative science of physical transformation of rays refelected from colourful objects and their interaction with the atmosphere to create the desired result. Moreover there is a chemistry of colours, their physical nature, their interaction and final effecs on astrological movements and astronomical resolutions. This science of Kansatra-s has existd for very long. This is not a blind truth, put based on the real experience of truth. The writer has developed the aforesaid hypothesis into a thesis, which can be justified by the scholar. You are invited to share with the painter to discuss the operative portion of the research. Such Ganga Miracles or the Chitrayantra-s has shown the desired results to the persons sticking the Yantra-s at proper places in the family since 2003 in Mumbai too.

The rings bearing "Nags" or the precious stones are used to decrease the bad effects of the celestial bodies create the positive effect. It helps but to a single person, who wears Oxl =01 ring, but when "Chitrayants' after proper limitation and propitiation of the Divinities by the Sadhak, is hanged, there is no need of routine prayers and special worships. The only requirements are to move across the hanging, within the influence region created by Chitrayanta. This will ease the suffering and bring the benefit at large. [1]

Yoga is external realization and Moksa is internal acceptance of 'Para'. This is directly induced in the process of painting and the artist must stay in the lap of Lord Shiva to put PRANA in Chitra in Vayu Purana the minus and plus of positions of Naksatra-s can charge the fate.

यदा पचावतिष्ठनते ज्ञानानिमनसा सह
बुद्धि च न विचेष्टते तामाहुपरमा गतिम्।

अर्थात् जब इन्द्रियां ठहर जाती है, तब मन बुद्धि में चेष्टा नही रह जाती है, इसे परम ब्रह्म साक्षात्कार की स्थिति बताते हैं।

Thus Moksha is the beginning of life cycle and it is the end of death of body. Nakshtras do govern the whole

[1] डा0 एस0 बी0 एल सक्सेना के कैटलाग (2007) के विषय को लिखा है।

of life thrill. Hence Nakshtra (Graha/Stars) are of great importance in life. They must favour us too.

योवनधन सम्पत्तिप्रभुत्वंअविवेकता।

एकेकमध्यनर्थाय किमु यत्र चतुष्टयम्।

चन्द्रमा (जवानी), शुक्र+सूर्य (दौलत) और शनि+राहू (पाप) स्थिति (विनाश)

Moon = Glamour, Sukra + Surya = Wealth and Shani + Rahu = Loss of every type. Saved to place them according to needed process to put in effect. The calculation of fixed no. as for yantra gama for Surya = 15, for chandrama= 18, Mangal = 21, Budh =26, Guru = 27, Sukra=30, Sani = 23,Rahu = 36 and Ketu = 39 (Those are number to be calculated in accordance to Rashi and Janamkundali or Stars in 'Chitra Yantra' as a whole 'Ganga.

कलानां प्रवर चित्र धर्म कार्माथ मोक्षदम्।

In Yaupurana the minus and plus of position of Nakshtra can charge the fate.

दृश्यश्च तथा मात् अगोंजांगनि सर्वशः।

(इस प्रकार नृत्य का प्रत्यक्ष स्पन्दन (वाइब्रेशन) का सूत्र है।)

The movement of currents create vibration of dramatic activity in the body with thrilling effects of

coloured rays, transformed to reactionary effects on and in air with water current (Ganga-Waves). The correct valuable Nagas are purchased and used in ring, while Chitra Yanta will charge your luck (stars) in your favour immdiately.

Ganga is mother of human race. She nurses her children and takes care of them and does great miracles in one's life but Ravna Sanhita written by great Pandit Ravna that the effects of current of 'Ganga Waves in form of Chitra Yantra' play prominent role in moulding the cruel stars in favour of the subject in more effective manner than the stone rings in fingers, So, do have the **'Ganga Yantra Paintings'** in your family by hanging them in your home.[2]

वर्तमान में प्रो0 सक्सेना ने जो अपना नवीन शोध प्रस्तुत किया है उसके अनुसार गंगा को माध्यम बनाकर नवग्रह—चन्द्रमा, सूर्य, बृहस्पति, बुध (उच्च ग्रह) अर्थात पुण्य ग्रह तथा मंगल, शुक्र, शनि, राहु, केतु (पाप ग्रह) के सन्तुलित समायोजन के द्वारा लाल, पीला और नीले रंग के प्रयोग से चित्र यंत्र की रचना की है। जिसमें इन्होनें 200 के करीब चित्र बनाये हैं उनमें से महत्वपूर्ण चित्रों को मैंने अपने शोध में प्रयोग किया है। ये चित्र संख्या—110 से लेकर 125 तक के हैं आपके अनुसार चित्र—यंत्र को जिस परिवार में टांगा जायेगा वहाँ पाप ग्रहों का असर कम हो जायेगा और परिवार में सुख

[2] डा0 एस0 बी0 एल0 सक्सेना की प्रदर्शनी के कैटलाग (2007) से प्राप्त किया गया है।

शांति रहेगी।

प्रो0 सक्सेना भारत के कई बड़े शहरों में इन चित्रों की प्रदर्शनी लगा चुके हैं। नवम्बर में बम्बई आर्ट गैलरी, अन्धेरी और अप्रैल में इसी आर्ट गैलरी में दुबारा प्रदर्शनी लगायी। इन दोनों ही प्रदर्शनियों में इन चित्रों का महत्व सामने आया जिन लोगों ने यह चित्र खरीदे हैं उन्हें इनसे बहुत लाभ हुआ है। प्रदर्शनियों के बीच में जो दर्शक वहाँ आये और डॉ0 सरन ने उनकी समस्याओं को अध्यात्म से दूर किया जिसके फलस्वरूप वहाँ पर 100 से अधिक उनके शिष्य बन गये हैं, और वे उनको गुरू जी के नाम से पुकारते है। ज्यादातर लोग उन्हें सिद्ध व्यक्ति मानते हैं। क्योंकि वे चित्र बनाते–बनाते एक साधक हो गये हैं। पुजापाठ के साथ इन नवीन चित्रों को ही बनाने में लगे रहते हैं। उनका अधिक समय पूजापाठ में, चित्र बनाने में और धार्मिक ग्रन्थों के पढ़ने में लगता हैं।

परिशिष्ट—1

(डॉ० एस०बी०एल० सक्सेना के चित्रों का संकलन)

प्रस्तुत शोध—प्रबन्ध में, मैंने डॉ० सक्सेना के चित्रों को छः भागों में विभाजित किया है, जो चित्र संख्या—1 से 125 तक के हैं।

1. पारिवारिक चित्र
2. अध्यापक के रूप में
3. समीक्षावाद पर आधारित
4. प्रकृति चित्रण
5. गंगा सीरीज
6. तांत्रिक चित्र

शोध का निष्कर्ष

- शोध की परिकल्पना
- शोध कार्य का स्वरूप
- शोध का महत्व
- शोध का महत्पूर्ण पक्ष

शोध का मूल्यांकन और निष्कर्ष

कला विद् डॉ0 एस0 बी0 एल0 सक्सेना के चित्रण ने मुझे बहुत ज्यादा प्रभावित किया। उनके चित्रों की विधि एवं विषय को देखकर मुझे आपके बारे में जानने की उत्सुकता हुयी, संयोगवश मेरे भ्राता बरेली में रहते हैं मेरा संयोग ऐसा रहा कि मुझे आपसे मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ और आपके चित्रों के विषय में जो उत्सुकता थी वो आपसे मिलकर मुझे सन्तुष्टी मिली। मैने निश्चय किया कि चित्रकार डॉ0 सक्सेना हर दृष्टिकोण से एक सफल चित्रकार है, एक सफल शिक्षक है मैने पाया कि डॉ0 सक्सेना एक संत प्रवृति के एवं कला पक्ष को महत्व देने वाले गम्भीर चित्रकार है।

इस प्रकार इनके व्यक्तित्व एवं चित्रण विधि एवं उच्च कोटि के चित्रों से प्रभावित होकर मेरे शोध का श्रोत संचालित हुआ। मैं यह बात स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मैने यह शोध कार्य किसी पूर्वाग्रह एवं संवेदनशीलता के आधार पर नहीं किया है। वरन् व्यक्तिगत सम्पर्क व सर्वेक्षण की प्रक्रिया से पूर्ण किया गया है।

शोध की परिकल्पना

उपरोक्त प्रसंग मैं, मैने अपने शोध के व्यक्तिगत आधार को स्पष्ट कर दिया है। इस आधार पर ही शोध का विशिष्ट उद्देश्य निश्चित होता है। जिसको प्रथम स्वरूप में परिकल्पना के आधीन लेना आवश्यक है।

मैंने कलाविद् चित्रकार डॉ0 सक्सेना को अपने शोध विषय के रुप में चयनित किया। इसके आधीन इनके व्यक्तित्व चित्रकला के स्वरूप चित्रण की विधि और उनकी चित्रण की प्रक्रिया को इस उद्देश्य से केन्द्रित किया है कि वह कौन सी विशेष स्थिति है, इस सोच ने शोध की परिकल्पना को जन्म दिया है। ''कला विद चित्रकार डा0 एस0 बी0 एल0 सक्सेना का कला शिक्षण में योगदान'' परिकल्पना का यह पक्ष देखने में बड़ा सरल प्रतीत होता है लेकिन विश्लेषण मूल्यांकन एवं समालोचन के उपरान्त इस परिकल्पना को सिद्ध करना यदि असम्भव नहीं है, तो सरल भी नहीं है इस परिकल्पना को मैने अपने शोध कार्य से सिद्ध कर दिया है।

शोध कार्य का स्वरूप :

प्रस्तुत शोधकार्य पूर्ण रूप से मौलिक है, क्योंकि कलाविद् चित्रकार डॉ0 एस0 बी0 एल0 सक्सेना के विषय में अभी तक शोध कार्य नहीं हुआ है। वास्तविकता तो यह है कि ऐसे समकालीन एवं तांत्रिक प्रवृत्ति के चित्रकारों के ऊपर अभी तक शोधकार्य नहीं हो पाया है । क्योंकि आधुनिक भारत में नवीन एवं मौलिक विषयों पर चिन्तन और लेखन अपर्याप्त है। मेरा यह सौभाग्य है कि डॉ0 सक्सेना अभी भी अनवरत रूप से कला साधना में लगे हुये हैं। यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि शोध कार्य व्यक्तिगत सम्पर्क साक्षात्कार व भेंटवार्ता पर आधारित होते हुये सफलता पूर्वक नियोजित कर लिया गया है। अतः मैं स्पष्ट करना चाहता हूँ कि शोध प्रक्रिया मूल रूप से कलाविद् चित्रकार डॉ0 सक्सेना के सम्पर्क कि व्यवस्था पर ही केन्द्रित है।

शोध का महत्वः

प्रत्येक शोध कार्य का अपना महत्व होता है एतिहासिक परिपेक्ष्य में चुने गये विषयों पर जब शोधकार्य किया जाता है तो विकास क्रम शैली परिवर्तन एवं कला संस्कृति के पक्ष को मुख्य रूप से आधार बनाया जाता है। लेकिन जब किसी मौलिक विषय का सम्बन्ध जीवित चित्रकार से हो तो चित्रण प्रक्रिया और सृजन पक्ष से होता है। तो ऐसे शोध कार्य का महत्व और अधिक बढ़ जाता है। क्योंकि वर्तमान में कभी—कभी अंधकार के लोप हो जाता है। जैसा कि देखा गया है मेरा यह शोध ग्रन्थ भारतीय चित्रकला में आनेवाले समय में चित्रकारों को कला जगत में एक मूर्त स्थान प्राप्त करायेगा। इस शोध ग्रन्थ के द्वारा कलाविद् चित्रकार डॉ0 सक्सेना की शोध परिकल्पना समाज के प्रति सम्बन्ध राष्ट्रीय भावना एवं तांत्रिक प्रवृति आदि अनेक मनोवैज्ञानिक रहस्यों का उदघाटन किया जा सकता है। इस प्रकार मेरा यह मानना है कि यह शोध प्रबन्ध आने वाले समय में एक महत्वपूर्ण उपलब्धि के रूप में भारतीय चित्रकला के इतिहास में मान्य होगा।

शोध का महत्पूर्ण पक्ष :

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के द्वारा कुछ महत्वपूर्ण बिन्दु उभर कर सामने आते हैं जिनके द्वारा डॉ0 सक्सेना के चित्रों में कुछ आधार भूत तात्विक विधानों में निम्न प्रकार से प्रस्तुत कर रहा हूँ। जिसमें डॉ0 सक्सेना ने आरम्भिक चित्र जलरंग पद्धति में बनाये, जिसमें उन्होंने पेस्टल कलर से चित्र संयोजन किया। उनके प्रारम्भिक चित्र आकार में ज्यादा बड़े नहीं होते उनका आकार 12 X 10 इंच रहा है।

इनके चित्रों का विषय धार्मिक व सामाजिक रहा है। इसमें उन्होंने नव वधु की मुँह दिखाई, नवेली वधु को पति की प्रतीक्षा, ग्रामीण क्षेत्रों में औरतों का कुओं से पानी भरना, माँ का बच्चों को दूध पिलाना, पहाड़ी क्षेत्र के लोगों का भेड़ चराना, गांव के मेले, नट के तमाशे आदि में डा0 सक्सेना ने भारतीय चित्रकला में अजन्ता की शैली को बहुत महत्व दिया। डा0 साहब आज भी अपने चित्रण में अजन्ता की रेखांकन पद्धति पर विशेष बल देते हैं। आपका कहना है कि वह भारतीय चित्रकला के चित्रकार है। उन्होंने भारतीय चित्रकला के प्रथम गुण, रेखा को विशेष महत्व दिया है। इसके बाद आपने अपने चित्रण में बंगाल की वॉश टेक्निक में आरम्भ किया। क्योंकि यह प्रोफेसर क्षितेन्द्रनाथ मजूमदार से प्रभावित थे। अलीगढ़ विश्वविद्यालय के प्रो0 अजमत शाह का भी इनकी चित्रकला में विशेष प्रभाव रहा है। बाद में चित्रों को टेम्परा पद्धति में जलरंगो से बनाया। प्रारम्भिक चित्रों का विषय सामाजिक रहा फिर दृश्य चित्रण में रूचि लेने लगे। प्रो0 रामचन्द्र शुक्ल के समीक्षावादी प्रभाव से और समीक्षावादी विषयों में सामाजिक कुरूतियों और राजनैतिक अनैतिकता पर अनेक चित्र बनाये, आपने सदैव अपने चित्रों की प्रदर्शनिया की है। इसके साथ ही डॉ0 सरन बिहारी सक्सेना कला इतिहास की समीक्षा एवं आलोचना प्रशिक्षण और सौन्दर्य शास्त्र के अध्ययन और अध्यापन में दक्ष है। वे चित्रकला के महान कलाकार है। आप अकादमिक कार्य जिनमें प्रश्न–पत्र निर्माण मूल्यांकन तथा पी0–एच0 डी0 एवं डी0 लिट् की मौखिक परीक्षा के लिए सम्बद्ध रहे हैं। अनेक शोध पत्रकाओं के साक्षात्कार व शोध पत्रिका के सदस्य रहे है। इनके विभिन्न शैक्षणिक एवं कलात्मक कार्यों की विवेचना अनेक बार दूरदर्शन इत्यादि पर प्रदर्शित हो चुकी है।

अब मैं इनके निष्कर्षों को प्रस्तुत कर रहा हूँ:–

1:– मैने अपने शोध में सर्वप्रथम प्रो0 एस0 बी0 एल0 सक्सेना के जीवन वृतांत को उनके जन्म से लेकर वर्तमान तक प्रस्तुत किया है और जिसके आधार पर मैं इस निष्कर्ष पर पहुचता हूँ कि ''प्रो0 सक्सेना ने घोर विपत्तियों और कठिनाईयों अपने जीवन में कभी महत्व नहीं दिया है सत्य तो यह है कि उन्होंने सच्चे जीवन आचरण, कर्तव्य निष्ठा और परोपकार की भावना को सहारा लेकर एक शून्य के जीवन स्तर से चलकर अपनी जीवन यात्रा को शत–प्रतिशत की उपलब्धि प्राप्त की है उनका जीवन एक आदर्श है। जिससे ऐसे अनेक निर्धन छात्रों को लाभ हो सकता है कि जो अभावग्रस्त स्थिति में कुछ विशेष करने से डरते हैं।''

2:– प्रो0 सक्सेना ने प्राथमिक शिक्षण से लेकर माध्यमिक और विश्वविद्यालय स्तर का प्रशिक्षण प्राप्त किया है उन्होंने जिस स्तर पर भी कला को पढ़ाया है अपनी कीर्ति स्थापित की है। उनके छात्र और छात्रायें उनके शिक्षण से बहुत प्रभावित रहें हैं जिसके फलस्वरूप वे लोग उनका बहुत अधिक आदर करतें हैं। वास्तव में डा0 सक्सेना एक आदर्श शिक्षक रहें हैं। मेरा मत यह है कि कला शिक्षकों को उनके शिक्षण कार्य से मार्ग दर्शन प्राप्त करना चाहिये।

3:– प्रो0 सक्सेना कला शिक्षण में कला पर उच्चस्तरीय शोध करने और कराने वाले एक विशिष्ट विद्वान स्थापित हो चुके हैं। उन्होंने स्वयं पी0–एच0डी0, डी0लिट0 के अलावा यू0जी0सी0 के कई शोध कार्य पूर्ण किये हैं। शोध शिक्षक के रूप में उन्हें एक विशेष स्थान प्राप्त हो चुका है। भारतवर्ष के विभिन्न विश्वविद्यालयों में इस कार्य के लिये उनका बहुत सम्मान है। मैं निष्कर्षतः यह कह सकता हूँ कि ''प्रो0 सक्सेना चित्रकला में शोध के

पितामह माने जातें हैं और विश्वविद्यालय और महाविद्यालय के शिक्षक बहुत बड़ी सख्या में उनके निर्देशन में शोध कर चुके हैं। उनके निर्देशन में शोध करने में बहुत मेहनत करनी पड़ती है। जिसके परिणाम स्वरूप छात्र एक मौलिक और स्तरीय शोध ग्रन्थ की रचना करने में सफल हो जाता है।''

4:– प्रो0 सक्सेना एक अच्छे कला शिक्षक, उच्चकोटि के शोध निर्देशक होने के साथ–साथ चित्र सृजना में भी लगातार जुडे रहें हैं, उन्होंने जल रंग पद्धति में वॅाश तकनीक और टेम्पर तकनीक में प्रारम्भिक चित्र बनाये हैं लेकिन पिछले तीन दशक से तैल रंगों में ही चित्र बनातें हैं। उन्होंने बताया कि वह अपने चित्रों को समाज के कल्याण के लिए विषय चुनकर बहुत लम्बे समय तक चित्र बनाते रहे। सन् 1980 से लेकर 1985 तक उन्होंने प्रो0 रामचन्द्र शुक्ल के समीक्षावादी दर्शन के अधीन बहुत चित्र बनाये हैं और सन् 1995 के बाद वे भारतीय चित्रकला में मोक्षगामी विषय पर शोध करने में लग गये और उन्होंने भारतीय चित्रकला का एक नया स्वरूप जिसे वे चित्र यंत्रो के नाम से पुकारतें हैं, समाज के सामने प्रस्तुत किया है और अब वे चित्र यंत्रो के उपर ही चित्रों का सृजन कर रहें हैं और विभिन्न स्थानों पर अपने चित्रों की प्रदर्शनियां लगा रहे है। 2007 में इन चित्रों की प्रदर्शनियां बम्बई में दोबारा लगा चुके है। इस प्रकार निष्कर्षतः मैं मानता हूॅं कि ''प्रो0 सक्सेना एक प्रगतिशील चित्रकार हैं उनके चित्रों में भारतीय चित्रकला की आत्मा निवास करती है और उनकी वर्तमान की चित्रयंत्रों की खोज भारतीय चित्रकला को विश्व में एक नवीन स्वरूप प्रदान करने में सफल हो सकती है क्योंकि इस विषय पर अभी तक न तो किसी ने सोचा है और न ही सोच रहा है देखने और सुनने वाले अचंभित हैं।

उपरोक्त महत्वपूर्ण बिंन्दुओं को प्रकाश में लाने के पश्चात् मेरा यह मत है कि डॉ0 सक्सेना एक महत्वपूर्ण शख्सियत है। अतः निष्कर्षतः मैं यह कह सकता हूँ कि सक्सेना का कला शिक्षण में विशेष योगदान रहा है और वह एक संत प्रवृति के व्यक्ति हैं। कला शिक्षण में किया गया योगदान अत्यन्त सराहनीय है, क्योंकि जिस मुकाम पर वह अभी है वहाँ पर हर एक की पहुँचने की बात नहीं है। चित्रकार डॉ0 सक्सेना कला सृजना के पक्ष को एवं उनके कला शिक्षण में किये गये योगदान को यदि आज का चित्रकार समझने का प्रयत्न करें और उसी मेहनत को आत्मसात करे तो आज हर व्यक्ति डॉ0 सक्सेना के समक्ष पहुँचने में सफल होगा ऐसा मेरा मानना है।
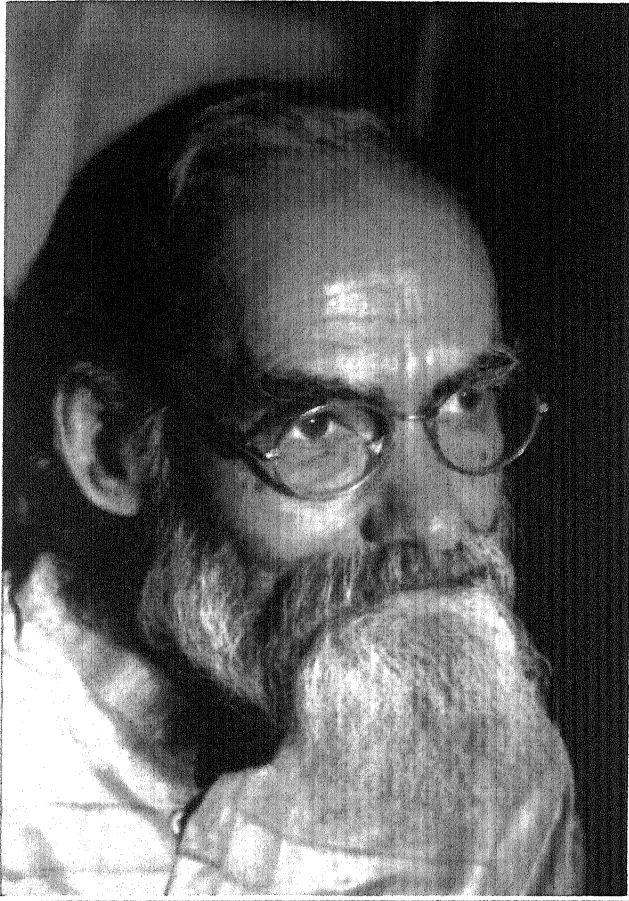
चित्र
संख्या–1
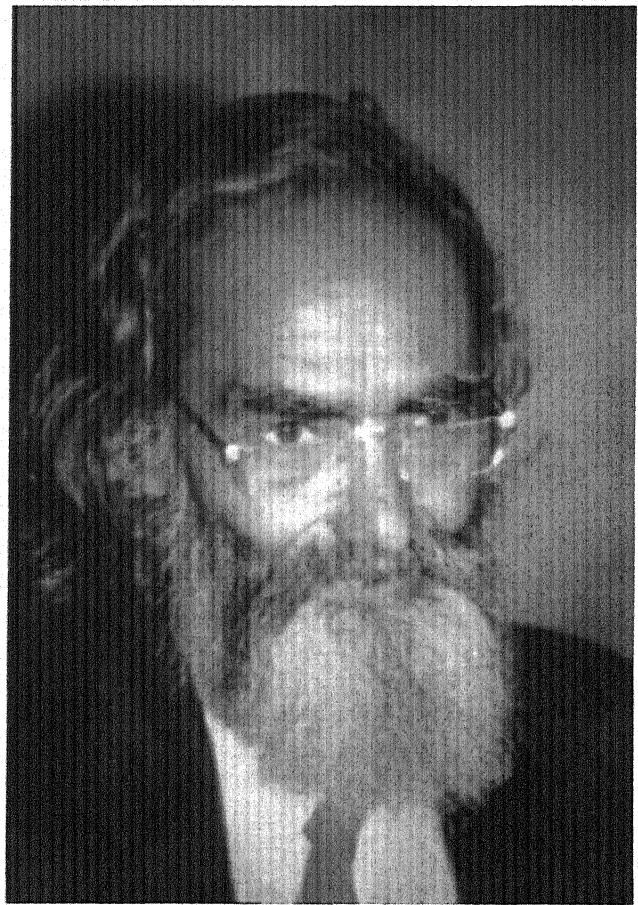
चित्र
संख्या–2

चित्र
संख्या–3
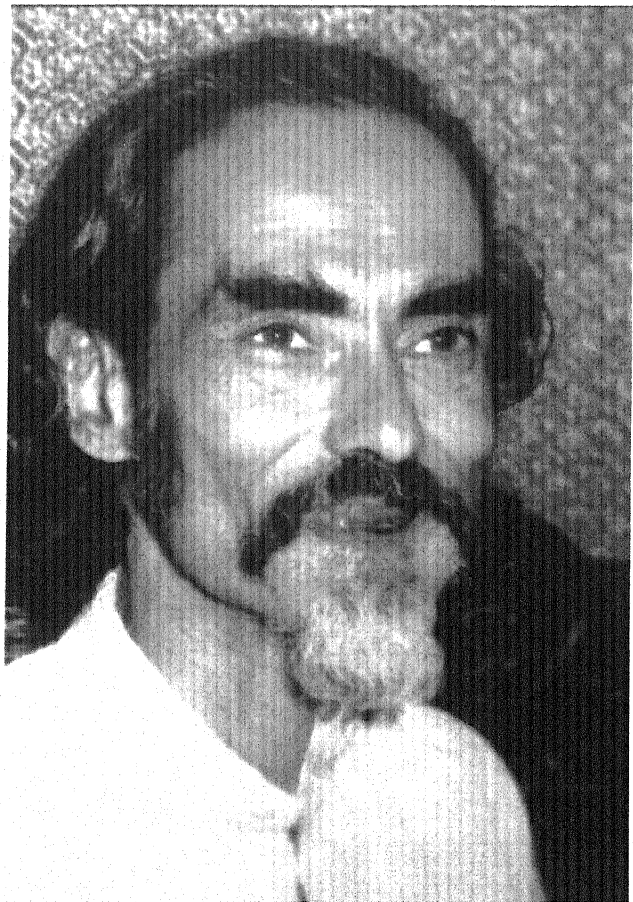
चित्र
संख्या–4

चित्र संख्या–5
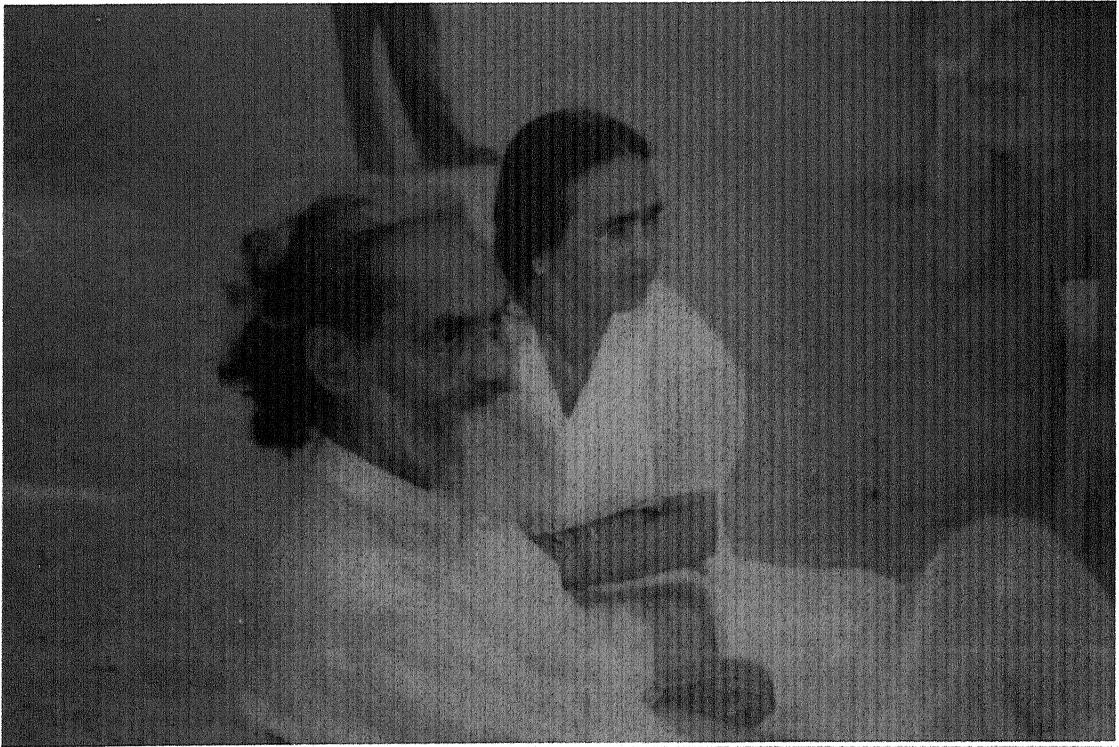
चित्र संख्या–6

चित्र संख्या–7
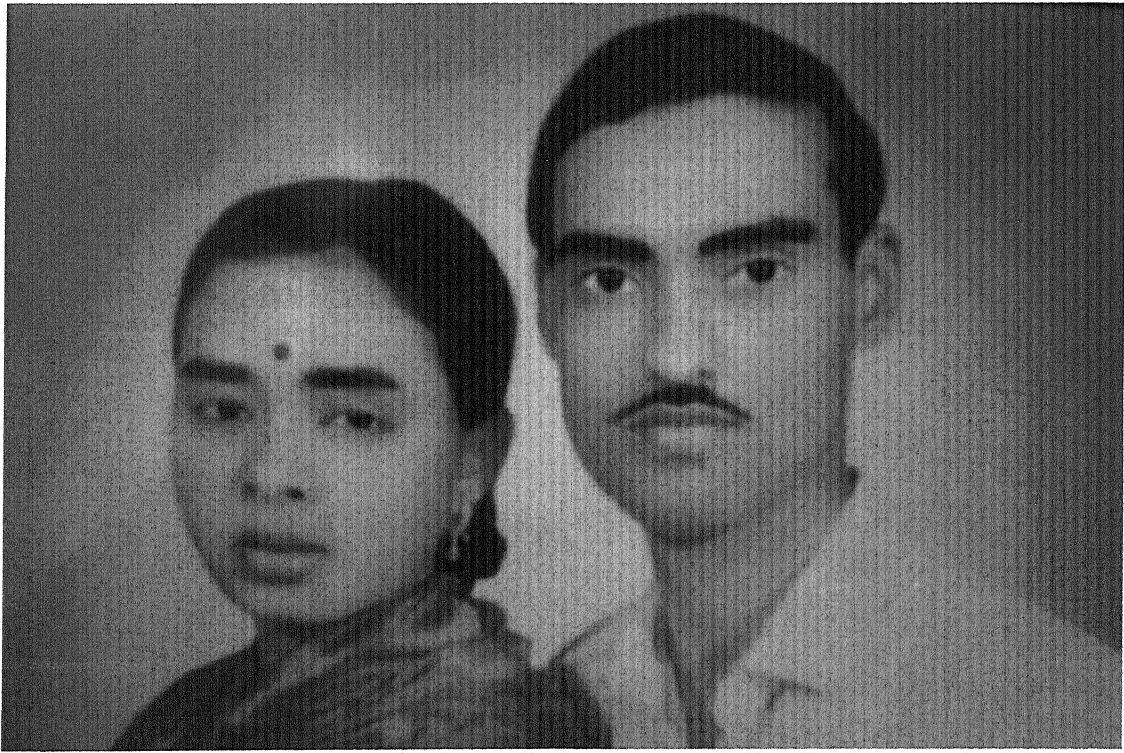
चित्र संख्या–8

चित्र संख्या–9
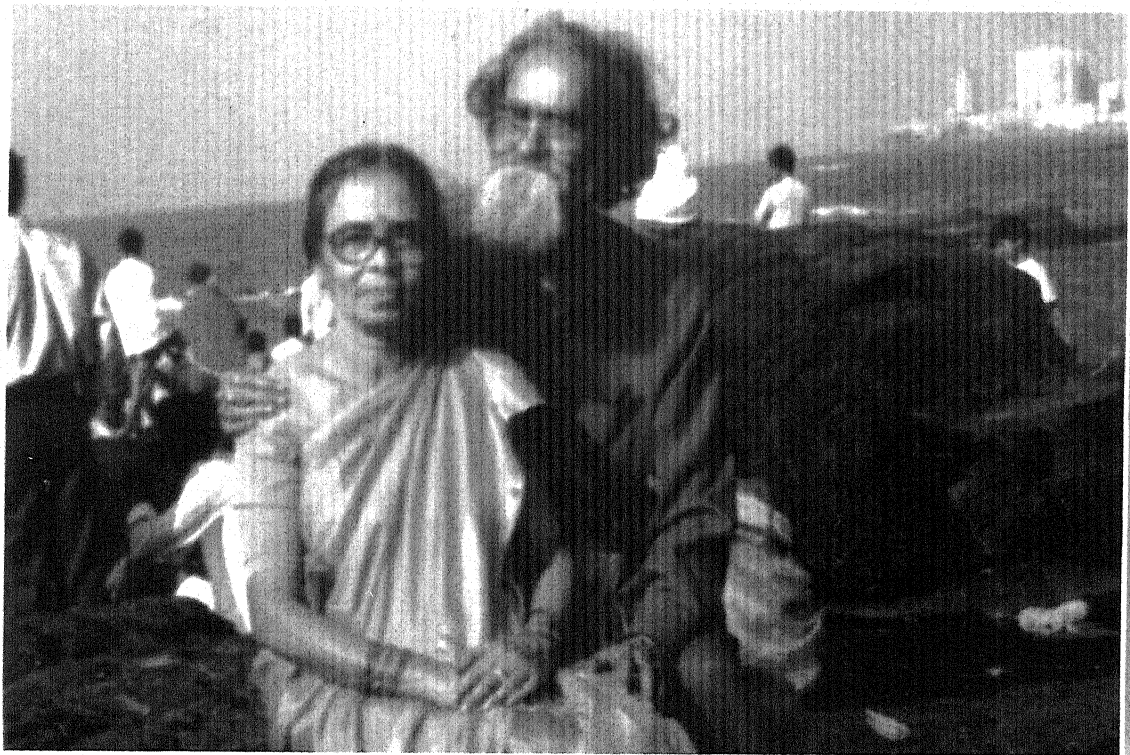
चित्र संख्या–10
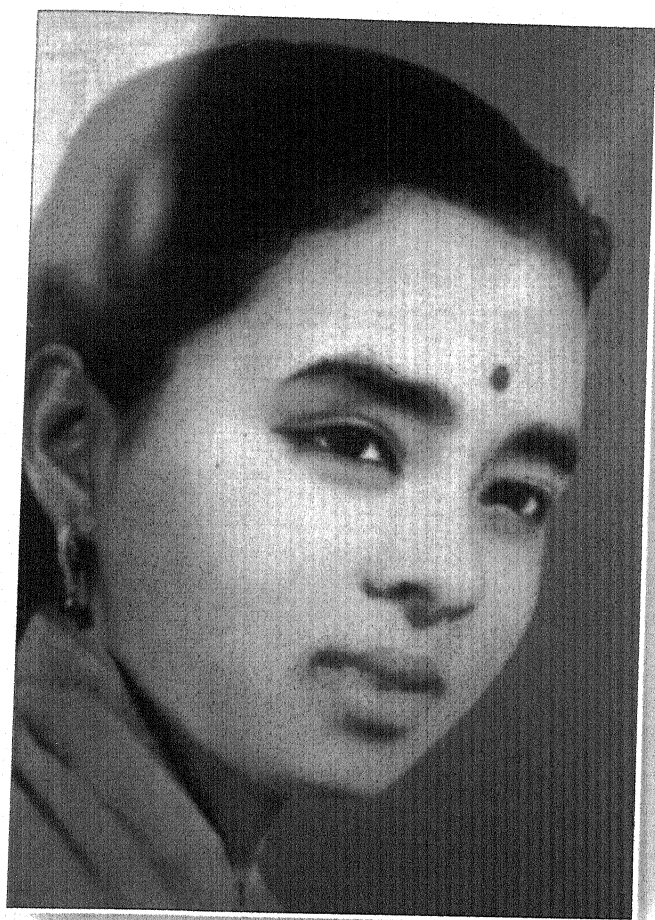
चित्र
संख्या–11

चित्र
संख्या–12

चित्र संख्या–13

चित्र संख्या–14
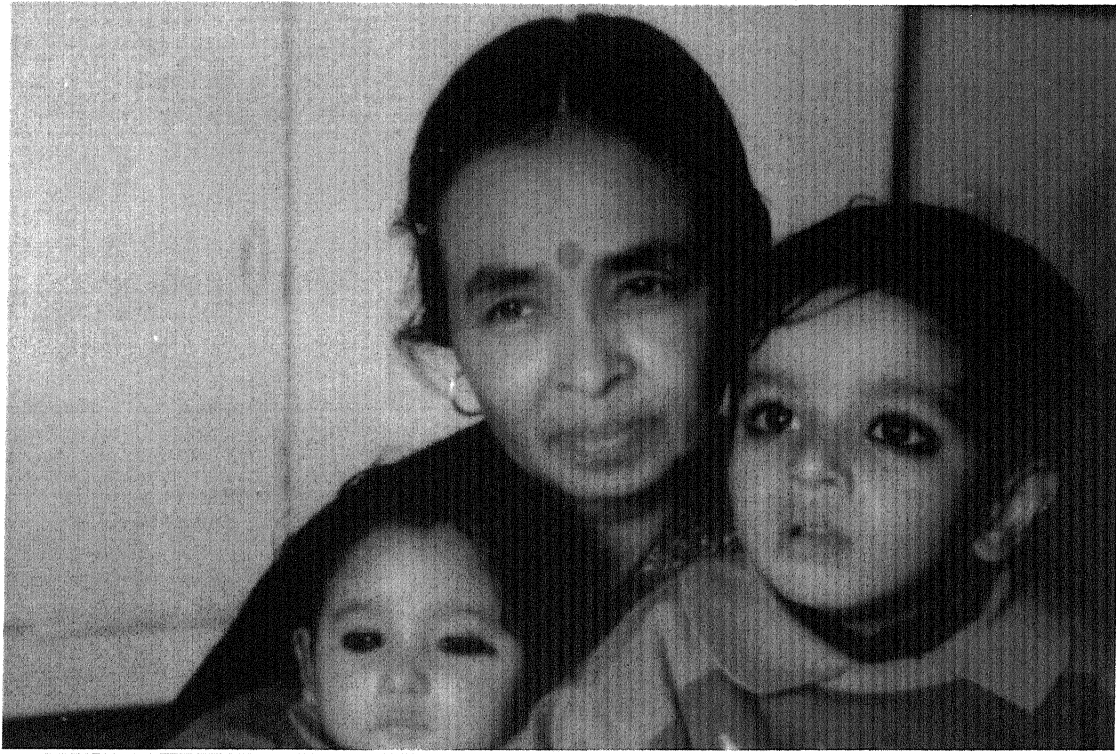
चित्र संख्या–15

चित्र संख्या–16

चित्र संख्या–17
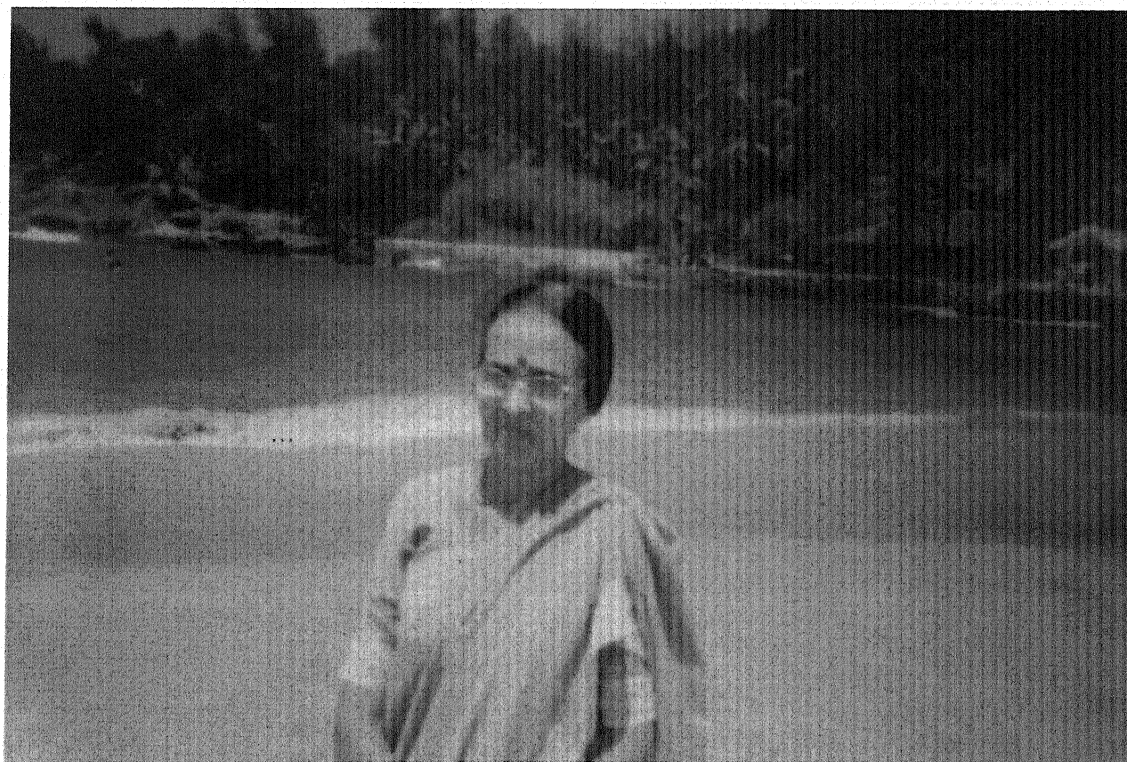
चित्र संख्या–18
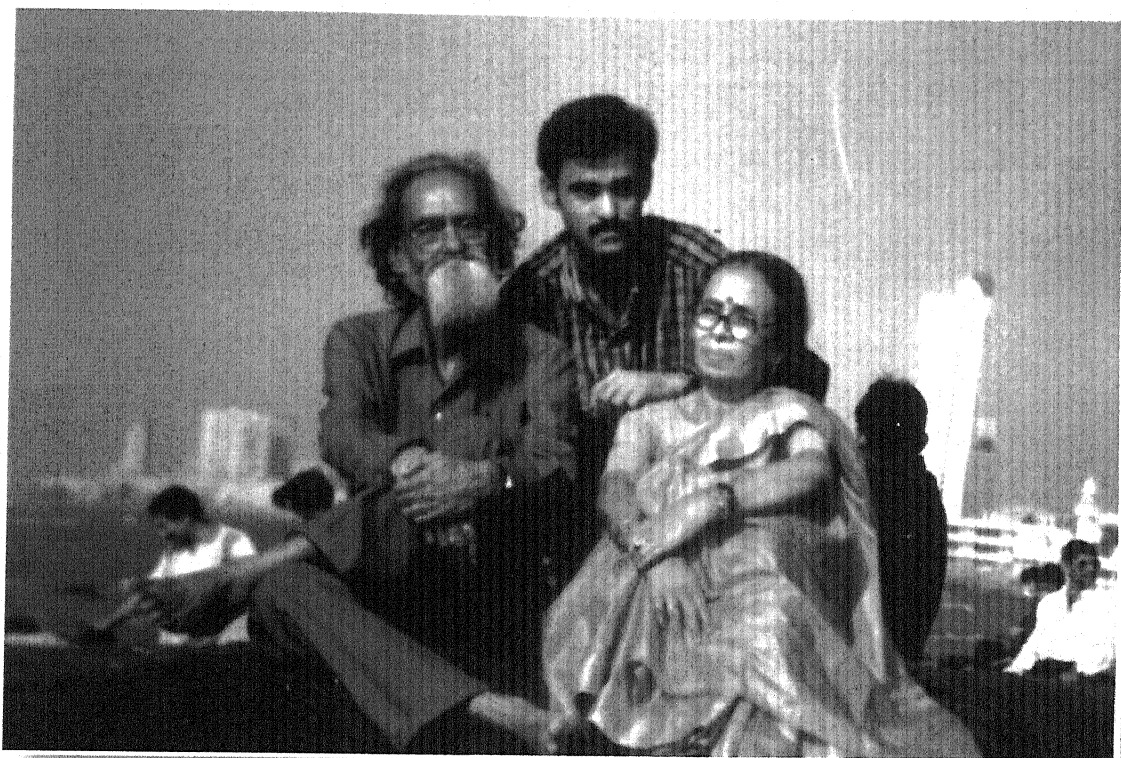
चित्र संख्या–19
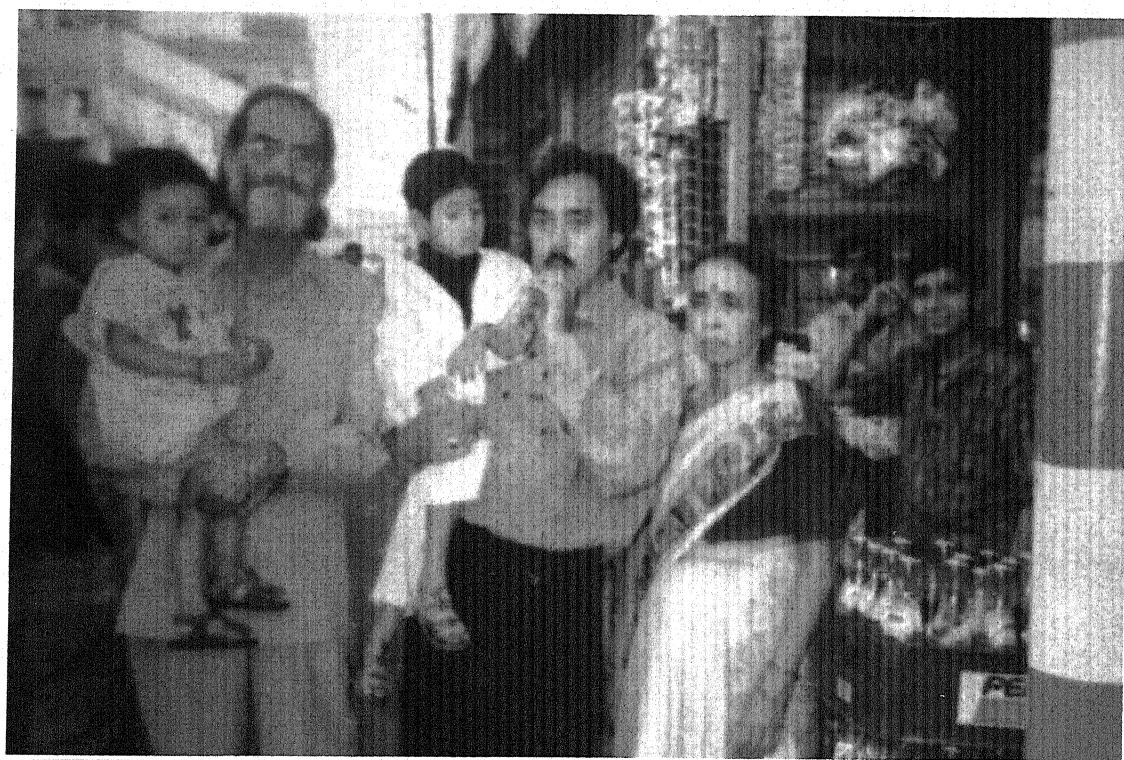
चित्र संख्या–20

चित्र संख्या–21
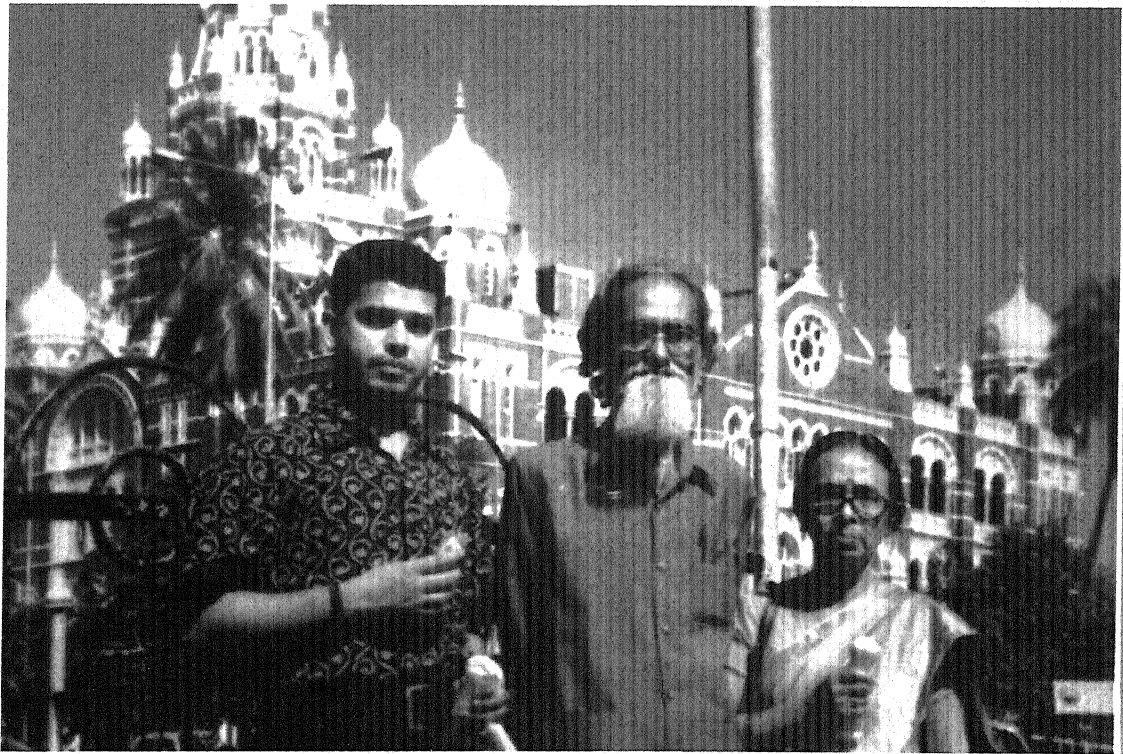
चित्र संख्या–22

चित्र संख्या–23

चित्र संख्या–24
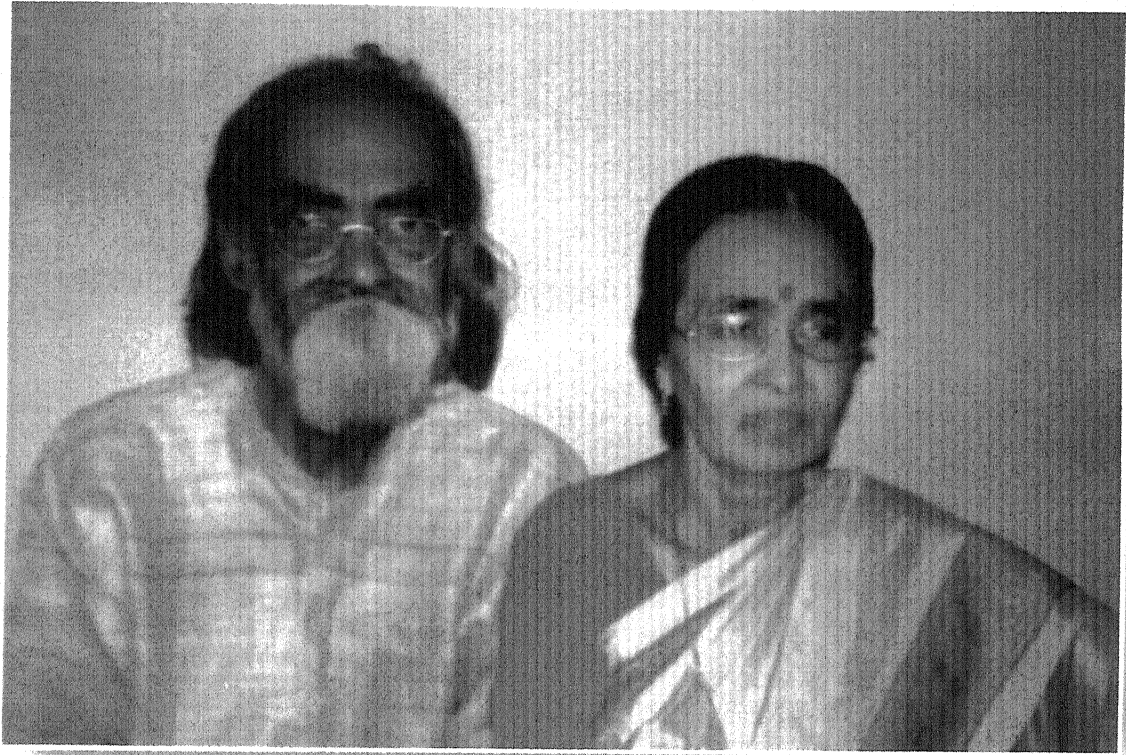
चित्र संख्या–25

चित्र संख्या–26

चित्र
संख्या—27
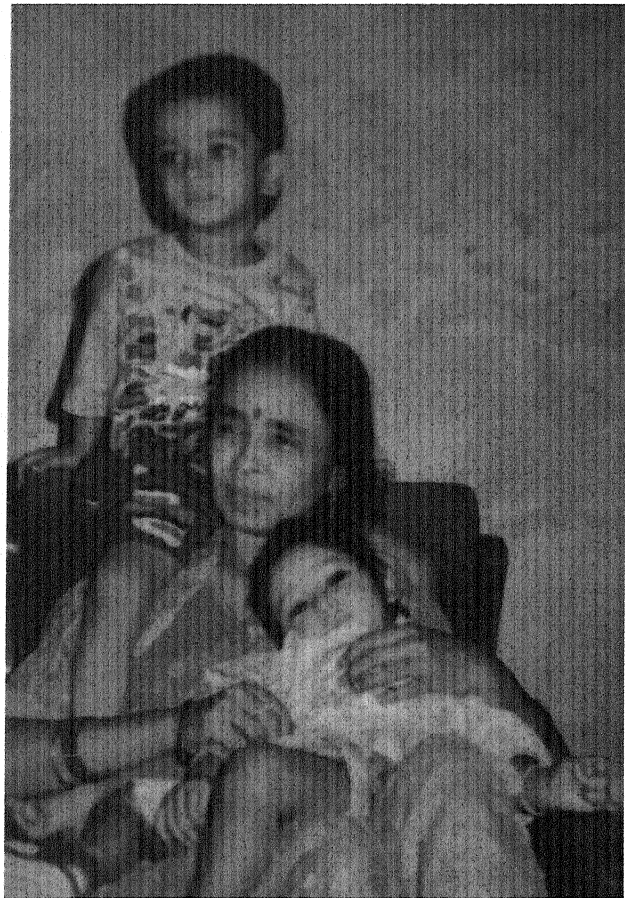
चित्र
संख्या—28

चित्र संख्या—29

चित्र संख्या—30

चित्र संख्या–31
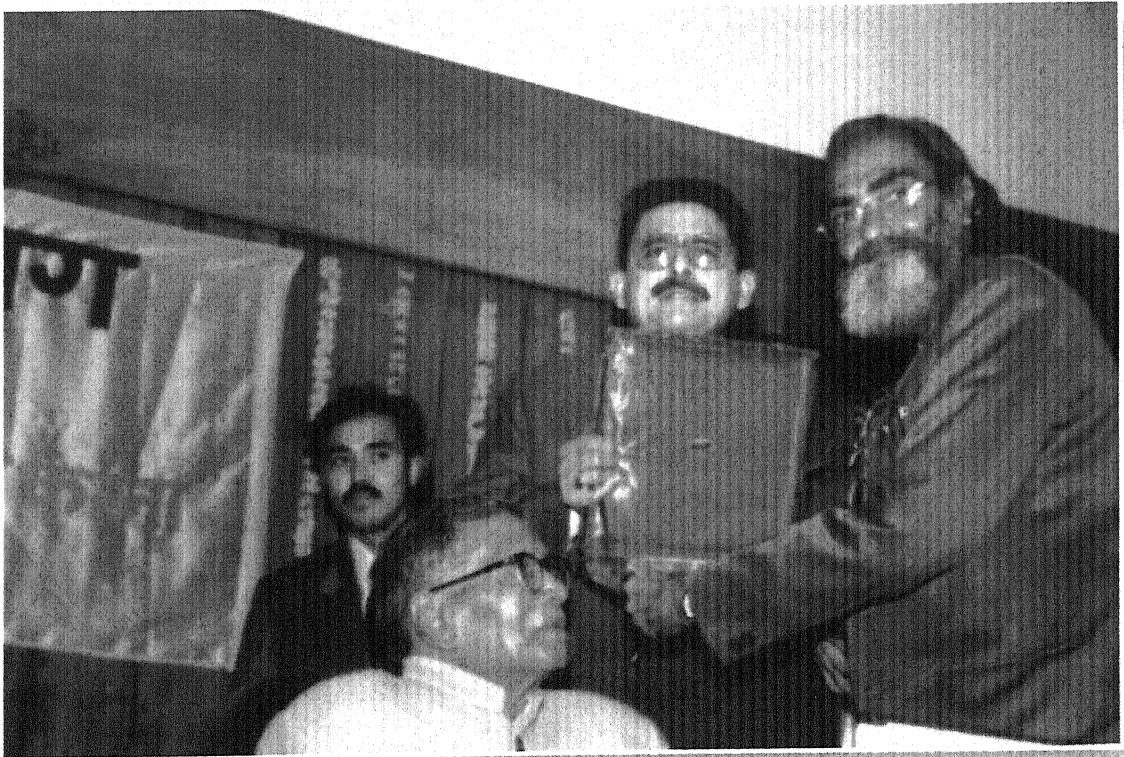
चित्र संख्या–32

चित्र संख्या—33

चित्र संख्या—34

चित्र संख्या—35

चित्र संख्या—36

चित्र संख्या–37

चित्र संख्या–38
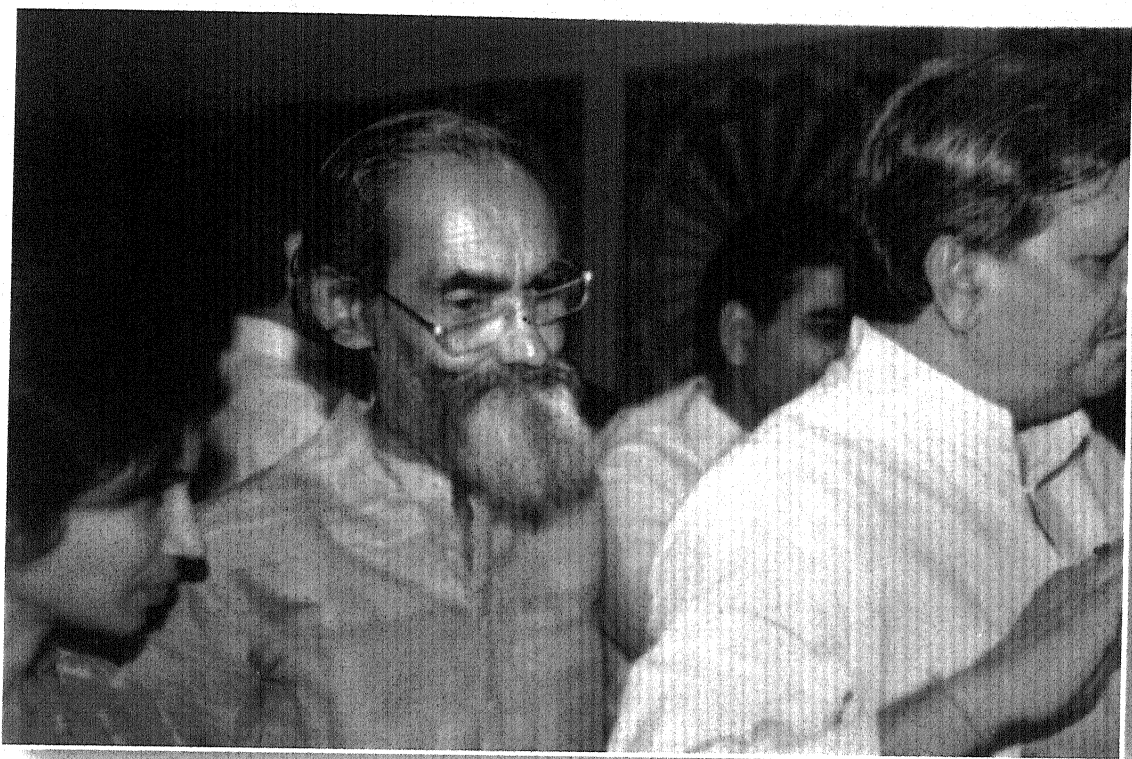
चित्र संख्या–39

चित्र संख्या–40
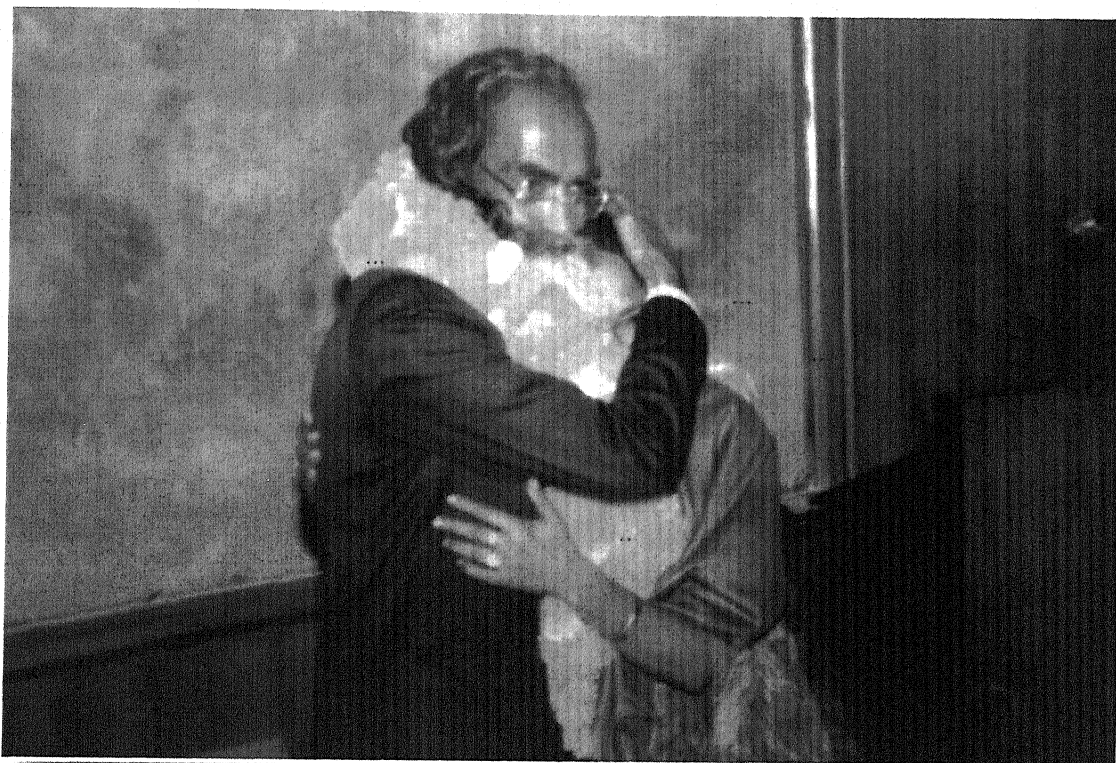
चित्र संख्या–41

चित्र संख्या–42
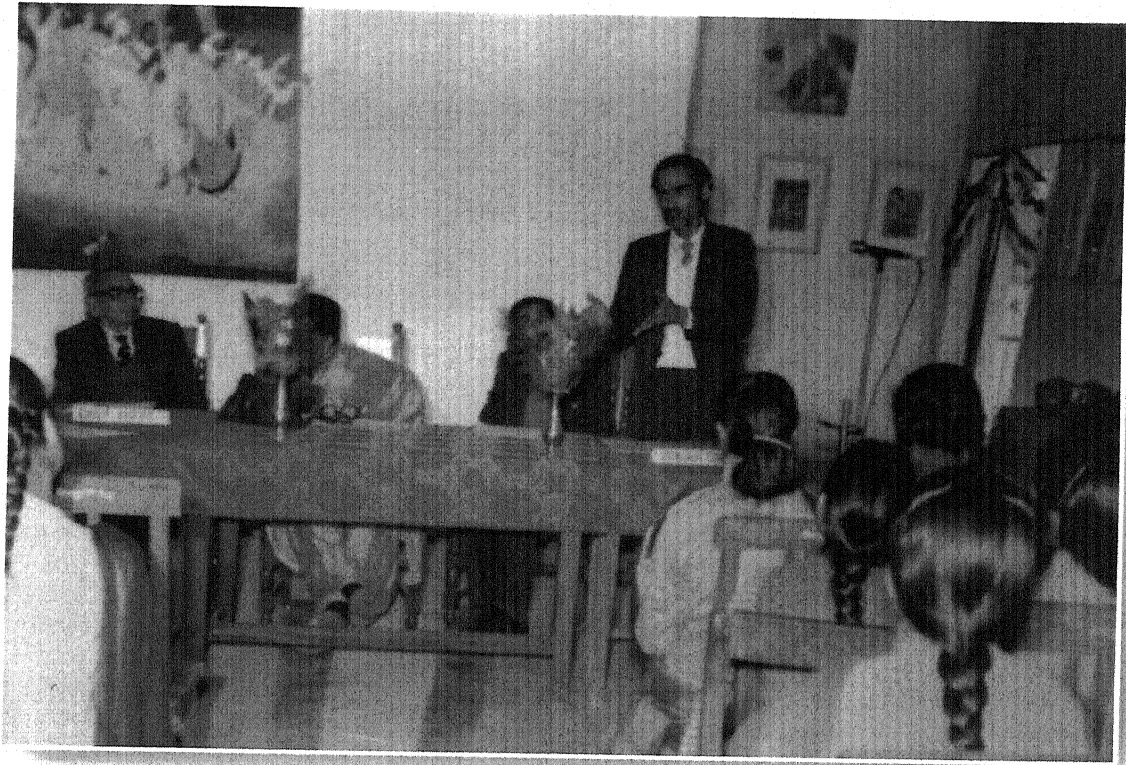
चित्र संख्या–43

चित्र संख्या–44

चित्र संख्या–45

चित्र संख्या–46
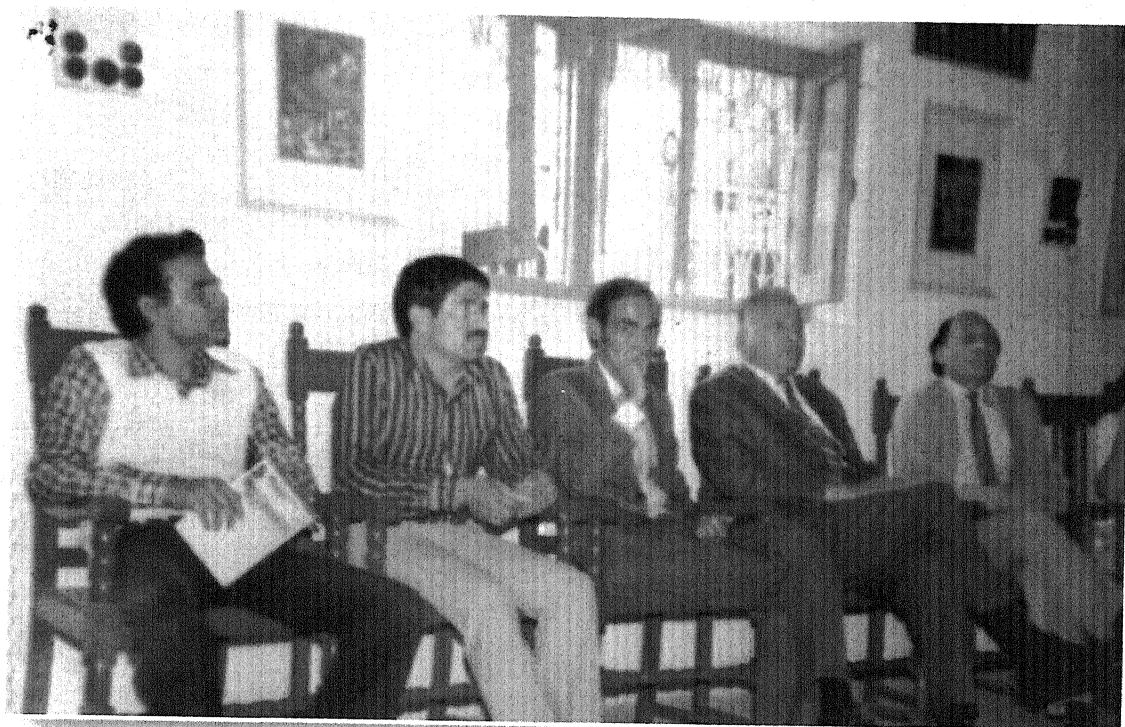
चित्र संख्या–47

चित्र संख्या–48

चित्र संख्या–49

चित्र संख्या–50

चित्र संख्या–51

चित्र संख्या–52
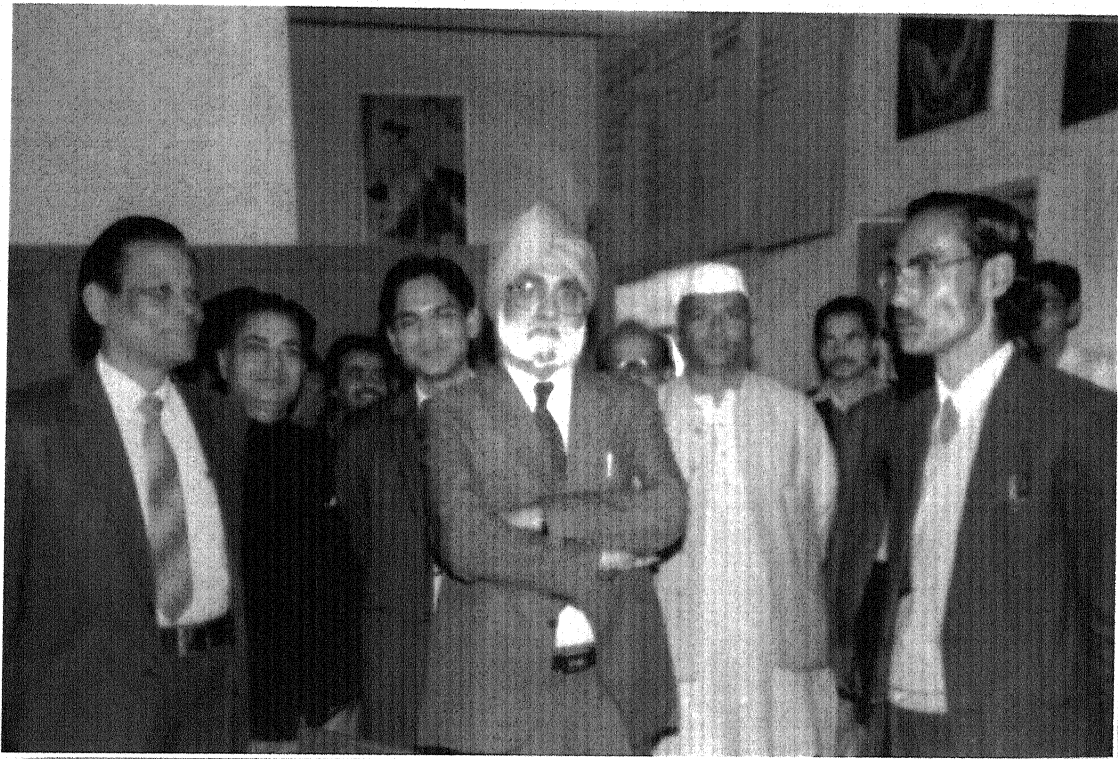
चित्र संख्या–53

चित्र संख्या–54
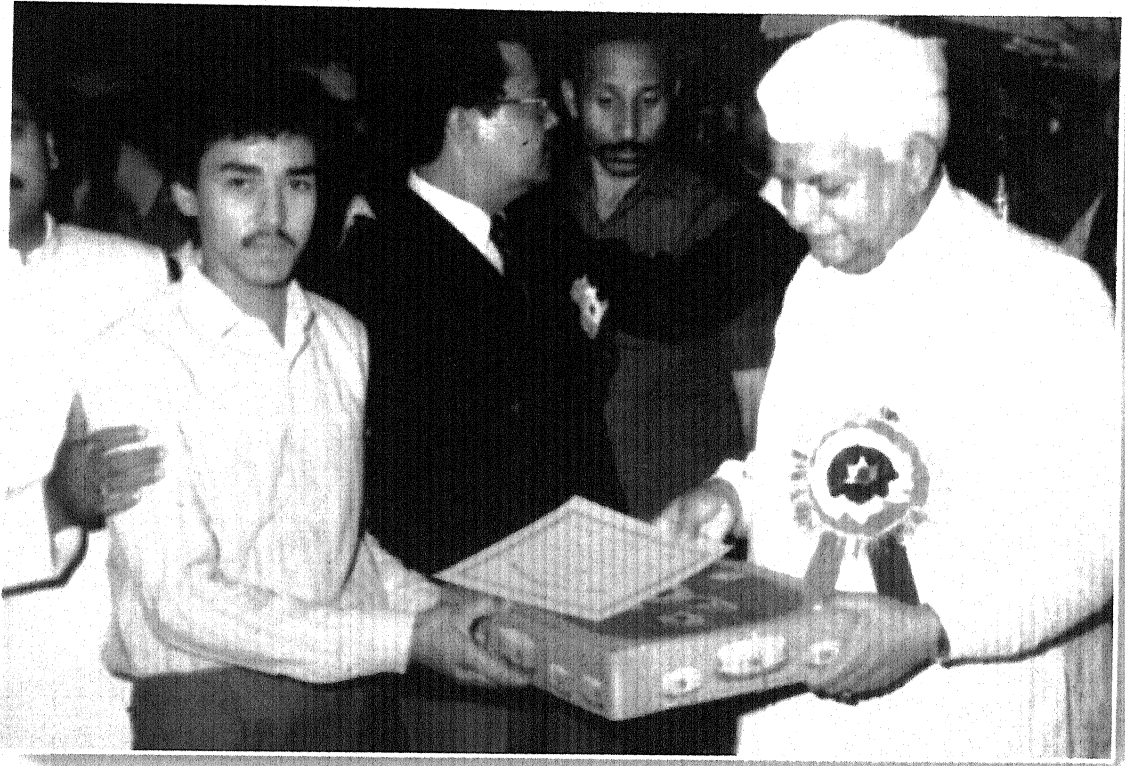
चित्र संख्या–55

चित्र संख्या–56

चित्र संख्या–57

चित्र संख्या–58

चित्र संख्या–59

चित्र संख्या–60
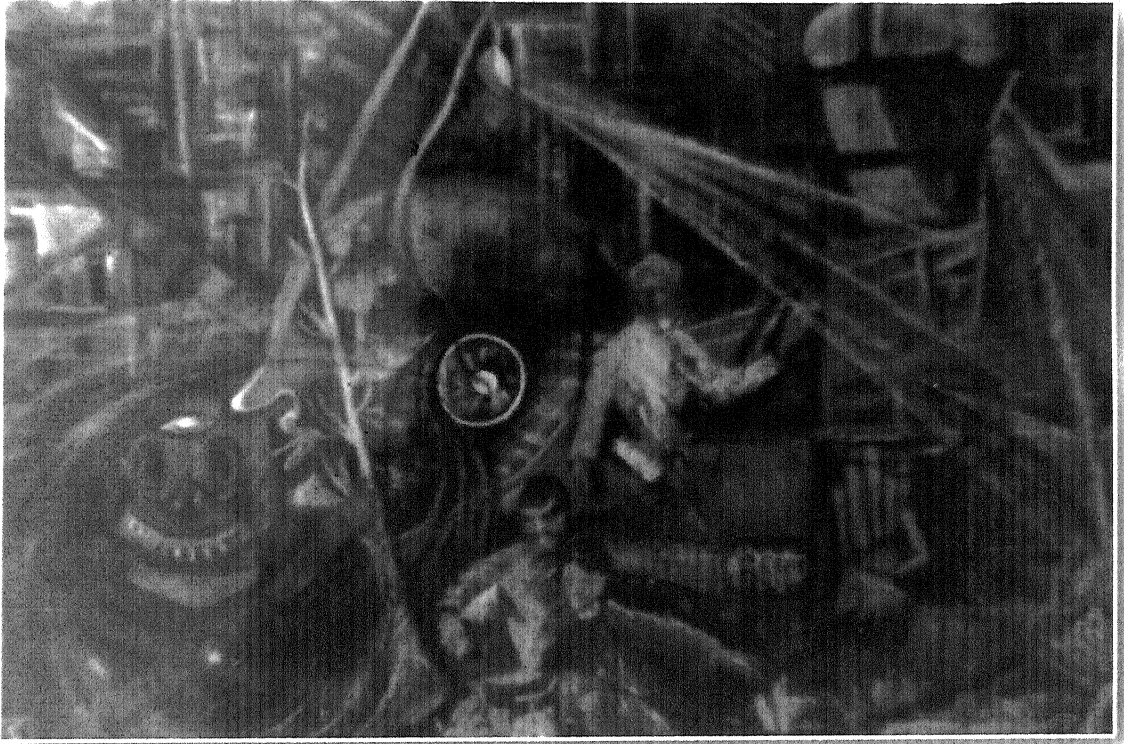
चित्र संख्या–61

चित्र संख्या–62
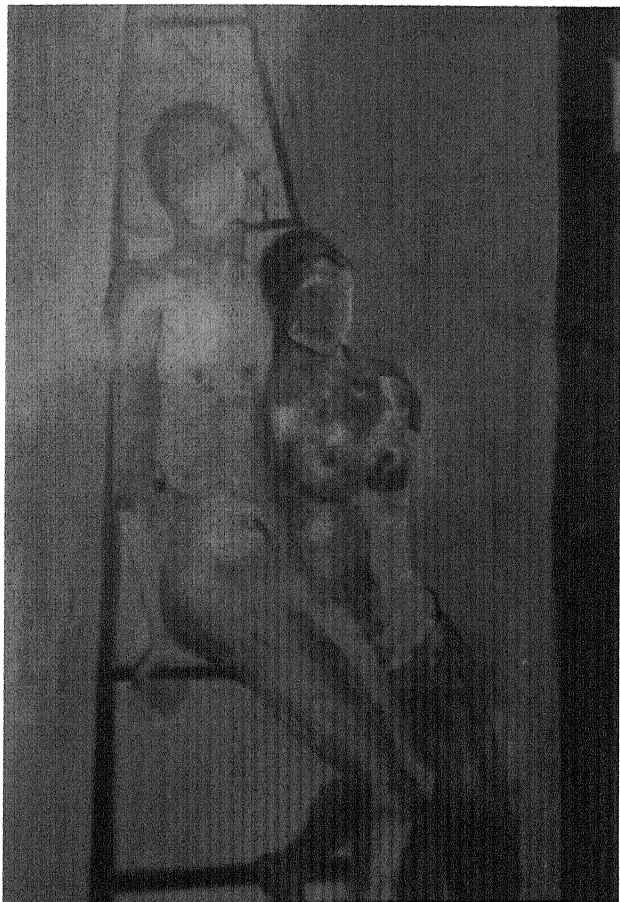
चित्र
संख्या–62 अ
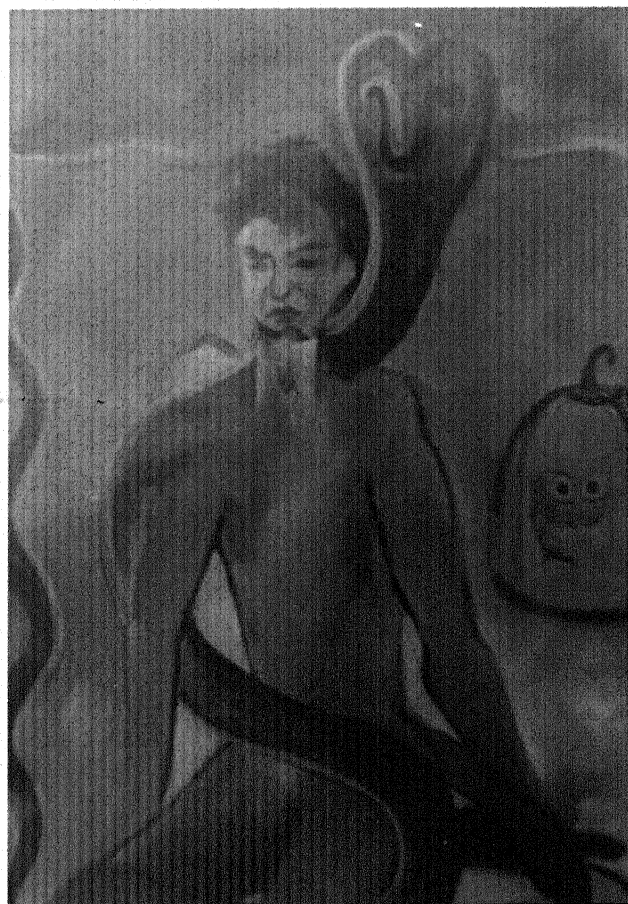
चित्र
संख्या–63

चित्र
संख्या–64

चित्र
संख्या–65

चित्र संख्या–66
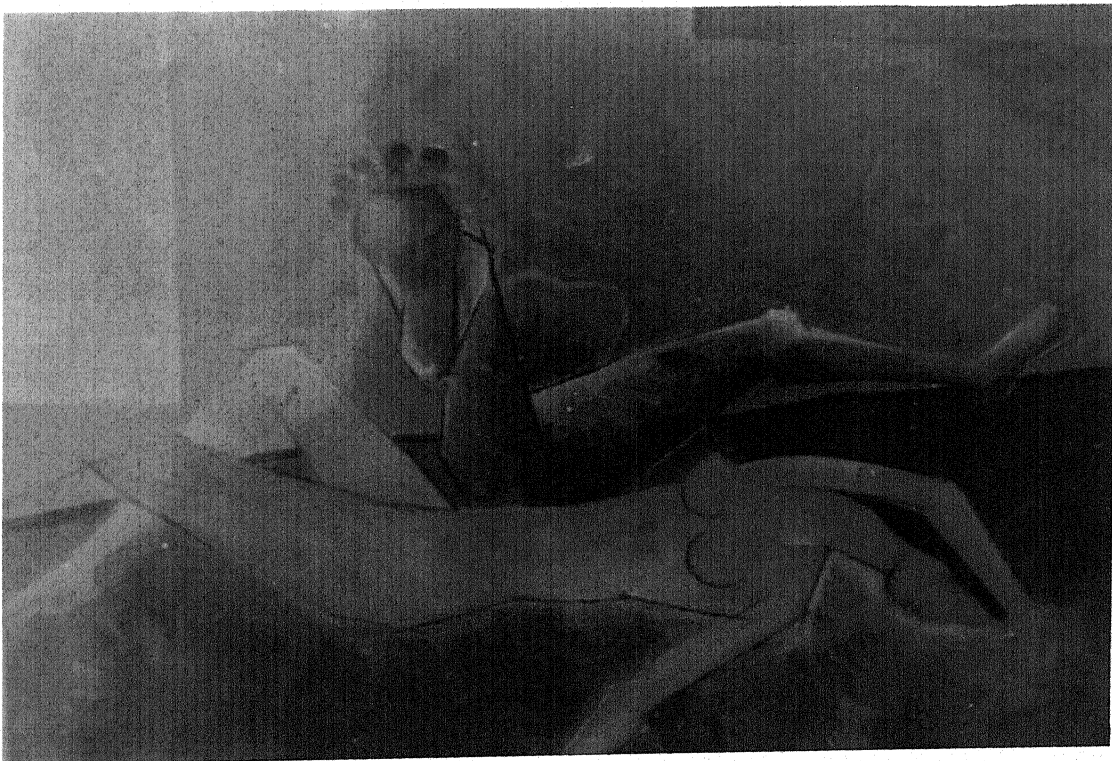
चित्र संख्या–67
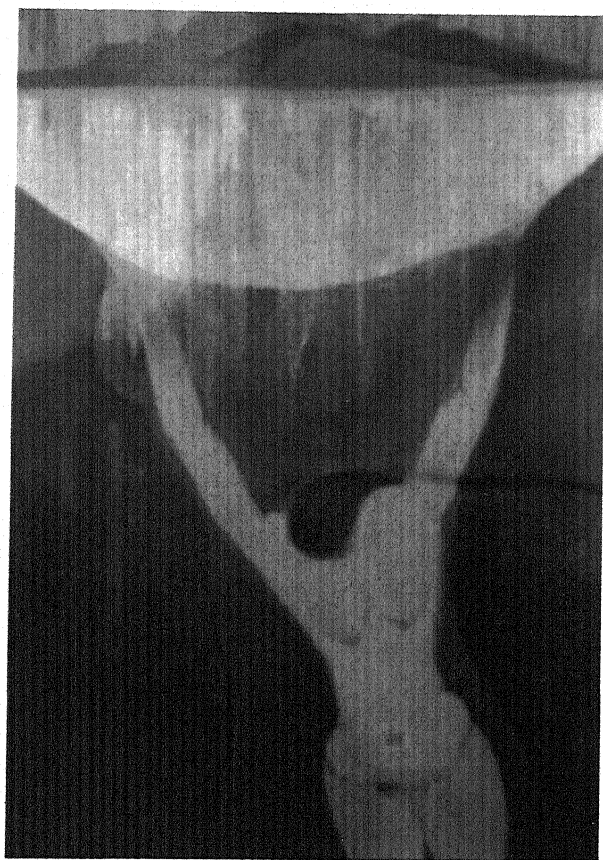
चित्र संख्या–68

"Terror of Emergency"

चित्र संख्या–69
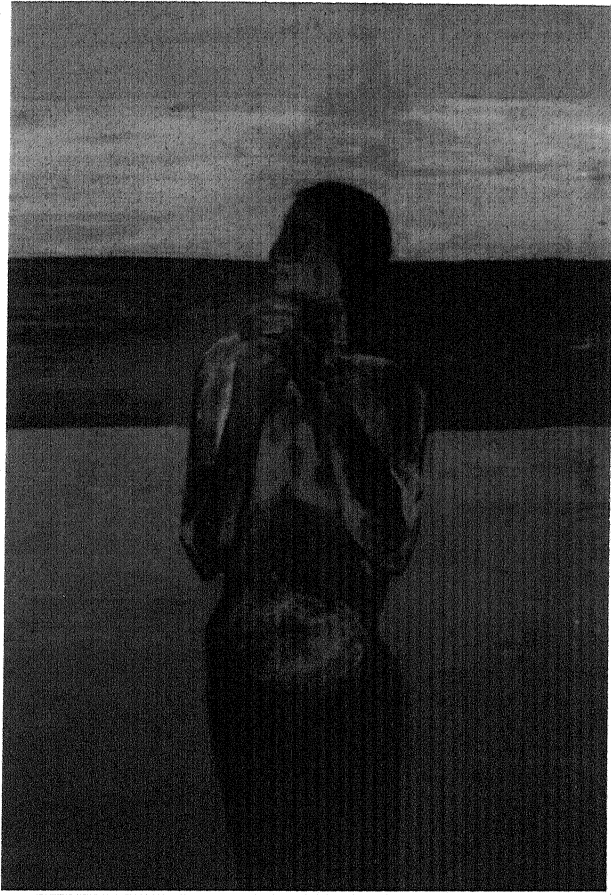
चित्र
संख्या–70
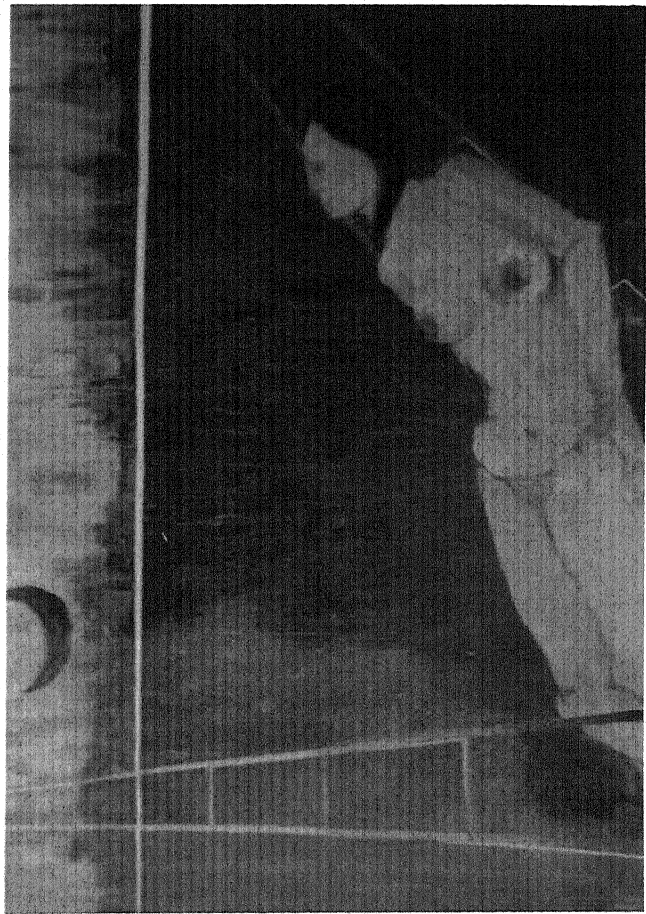
चित्र
संख्या–71

चित्र
संख्या–72

चित्र
संख्या–73
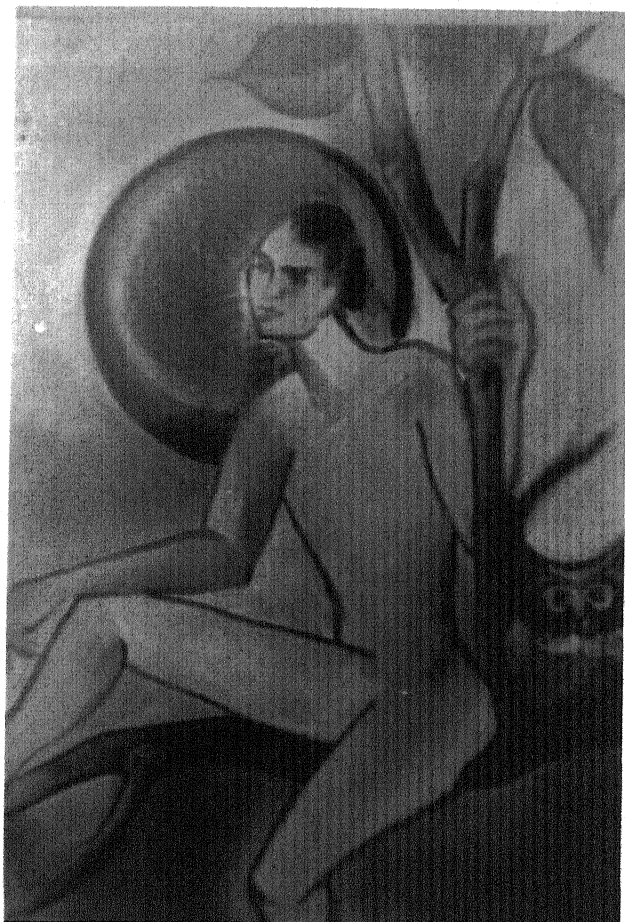
चित्र
संख्या–74
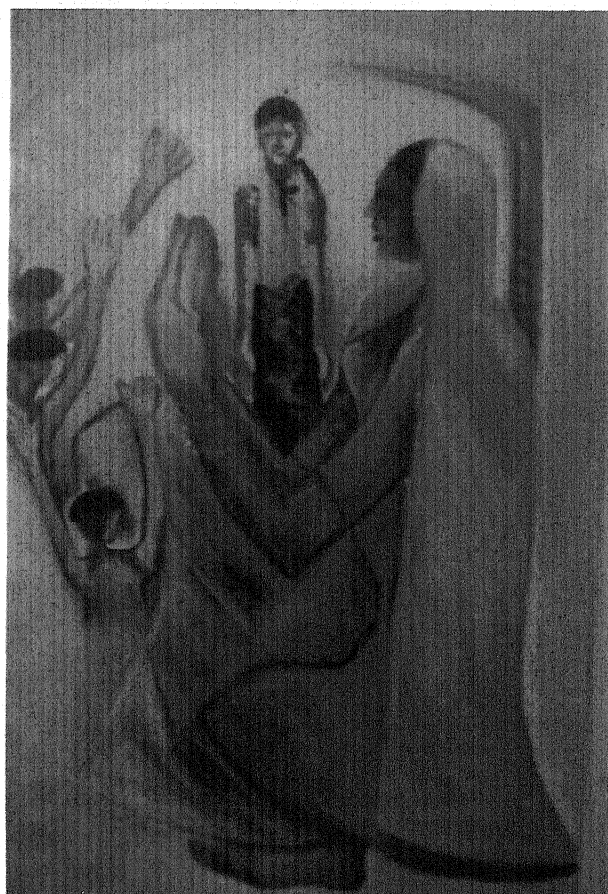
चित्र
संख्या–75
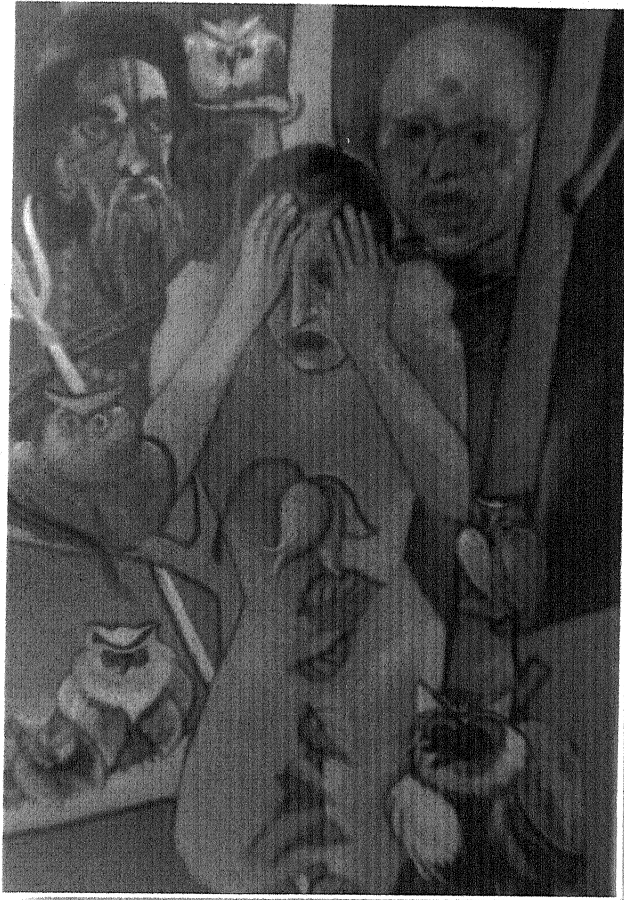
चित्र
संख्या–76
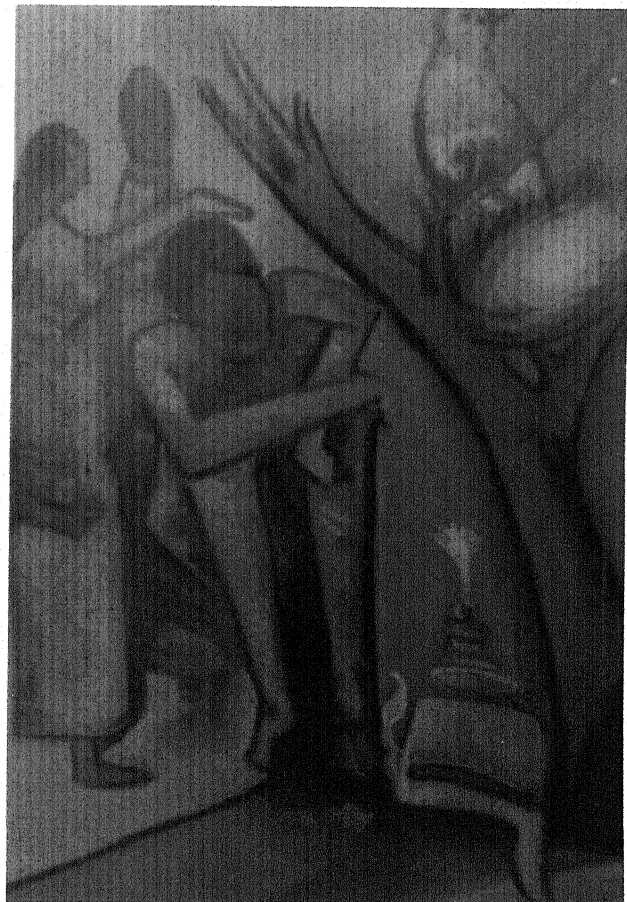
चित्र
संख्या–77

चित्र संख्या–78

चित्र संख्या–79

चित्र संख्या–80

चित्र संख्या–81

चित्र संख्या—82

चित्र संख्या–83
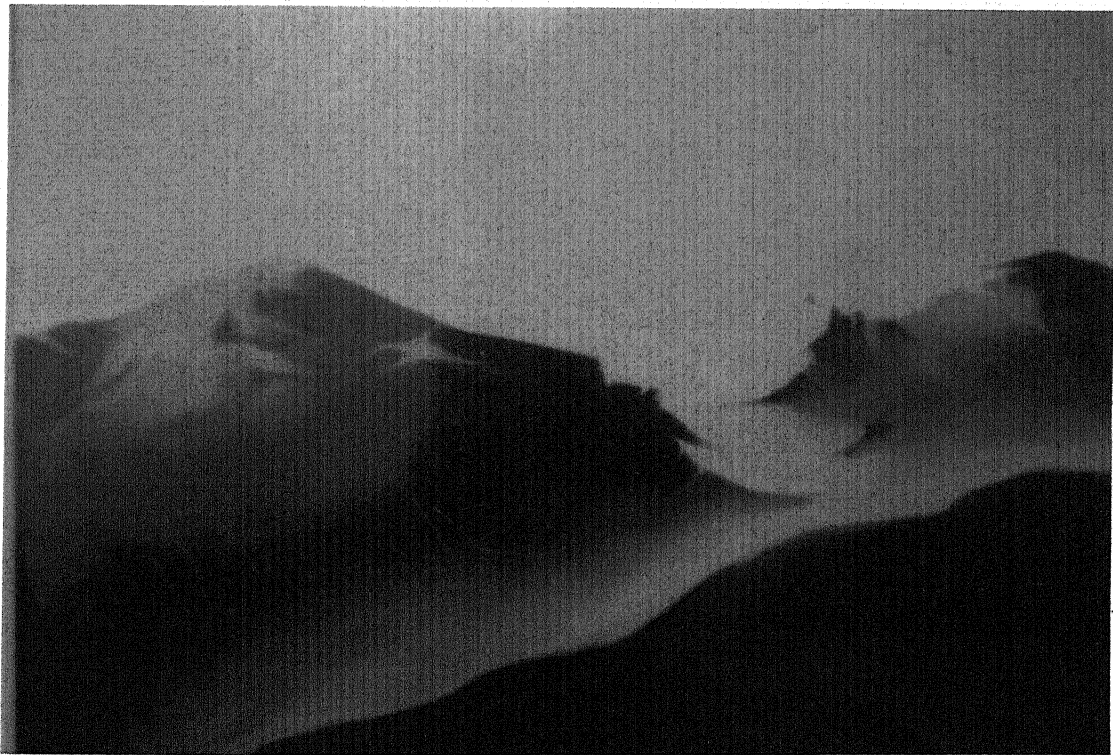
चित्र संख्या–84
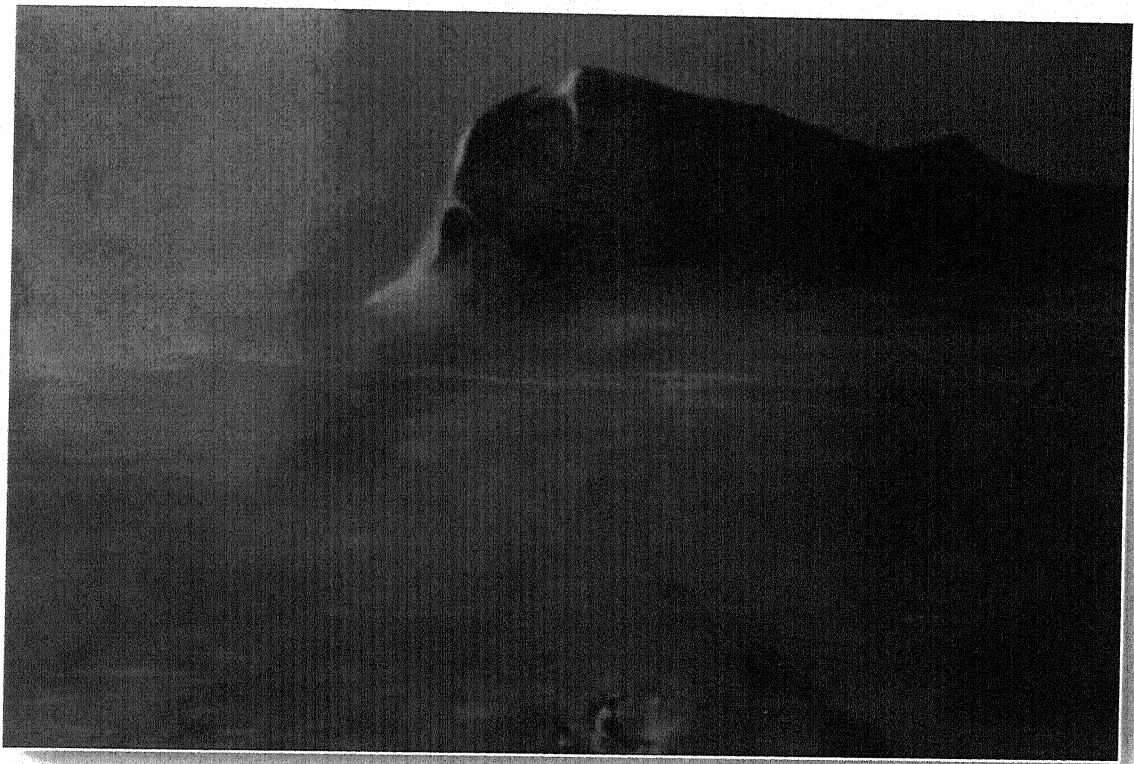
चित्र संख्या–85

चित्र संख्या–86

चित्र संख्या—87

चित्र संख्या–88

चित्र संख्या–89
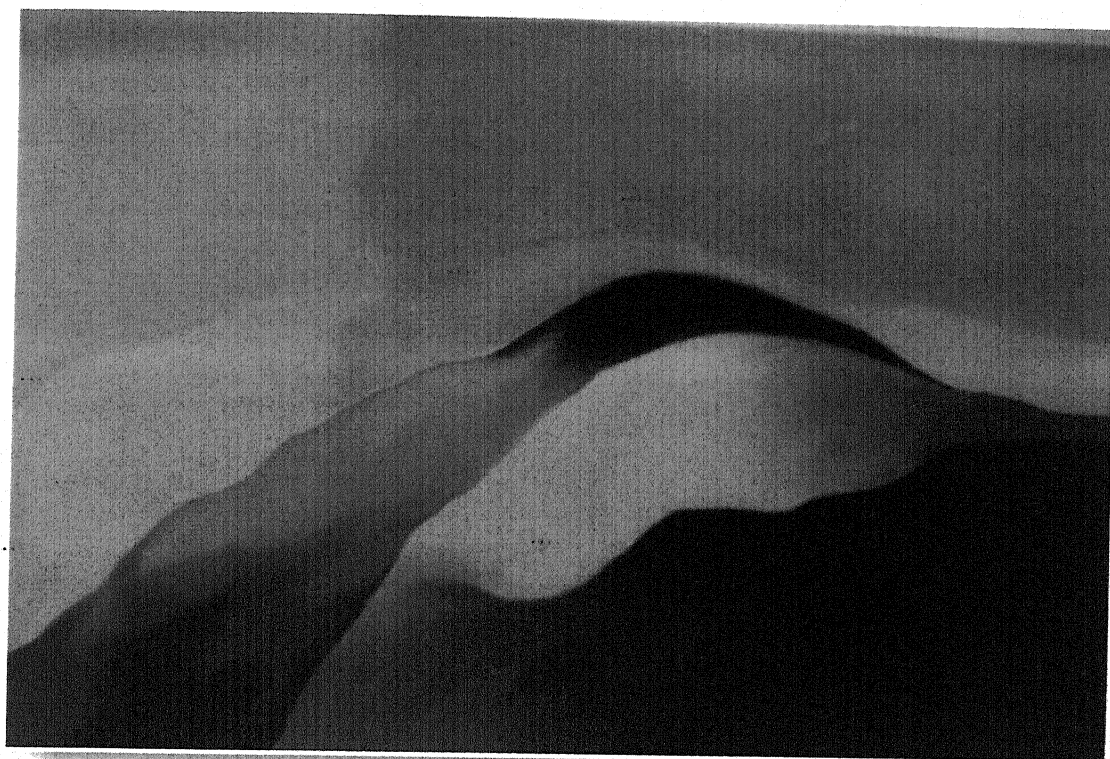
चित्र संख्या–90
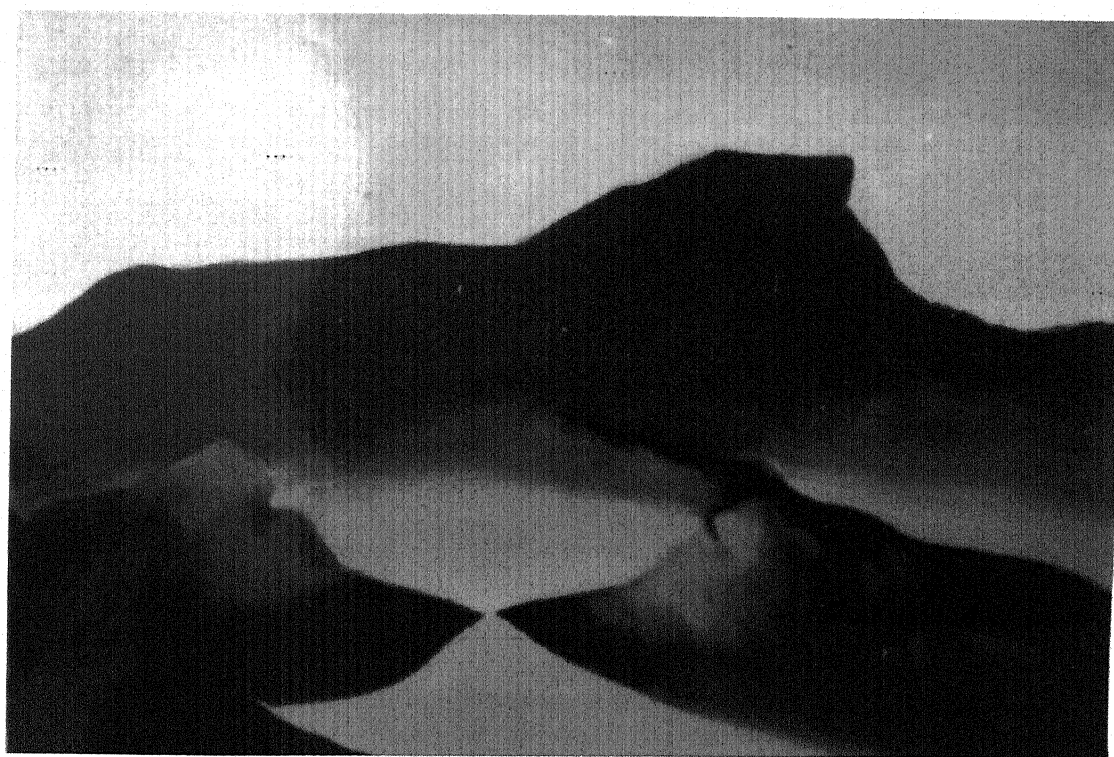
चित्र संख्या–91
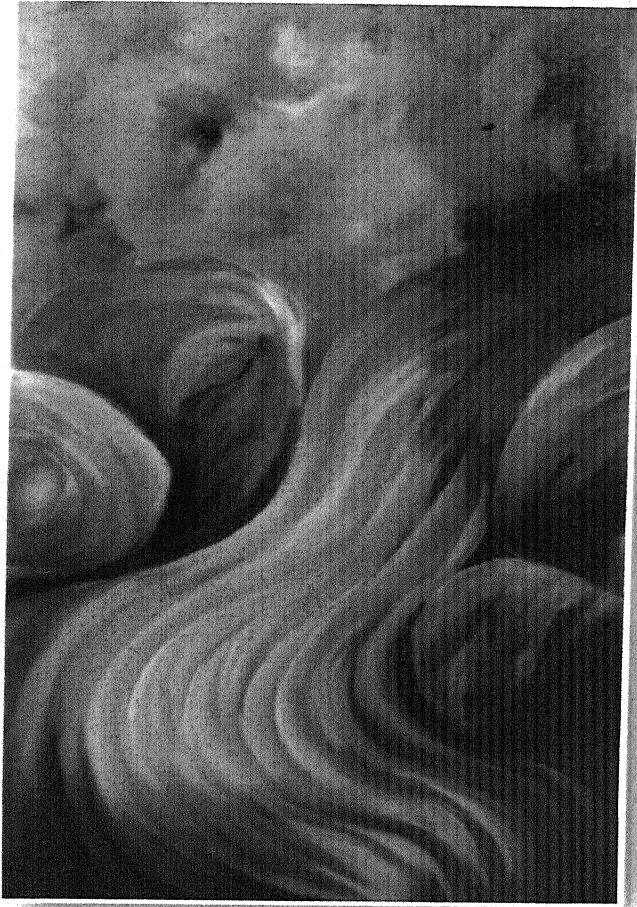
चित्र
संख्या—92
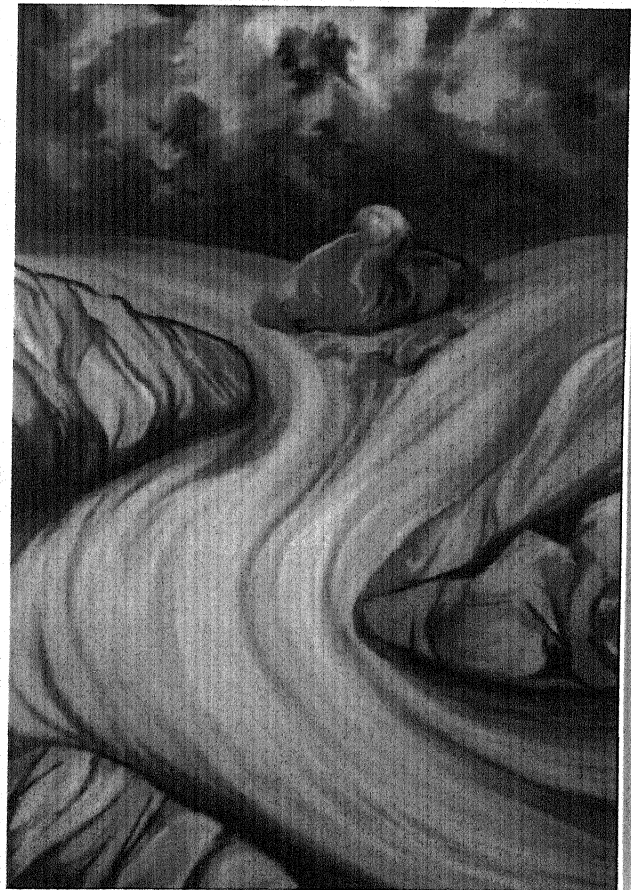
चित्र
संख्या—93

चित्र संख्या–94
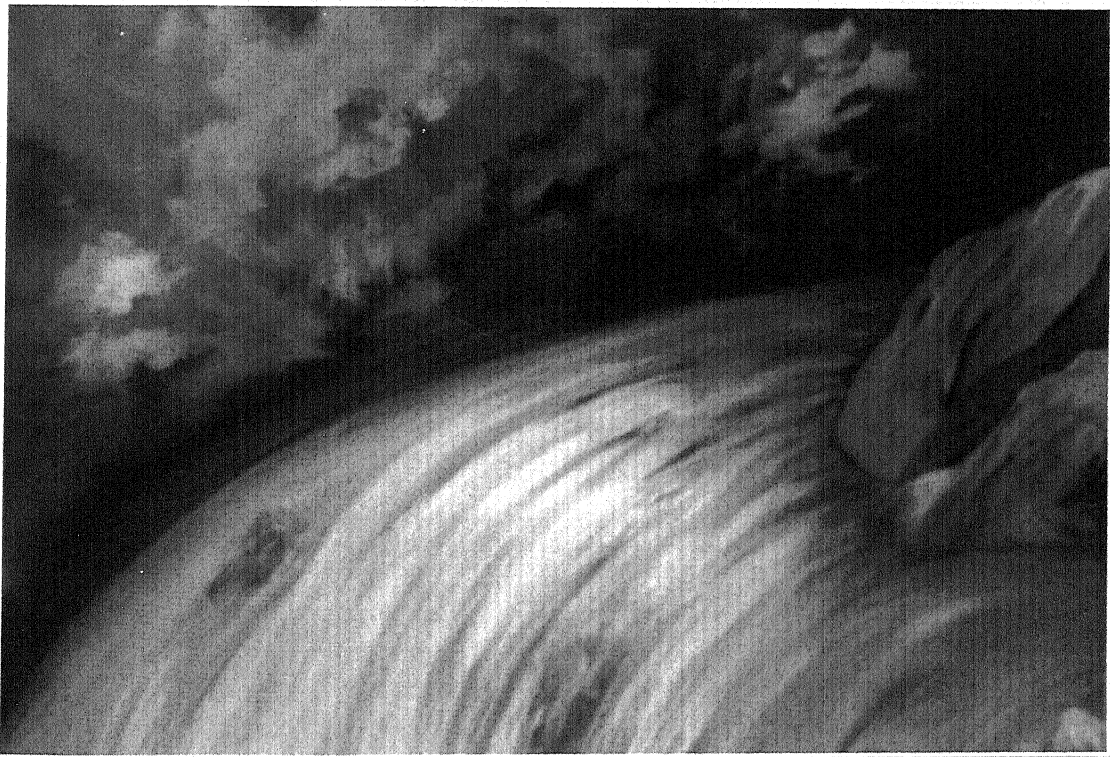
चित्र संख्या–95

चित्र संख्या–96

चित्र संख्या–97

चित्र संख्या–98

चित्र संख्या–99
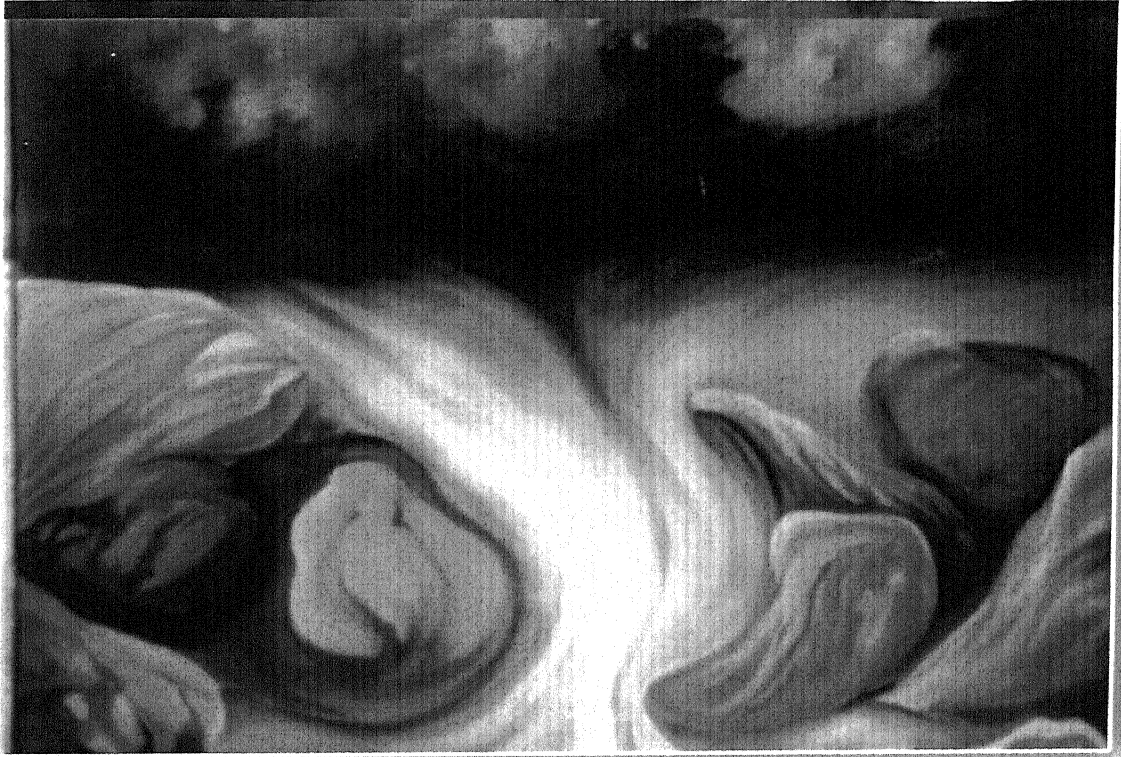
चित्र संख्या–100

चित्र संख्या–101

चित्र संख्या–102
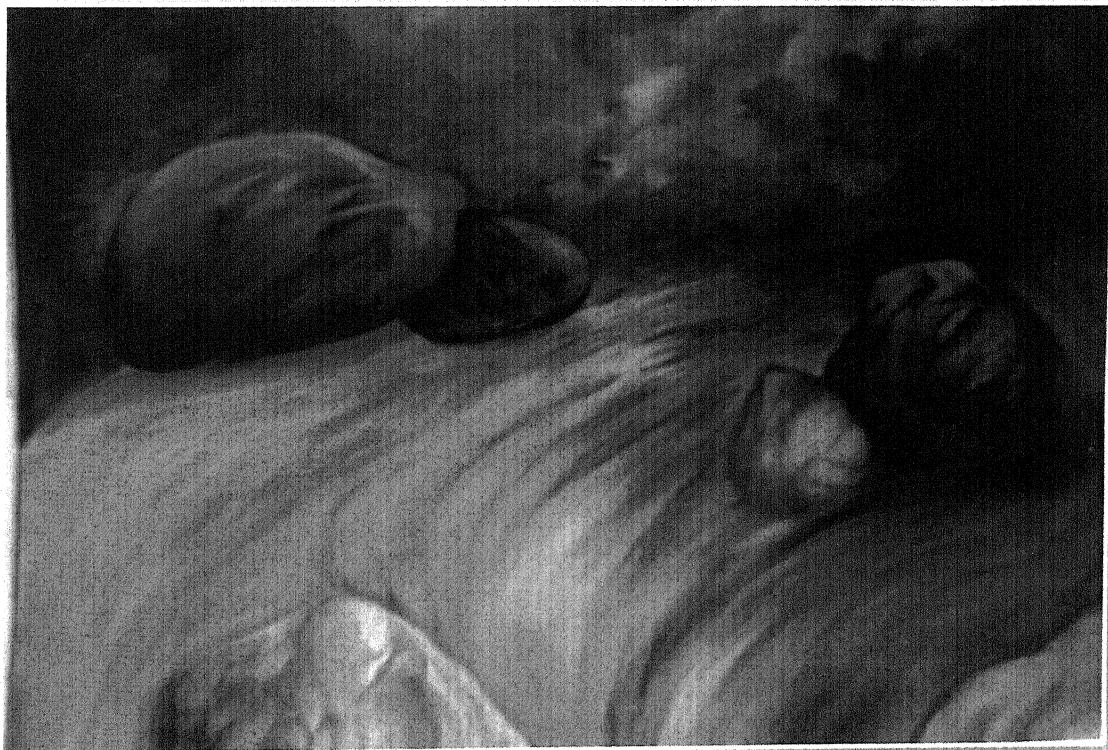
चित्र संख्या–103

चित्र
संख्या–104
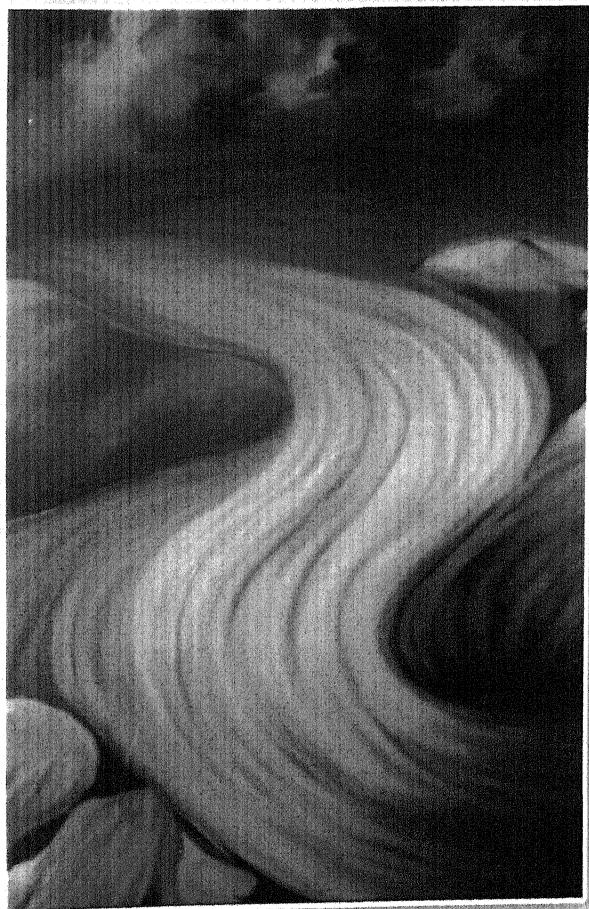
चित्र
संख्या–105
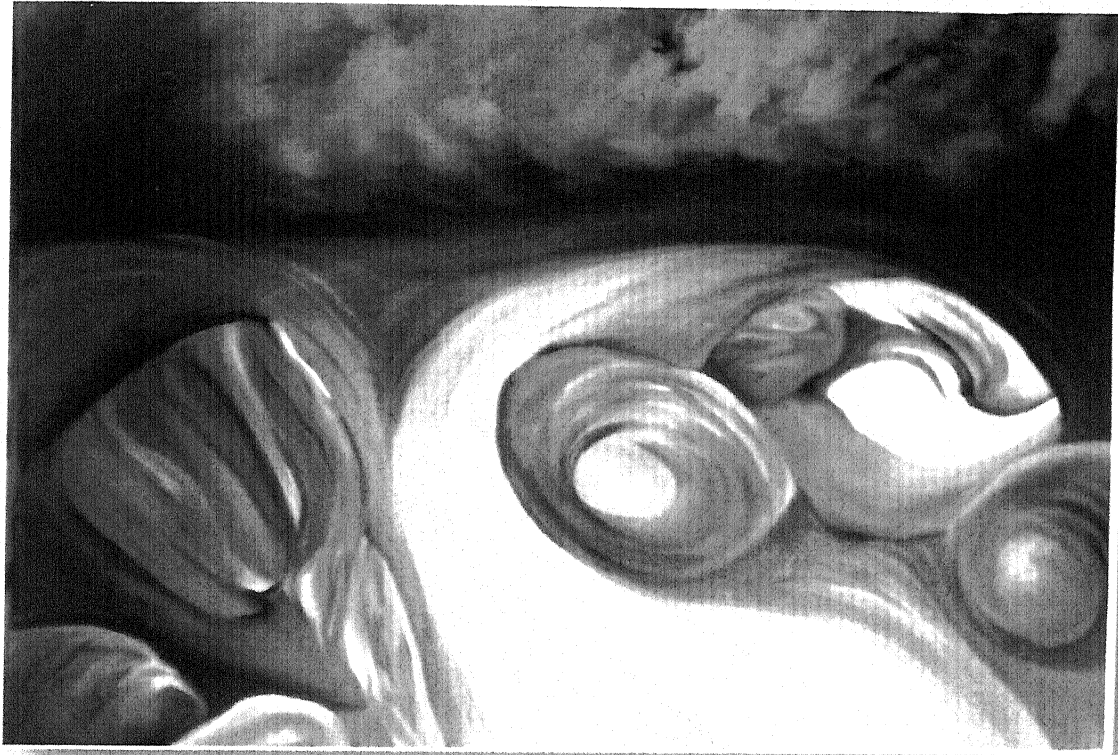
चित्र संख्या–106
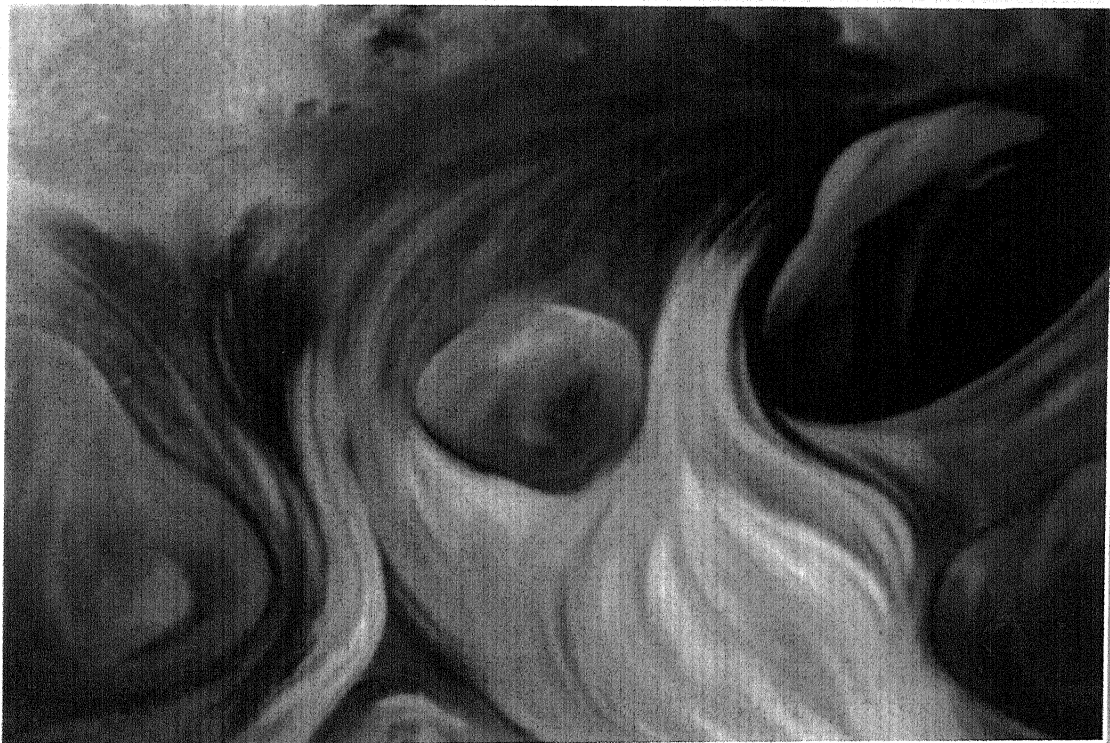
चित्र संख्या–107
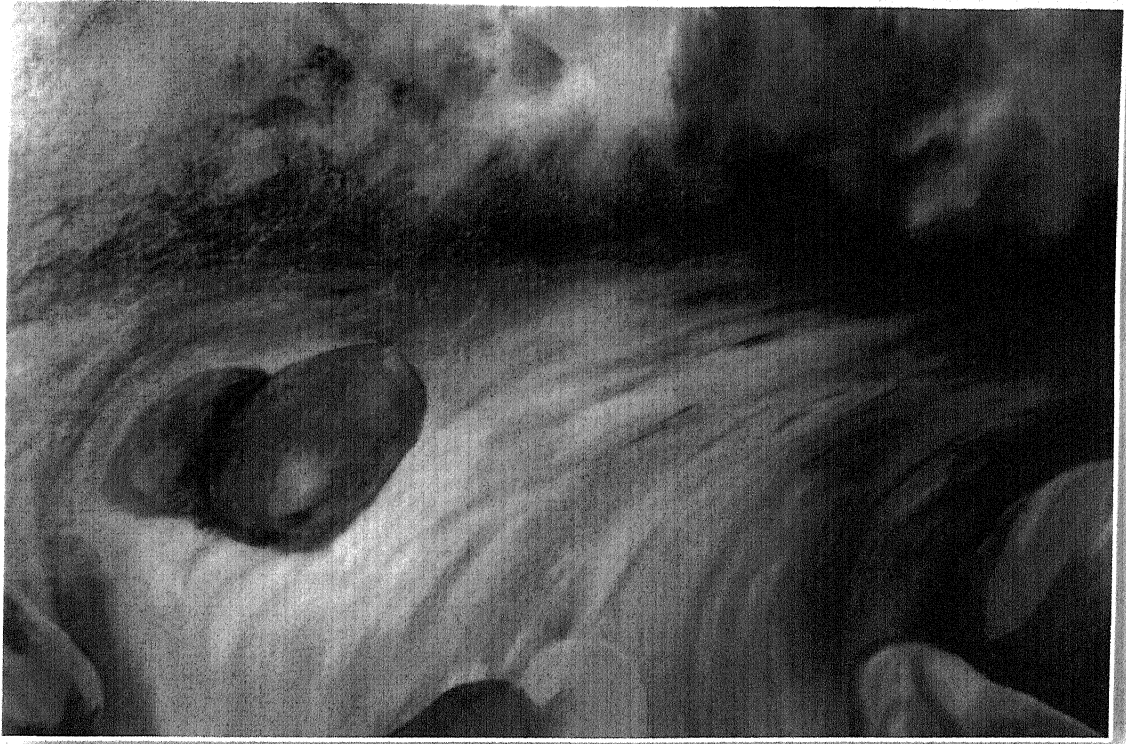
चित्र संख्या–108
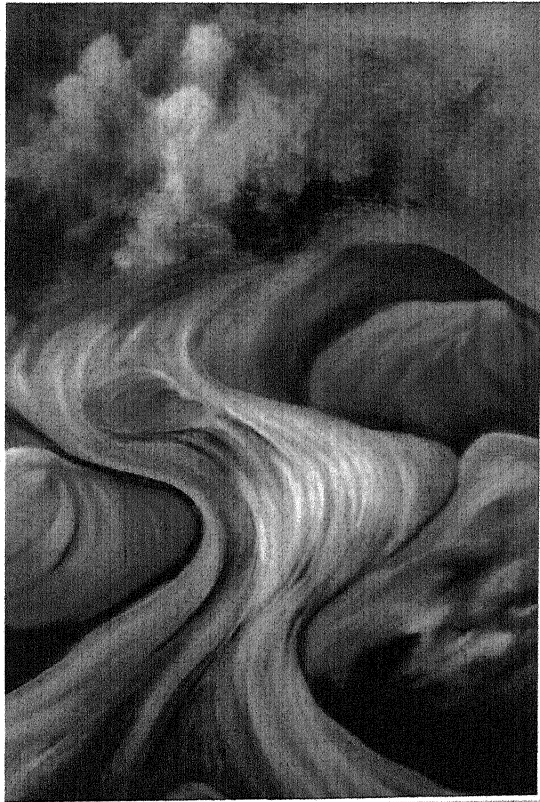
चित्र संख्या–109
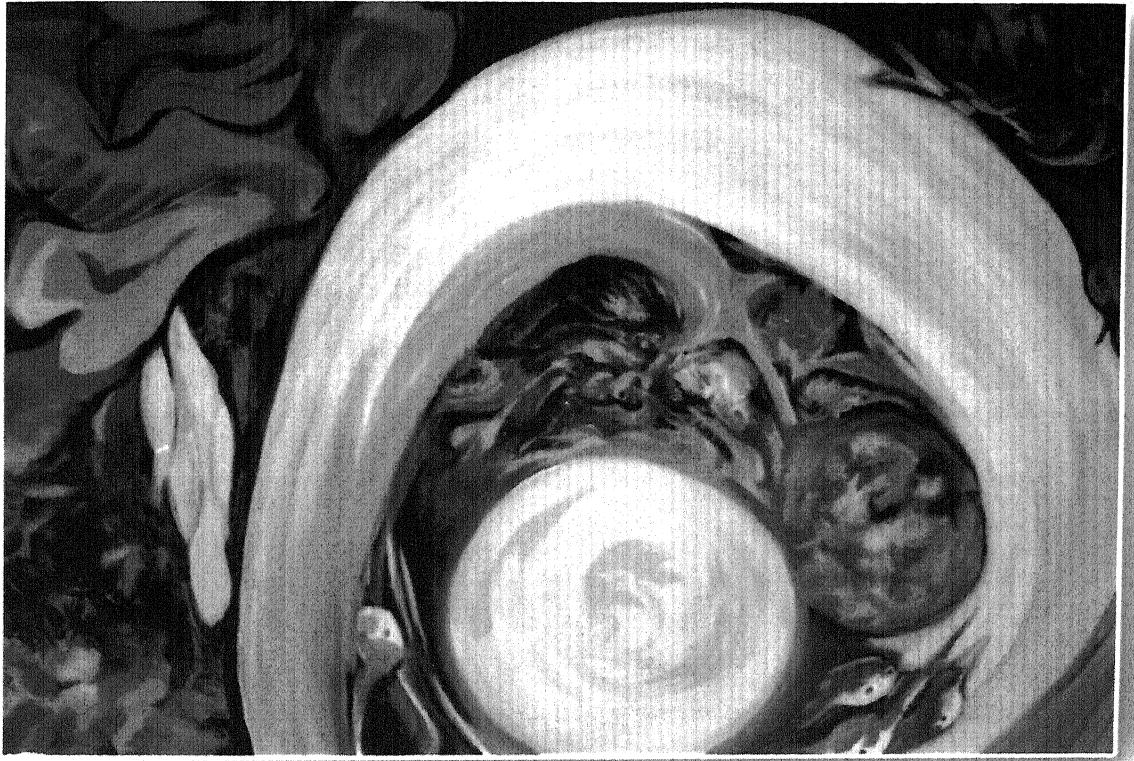
चित्र संख्या–110
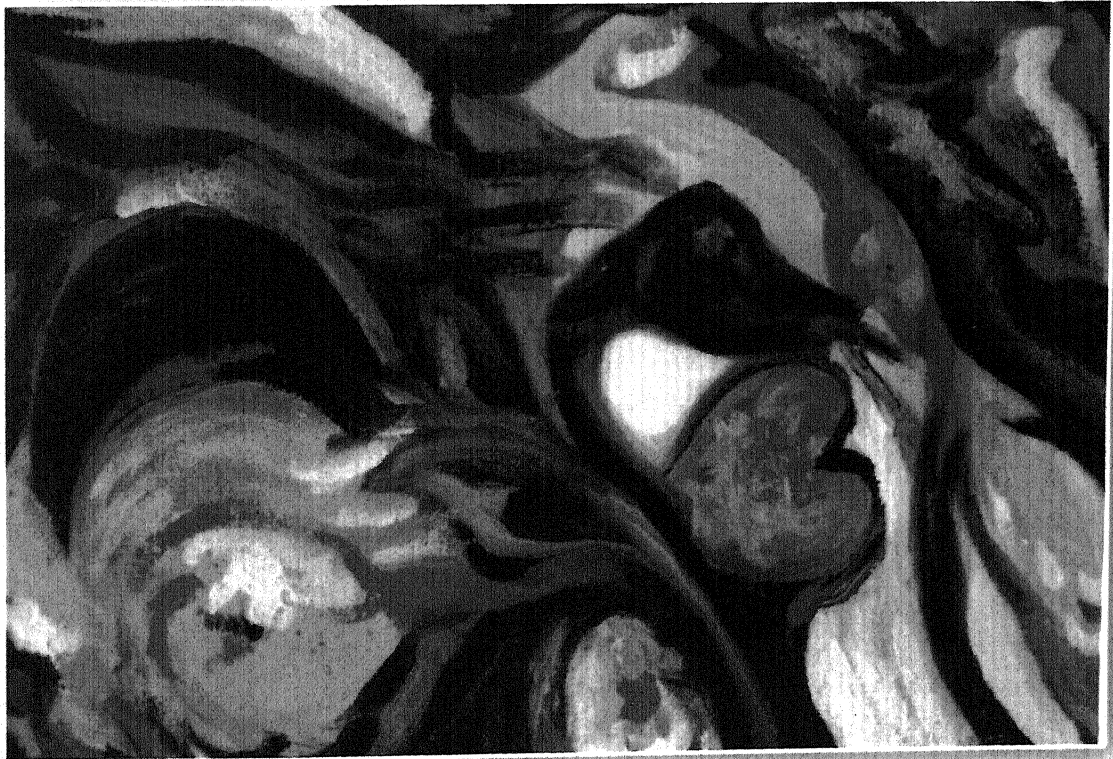
चित्र संख्या–111

चित्र संख्या–112

चित्र संख्या–113

चित्र संख्या–114
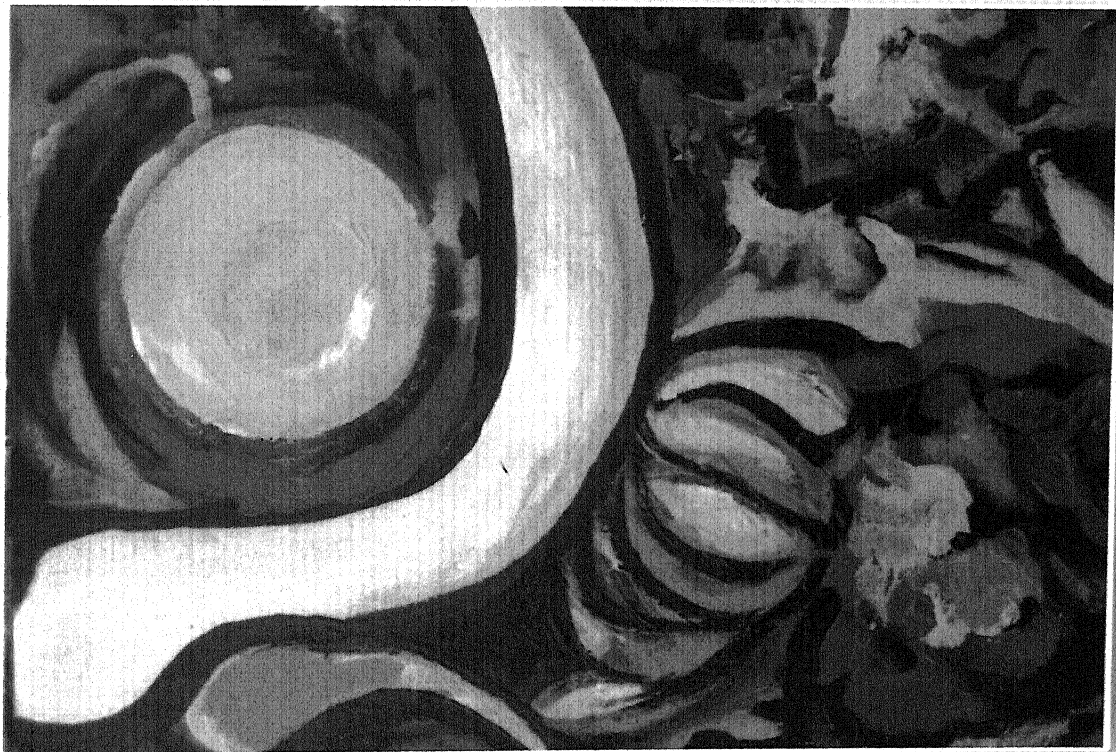
चित्र संख्या–115
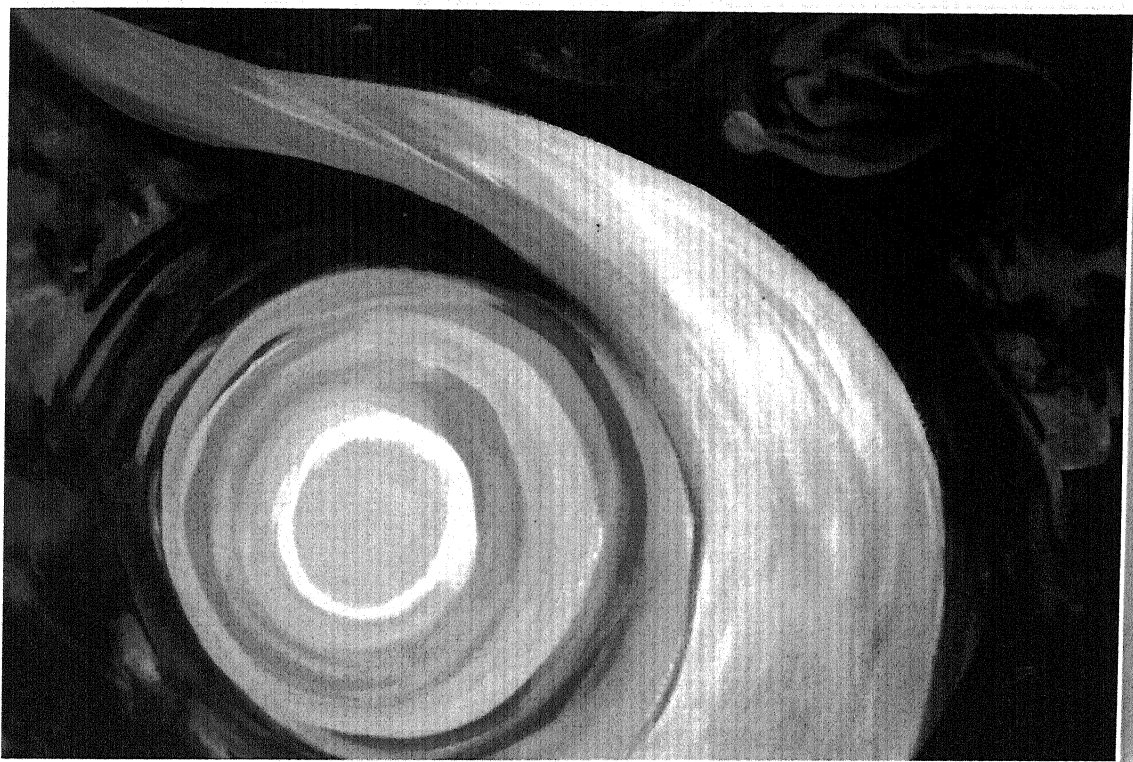
चित्र संख्या–116

चित्र संख्या–117
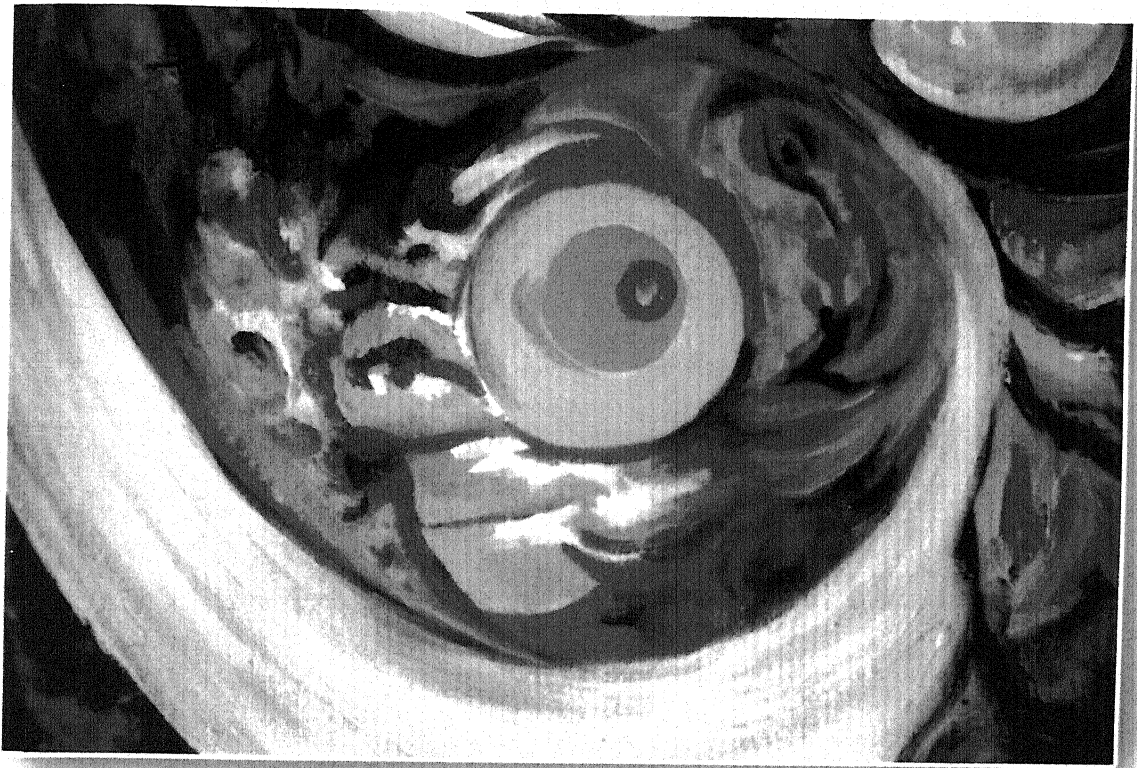
चित्र संख्या–118

चित्र संख्या–119

चित्र संख्या–120

चित्र संख्या–121

चित्र संख्या–122

चित्र संख्या–123

परिशिष्ट – 2

शैक्षणिक एवं क्रियात्मक कार्यों अभिलेख

परिशिष्ट

उन दिनों एटा में कोई डिग्री कॉलेज नहीं था। इसलिए डॉ0 सरन के आगे पढ़ने की व्यवस्था सम्भव नहीं हो पा रही थी। लेकिन मन में आगे पढ़ने की प्रबल इच्छा थी। इसलिए इन्होंने आई0जी0डी0 बाम्बे, आर्ट का डिप्लोमा उत्तीर्ण किया। इस योग्यता के सहारे श्री गॉधी स्मारक इण्टर कॉलेज, एटा में सहायक अध्यापक के रूप में नौकरी करने लगे। इस नौकरी के दौरान इन्होंने शिक्षक अभ्यर्थी के रूप में अपनी बी0ए0 की परीक्षा आगरा विश्वविद्यालय आगरा से सन् 1998 में उत्तीर्ण कर ली। इसके बाद इन्होंने एफ0 आई0 डी0 एस0 की चार परीक्षाएं पत्राचार के द्वारा उत्तीर्ण की। अब इन्होंने सन् 1962 में शिक्षक अभ्यर्थी के रूप में चित्रकला विषय में एम0 ए0 की परीक्षा आगरा विश्वविद्यालय, आगरा से उत्तीर्ण की। सन् 1965 में इन्होंने शिक्षक अभ्यर्थी के रूप में उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा संचालित शिक्षक परीक्षण एल0टी0 की परीक्षा उत्तीर्ण की।

सन् 1967 से इन्होंने चित्रकला में शोध कार्य प्रारम्भ किया। आपके शोध निर्देशक स्व0 प्रो0 सी0 बरतरिया, अध्यक्ष– चित्रकला विभाग, डी0ए0वी0 कॉलेज, कानपुर थे। उनके सफल निर्देशन में सन् 1974 में अपनी शोध विषय अजन्ता की चित्रकला में रस विषय पर कानपुर विश्वविद्यालय, कानपुर से पी–एच0 डी0 की उपाधि ली।

डॉ0 सरन बिहारी सक्सेना ने अपना जो शोध प्रबन्ध कानपुर विश्वविद्यालय को पी0एच0डी0 की उपाधि प्राप्त करने के लिए जमा किया था। उसके परीक्षक डॉ0 श्रीवास्तव, निर्देशक राष्ट्रीय संग्रहालय,

डॉ0 रामकिशन दास, निर्देशक–कला भवन, बी0एच0यू0, वाराणसी और प्रो0 हरिशचन्द्र राय, प्राचार्य, राजकीय ललित कला संस्थान, शिमला के थे। इन तीनों परीक्षकों ने शोध के कार्य की इतनी अधिक प्रशंसा की कि जिसको आधार बनाकर कार्यकारिणी परिषद कानपुर विश्वविद्यालय ने डॉ0 सरन बिहारी लाल सक्सेना को उनके शोध के लिए विशिष्ठ विद्वान घोषित किया था। विश्वविद्यालय में यह ऐसा प्रथम निर्णय था जो किसी शोध विद्यार्थी को विशिष्ट विद्वान के रूप में अपने विश्वविद्यालय में पी–एच0 डी0 निर्देशन का कार्य करने के लिए अपनी ओर से आज्ञा निर्गत की गयी थी।

तत्पश्चात् अब प्रगति के पथ पर और आलोकित होने की आकांक्षा बढ़ती गयी। परिणामस्वरूप सन् 1985 में डॉ0 सरन बिहारी लाल सक्सेना ने "An Critical Analysis of Orient and Oxidental Theories of Asthatics in Painting" विषय पर कानपुर विश्वविद्यालय से डी0लिट0 की उपाधि ग्रहण की। यह यू0जी0सी0 के (एच0अ.र0) के अधीन प्रोजेक्ट था। जिसके लिए उन्होंने बरसों–बरस अपनी तन्मयता से इस विषय का गहन अध्ययन किया और हमेशा कुछ नया दिखाने के प्रवृत्ति के अनुसार डॉ0 सरन हमेशा कला के बड़े–बड़े चित्रकारों के सम्पर्क में रने रहे। उनकी रूचि भारतीय रस दर्शन और सौन्दर्य में थी। संयोग से पी0–एच0 डी0 का भी यही विषय था। इसलिए उन्होंने डी0.लिट0 के लिए भी यही विषय चयन किया। क्योंकि पी0–एच0डी0 का विषय रस दर्शन तक ही सीमित रहा इसलिए उन्होंने पाश्चात्य के सौन्दर्य, आकर्षण और अवधारणा

पर गहनतम् अध्ययन किया। डी0लिट0 के लिए चित्रकला में रस और सौन्दर्य की अवधारणा को पूरब और पश्चिम की चित्रकला में तुलनात्मक दृष्टिकोण से अध्ययन किया तो उनके विषयानुसार पूर्णरूपेण सफल सिद्ध हुआ।

डॉ0 सरन ने अपने शोध प्रबन्ध में यह सिद्ध कर दिया कि पाश्चात्य चित्रकला दर्शन में सौन्दर्य को लेकर एक विस्तृत प्रारूप किया गया है। अनेक विद्वानों ने भिन्न–भिन्न प्रकार से उसे प्रस्तुत करके महत्वपूर्ण बता दिया है।

विगत एक दशक से डॉ0 सक्सेना वेद पुराण, तंत्र–मंत्र, कुण्डली, नक्षत्र और राग–रागिनी तथा जोगनियों के तांत्रिक विधान के अध्ययन में ले रहे। उन्होंने भारतीय चित्रकला को लेकर एक नवीन खोज की है जिसके द्वारा चित्र यंत्र बनाने की विधा को स्थापित किया है। आप अकादमिक कार्य जिनमें प्रश्न–पत्र निर्माण मूल्यांकन तथा पी0–एच0डी0, डी0लिट की मौखिक परीक्षा के लिए सम्बद्ध रहे हैं। अनेक शोध पत्रकाओं के साक्षात्कार व शोध पत्रिकाओं के सदस्य रहे हैं। इनकी विभिन्न शैक्षणिक कार्यों की विवेचना अनेकों बार दूरदर्शन इत्यादि पर प्रदर्शित हो चुकी है।